डा० शेफाली

['नये मोड़' उपन्यास का परिवर्द्धित संस्करण]

लेखक

उदयशंकर भट्ट

१९६०

भारती साहित्य मन्दिर

फव्वारा — दिल्ली

लेडी डाक्टर शेफाली ने बाहर घण्टी की आवाज़ सुनते ही नौकर को पुकारकर कहा—"देखो तो बाहर कौन है ? मालूम होता है कोई रोगी है ।"

नौकर दरवाजे से लौटकर बोला—"एक आदमी बहुत जरूरी काम से आपसे मिलना चाहता है । मैने कहा, 'इस समय नही मिल सकती डाक्टर साहब, सबेरे आना ।' "

'हाँ हाँ, बुलाओ न, कौन है ?" शेफाली ने खाने की मेज पर बैठे-बैठे प्रतीक्षा करते हुए कहा । इस समय शेफाली भोजन के लिए बैठ रही थी । इसी बीच मे यह पुकार हुई । नौकर के साथ ही आदमी बरामदे में आकर खडा हो गया और बेचैनी से ऐसे खडा हो गया जैसे उसका सारा शरीर विवशता का रूप धारण किये हो, या कि वह अपने सर्वांग से लेडी डाक्टर को एकबारगी बिना रुके देख लेना चाहता हो । रात के नौ बजे का समय था । दिन-भर रोगियो को देखने व दवा-दारू के बाद स्नान करके भोजन के लिए बैठते ही इस व्यक्ति ने आकर दस्तक दी । शेफाली के लिए यह कोई नई बात तो थी नही, रोज ही ऐसा होता था । वह परोसी हुई थाली छोडकर बाहर बरामदे मे आ गई और उसकी तरफ ऐसे देखने लगी मानो उसकी घबराहट को वाणी दे रही हो ।

आगन्तुक ने लेडी डाक्टर को देखते ही घिघियाते हुए कहा—"डाक्टर साहब, सेठ राममोहन के घर बहुत तकलीफ है । उनकी स्त्री मृत्यु-शय्या पर पडी है । जल्दी चलिए । बाहर मोटर खडी है ।"

"क्या बात है ?"

"ठीक-ठीक प्रसव नही हो रहा। मालूम होता है कष्ट के मारे उनके प्राण निकल जायँगे। आपको तकलीफ...तो ·" आगन्तुक चुप हो गया। शेफाली चुपचाप भीतर कमरे मे गई और जरूरी दवाइयो का बक्स लेकर मोटर मे आ बैठी। मोटर अबाध गति से चल पडी।

राममोहन की पत्नी को सचमुच बहुत कष्ट था। वह दर्द के मारे बेहोश हो गई थी। एक नर्स और कई डाक्टर वहाँ थे। नये-नये इन्जेक्शन दिये जा रहे थे, परन्तु कोई लाभ नही हो रहा था। कभी-कभी चेतना हो जाती, उस समय उसकी दर्द-भरी चिल्लाहट सुनकर वहाँ बैठे हुए लोगो के प्राण विचलित हो उठते थे। राममोहन, जो कभी साधना के कमरे और कभी बाहर बरामदे में टहल रहा था, शेफाली को देखते ही दोनो हाथ मसलता हुआ निहोरे के स्वर मे कहने लगा—"मेरी पत्नी को बचाइए डाक्टर! उसके प्राण निकल रहे है," इतना कहते हुए वह शेफाली को रोगिणी के कमरे तक छोड आया। वह धड़धडाती भीतर चली गई और उपचार करने लगी। उसने नर्स को छोडकर बाकी सबको कमरे से बाहर कर दिया।

थोडी देर के बाद कमरे से बाहर आकर उसने राममोहन से पूछा—"दोनो में से एक बच सकता है; बच्चा या उसकी माँ।"

"क्या दोनो नही ?"

"नही, जल्दी बोलो।"

राममोहन कुछ देर रुका। अन्त में उसके मुँह से निकल गया—"उसकी माँ को, डाक्टर साहब!"

शेफाली भीतर चली गई। सब लोग बाहर बेचैनी से टहल रहे थे। बेचैन राममोहन उस समय भी बीच-बीच में टेलीफोन पर कभी बाजार-भाव की आलोचना करता, कभी खरीदे या बेचे हुए माल की खबरें अपने साथी व्यापारियो को दे रहा था। इसी बीच कभी-कभी बात करते-करते हँस भी पडता था, जैसे पत्नी का कष्ट और घर का वातावरण

व्यापार में कही खो गया है। जिस समय शेफाली साधना के कमरे से लौटी तब तक और लोग चले गए थे। केवल राममोहन टेलीफोन पर हँस-हँसकर उस दिन के व्यापार पर टीका-टिप्पणी कर रहा था। साधना की चीख-पुकार कम हो रही थी। कभी-कभी वह चिल्ला उठती, फिर शान्त हो जाती। इसी बीच मे शेफाली ने आकर सूचना दी—"तुम्हारी पत्नी बच गई है, बच्चे को काटकर निकाला गया है।" इतना कहकर वह भीतर चली गई।

राममोहन की उम्र अट्ठाईस वर्ष और उसकी पत्नी की बाईस साल; दोनो का विवाह हुए पाँच साल हो चुके थे। यह पहला प्रसव-काल था। विवाह के बाद राममोहन के माता-पिता का देहान्त हो चुका था। गृहस्थी का सारा भार उन दोनो पर आ पडा। पत्नी साधना जीवन के स्वप्नो की तरह राममोहन को प्रिय थी, इसीलिए बच्चे का मोह छोडकर उसने साधना को बचाने का आग्रह शेफाली से किया। वैसे भी राममोहन उन लोगो में अपने को नही गिनता था जो मूल की अपेक्षा सूद की परवाह करते है। वह मानता था, बल्कि उसने सोचा कि फूल की रक्षा के लिए पेड़ की डाल काटना न केवल अदूरदर्शिता ही है, मूर्खता भी है। साधना राममोहन के जीवन की साधना थी। साधना के साथ उसने माता-पिता की इच्छा के विरुद्ध ब्याह किया था।

राममोहन जब बी० ए० के आखिरी साल में था, तभी साधना फर्स्ट इयर में दाखिल हुई। साधना के रूप-सौन्दर्य पर भौंरो की तरह कालेज के लडके मँडराने लगे। राममोहन में कोई विशेषता नही थी—न तो वह पढाई में तेज था, न अच्छा खिलाडी और न डिबेटर। वह उनमे भी नही था जिन्हें लड़कियो को अपनी ओर खीचने की कला आती है; जो जबान मे चूरन का-सा चटपटापन भरकर, आँखो से शराब पीकर, हाथो से जमीन और आसमान दोनो के छोर मिलाते हैं; जो प्रोफेसर के सामने किताबो में आँखें गड़ाए रहते हैं, कानो से देखते हैं और सौन्दर्य का मोहन मन्त्र पढ़ते रहते है। वह एक बीच का लडका

था। साधारण ज्ञान, साधारण रूप, एक तरह से साधारण मध्यवित्त का प्राणी, जो ससार मे केवल मनुष्य-सख्या बढाने आते हैं। फिर भी साधना ने राममोहन को ही पसन्द किया। वह हर नये काम के लिए भरपूर चन्दा देता, रुपया ऐसे लुटाता जैसे जवानी मे दिल लुटाया जाता है। बस, इसी से एक दिन मेनका ने विश्वामित्र को पसन्द कर लिया। राममोहन का भाग्य हँसा और साधना का रूप। दोनो ने एक-दूसरे को पहचान लिया और एक दिन दोनो स्त्री-पुरुष के अनादि बन्धन मे जकड़ गए। उस दिन राममोहन ने देखा कि उसके भाग्य की पुरानी गाँठो में से एक ने खुलकर उसकी सोती हुई प्यासी आशा को तृप्ति और विश्वास के रूप मे बदल दिया है। उस समय उसने न तो उत्सुकता, जिज्ञासा और तर्क के मर्म तक पहुँचने की चेष्टा की और न वे पुराने परिच्छेद ही दुहराए। वह सौन्दर्य की मादक साँसो के तारो से अपने जीवन की रागिनी मिलाकर गाने लगा। इधर साधना, जो गरीब लडकी थी, जिसके कुल से लहर की तरह चचल लक्ष्मी बहुत दिनो से रूठ गई थी, इस अभिनव किन्तु नई सहेली लक्ष्मी को पाकर फूली न समाई। उसने साधारण राममोहन को असाधारण लक्ष्मी का कृपा-पात्र मानकर आत्म-समर्पण करने मे जरा भी झिझक का अनुभव नही किया।

यही बात एक बार उसने कालेज की एक सहेली से कही थी—"मेरे पास न तो विद्या की चमक है न बुद्धि की तेजी, मेरे पास तो रूप है। फिर क्यो न मै अपने रूप को ही सोने का मुलम्मा चढाकर चमका दूँ, और यह काम राममोहन-जैसे व्यक्ति से शादी करके ही हो सकता है। क्यो न मै उसके धन से अपने को गर्वित करूँ।"

सहेली ने जवाब दिया—"ठीक है, सभी मनुष्य तेज नही होते, परन्तु धन की चमक से जो भीतर नही होता वह भी चमकने लगता है। धन में और कुछ चाहे न हो वह अपने गर्व से, अपने प्रसाधन से मनुष्य को राम से लेकर रहीम तक का पार्ट अदा करने मे बाहरी सहायता ता

कर ही सकता है ।"

साधना ने उत्तर दिया—"हाँ, यही बात है ।"

जिस समय दूसरी बार शेफाली साधना के कमरे से आई तो चम्पा के फूल की हल्की मुस्कराहट के समान उसने राममोहन को साधना के बच जाने की बधाई दी ।

राममोहन ने जडता से भरी कृतज्ञता के साथ शेफाली के शुभ्र मुख पर लहराते यौवन की झीनी छाया मे एक मुस्कराहट देखी और आभार स्वीकार करते हुए कहा—"धन्यवाद, आपकी कृपा से ही मेरी पत्नी को जीवन-दान मिला है ।"

कहने को यह कहा जा सकता है कि शेफाली राममोहन को देखकर एक बार भीतर ही भीतर चौक-सी उठी, परन्तु उसने प्रत्येक बीमार के उपचार को दिखाने वाली आशावादिता और स्वभाव की गम्भीरता से अपने हृदय के बवडर को दबा लिया और उसी मुस्कराहट के साथ वह रात की फीस के डबल रुपये लेकर मोटर मे आ बैठी । राममोहन ने मोटर स्वय ड्राइव करने के लिए शेफाली का दवा का बक्स अपने-आप उठा लिया । दोनो आकर आगे की सीट पर बैठ गए । रास्ते में कोई बात नही हुई । राममोहन सडक के दोनो ओर बिजली के प्रकाश की तरह साधना और शेफाली का प्रकाश पाकर मोटर की अबाध गति के साथ-साथ स्वय भी दौडने लगा । केवल उतरते समय शेफाली की तरफ का दरवाजा खोलते हुए राममोहन ने अपना हृदय कृतज्ञता से भिगोकर पूछा—"क्या आप साधना को प्रतिदिन दो बार देखने का कष्ट उठा सकेंगी ?"

"क्यो नही, जब तक वह ठीक नही हो जाती, तब तक मै सुबह-शाम दोनो समय आकर देख लिया करूँगी ।"

"मेरी मोटर आपको ले आया ले जाया करेगी ।"

शेफाली बक्स उठाकर धड-धड करती सीढियो पर चढ गई । राममोहन खाली मोटर लेकर लौट आया, जैसे नये बिजली के प्रकाश

मे दीये की रोशनी मद्धम पड गई हो ।

साधना अपने कमरे में लेटी थी । मुँह खुला हुआ और सारा शरीर दूध-सी धुली हुई सफेद चादर से ढका था। मालूम होता था जैसे पीली कनेर का एक गुच्छा चाँदनी मे खिला पडा हो। इस समय उसे अपेक्षाकृत कम कष्ट था, इसीलिए उसे नीद आ गई थी। नर्स उसकी खाट के पास आरामकुरसी पर ढुलक गई थी । राममोहन साधना को देखकर अपने कमरे मे लौट आया और अपने व्यापार के काम में लग गया । परन्तु इतना निश्चित है कि उसका मन काम में नही लग रहा था और न उसे नीद ही आ रही थी। प्रत्येक नये कागज पर दस्तखत करते हुए साधना की कष्ट-भरी कराह और शेफाली की छाया-मूर्ति उन अक्षरो में उलझ जाती, जैसे वह प्रत्येक बार बक्स में से नई दवा की शीशी निकाल रही हो या थर्मामीटर का पारा झाड रही हो, या इजेक्शन की सुई साधना के शरीर में चुभोकर जिन्दगी की बूँदें उसके शरीर मे डाल रही हो। और इसी बीच उग्र गर्जन की तरह साधना की विकृत स्वर-भरी पुकार अक्षरों के सीधे-टेढे रेखा-केन्द्रो पर आकर रुक जाती हो। यह पहला ही अवसर था, जब उसने जिन्दगी और मौत की लडाई देखी और इतने निकट से कि साधना की चीख के साथ-साथ जैसे उसके शरीर से भी कोई चीज खिंची जा रही हो। अन्त में सब काम जैसे का तैसा छोडकर वह अपने पलँग पर जा लेटा। उसे कब नीद आ गई, यह उसे भी याद न रहा।

शेफाली दूसरे दिन प्रातःकाल हिमावृत कमलिनी की तरह वही बक्स लिये साधना को देखने आ गई। साधना निश्चल प्रतिमा की तरह पडी हुई थी, जैसे जिन्दगी-मौत की गोद से छीनकर लाई गई हो। उसने आँखो से ही शेफाली को प्रणाम किया और होठ हिलाकर उसके प्रति कृतज्ञता प्रदर्शित की। शेफाली ने थर्मामीटर लगाकर, नब्ज देख-कर उसके धन्यवाद को स्वीकार किया और चुपचाप नर्स से दवा-दारू की व्यवस्था करके पाँच-सात मिनट बाद ही लौट गई।

राममोहन अभी खाट पर पडा अपनी रात की नीद का उत्तरार्द्ध, आलस्य उतार रहा था। उसे यह ध्यान भी न था कि लेडी डाक्टर समय की इतनी पाबन्द होगी। वह जो मोटर भेजने का बचन दे आया था, उसकी तो अभी भूमिका भी तैयार न थी। उसने अपने आलस्य को आज पहली बार धिक्कारा और चटपट शेफाली से मिलने के लिए तैयार होने से पहले ही देखा कि शेफाली साधना को देखकर चली भी गई है। शाम को शेफाली को स्वय लाने की प्रतिज्ञा-सी करके वह अपने काम मे लग गया। दिन-भर उसका मन दुकान के काम में नही लगा। राममोहन को दुकान पर काम भी क्या था! वह बैठा-बैठा बाजार के भाव-ताव टेलीफोन पर पूछता या आये-गये वैसे ही लोगो से गप्प मारता। मुनीम लोग अपना काम करते। धन के बँटवारे में चौदह आने भाग उसी का होता, क्योकि उसने मनुष्य का मस्तिष्क खरीद लिया था। जैसे नमक की खान मे हर चीज नमक बन जाती है इसी तरह राममोहन की दुकान पर काम करनेवाले व्यक्तियो का परिश्रम धन की राशि बढाने में केवल राममोहन का साथ देता। इसी बीच मे दो बार वह साधना को भी देख आया। वह मुरझाये हुए बासी फूल की तरह नर्स की देख-रेख में उसी तरह पडी हुई थी। नीद उसे जब-तब घेर लेती और आँख खोलकर देखती कि इस कप्ट के बदले में मिला उसे कुछ भी नही है। केवल कटे हुए मास पिंड की स्मृति दर्द मे लिपटी हुई रह गई है। नर्स ने जब शेफाली की कार्यकुशलता की प्रशंसा में अतिरेक-विवेक का ध्यान न रखकर स्तोत्र पढना प्रारम्भ किया तो राममोहन के हृदय का जैसे द्वार खुल गया, जिसमे प्रेम-सा चिपचिपा रस बहने लगा, ऐसा उसे भासित हुआ। शेफाली की रात की मूर्ति उसके ध्यान मे आ गई और उसी समय उसे लिवा लाने की प्रतिज्ञा को दुहराकर वह दुकान पर चला गया।

यथासमय राममोहन मोटर लेकर शेफाली को लेने गया। उस समय डिस्पेन्सरी में बैठे हुए एक बूढे-से कम्पाउण्डर ने उसे बताया कि

डाक्टर दो बजे दोपहर से जो गई है तो अभी तक उन्होने लौटने का नाम नही लिया है और कोई ठीक भी नही है। राममोहन चुपचाप एक कुरसी पर जा बैठा। शेफाली के रोगियो को देखने के कमरे में एक कलेण्डर और महात्मा बुद्ध की तस्वीर के अतिरिक्त और कुछ न था। मूविंग शेल्फ मे डाक्टरी की कुछ किताबे, मेज पर कार्ड-बोर्ड जिल्द का एक बडा-सा पैड, उसमे स्याहीचूस, एक तिथिवार कलेण्डर, दवात-कलम और एक 'प्रिस्क्रिप्शन' पैड के सिवा और कुछ नही था। रोगियो के बैठने के लिए दो बेंच, एक तरफ एक कोने मे वाश-बेसिन और कमरे के पीछे रोगियो के देखने का विशेष स्थान था। राममोहन बैठा रहा।

लगभग एक-डेढ घण्टा बैठने के बाद भी जब शेफाली नही आई तब उसने कम्पाउण्डर से एक बार फिर पूछा। वृद्ध ने अपना पहला उत्तर दुहरा दिया और आने वाले लोगो की दवा बनाने लगा। इसी समय एक दवा लेने वाले से मालूम हुआ कि डाक्टर साहब सब मरीजो को देखकर ही लौटेगी। राममोहन, जो अब सब तरह से ऊब चुका था; हारकर अपने घर पहुँचा तो नौकर ने बताया कि लेडी डाक्टर दूसरी बार फिर साधना को देखकर चली गई है और दवा भी उन्होने जो लिखकर दी थी, वह आ गई है। साधना की अवस्था में धीरे-धीरे अन्तर आ रहा था। वह सबेरे से अब कुछ अच्छी थी; धीरे-धीरे बोल भी रही थी। राममोहन वही जाकर बैठ गया। उसे लगा जैसे वह बहुत थक गया है।

"क्या दुकान से आ रहे हो ?" साधना ने होठों के साथ आँखो के संकेत से पूछा।

"लेडी डाक्टर को बुलाने गया था, पर उसका कुछ भी पता न लगा। यहाँ आने पर मालूम हुआ कि वह तुम्हें देख भी गई है।"

"हाँ, बडी अच्छी है बेचारी। मुझे तो उसने बचा लिया।"

"फीस की उसे बिलकुल परवाह नही है। इसीलिए शहर में सबसे अधिक उसी की पूछ है," नर्स ने कहा।

"कोई नई आई है। पहले तो इसका नाम नही सुना।"

"कोई साल हुआ। जो कोई कुछ दे देता है वही ले लेती है। लोभ तो छू नहीं गया और स्त्रियो के रोगो मे तो इसकी कोई बराबरी ही नही कर सकता," नर्स ने साधना के शरीर की चादर को ठीक करते हुए कहा।

"मेरा तो हर काम उसने किया है। इन्हे—नर्स को—तो हाथ ही नही लगाना पडा। नही तो भला लेडी डाक्टर क्या इतना करती है ? दूर से देखती रहती है, हाथ भी नही लगाती," साधना ने कहा।

"निरभिमान, डाक्टर हो तो ऐसी हो! इसी से बहुत सी लेडी डाक्टर इससे ईर्ष्या करती है। कहती है 'इसने हमारा काम चौपट कर दिया।' कोई-कोई तो इसे डाक्टर ही नही मानती। कहती है जाली डिग्री है, कोई नर्स है, लेडी डाक्टर बन गई है," नर्स बोली।

इसके साथ ही घडी देखकर नर्स ने दवा पिलाई। साधना का शरीर छूकर बोली—"अरे, टेम्प्रेचर हो गया है क्या ?" उसी समय उसने थर्मामीटर लगाया और नाडी की गति देखने लगी। फिर राममोहन की तरफ देखकर बोली—"घबराने की बात नही है, ज्वर होना जरूरी है। कष्ट क्या कम उठाया है ?"

नर्स के इतना समझाने पर भी राममोहन का चेहरा गम्भीर हो गया। "तो क्या डाक्टर को बुलाऊँ ? एक बार वह देख जायगी; बुखार होना तो किसी तरह भी ठीक नही है।" इतना कहकर वह शेफाली की तरफ स्वय दौड गया।

शेफाली उस समय स्नानागार मे थी। बीस-पचीस मिनट बाद जब वह बाहर निकली तो उसने भीतर से ही कहला दिया कि ज्वर में डरने की कोई बात नही है, यह स्वाभाविक है।

राममोहन कुछ भी न कह सका, कुछ देर बैठकर वापस लौट आया। शेफाली सामने नही आई। राममोहन ने एक बार उससे मिल लेने का प्रयत्न भी किया, किन्तु अनावश्यक समझकर शेफाली ने टाल दिया।

दूसरे दिन प्रातःकाल ही राममोहन उठकर डाक्टर की ओर चल

पडा, किन्तु वह तो रोगियों को देखने निकल चुकी थी। राममोहन फिर लौट आया। आठ बजे के लगभग शेफाली साधना के घर पहुँची। राममोहन भी वही था। डाक्टर सीधी साधना के कमरे में गई और उसे देखने लगी। शेफाली साधना की परीक्षा करके दवा के सम्बन्ध मे नर्स से पूछताछ करके जैसे ही लौटी वैसे ही राममोहन सामने आ गया। उसने राममोहन की ओर निरीह दृष्टि से देखकर कहा—"चिन्ता की कोई बात नही है। आज ज्वर नही होगा। दुर्बलता तथा कष्ट की अधिकता से ऐसा हो गया है। अच्छा नमस्ते !"

शेफाली चली गई। राममोहन उससे साधना के सम्बन्ध मे और कुछ भी न पूछ सका। फीस के सम्बन्ध मे भी उसने कुछ न कहा। फीस की उसने प्रतीक्षा भी नही की। तीन बार देखने पर भी डाक्टर का फीस की चर्चा न करना राममोहन के लिए आश्चर्य की बात थी। उसे मालूम है कि ये डाक्टर लोग रोगी के प्राण निकलने पर भी फीस नही छोडते। किन्तु इस स्त्री का ढग बिलकुल और ही है। सुन्दरता मे वह साधना से किसी तरह भी कम न थी। उस समय सफेद खादी की साडी में नख से शिख तक उसका गाम्भीर्य और रूप छलका-सा पडता था। दृष्टि में निरीहता, स्वच्छता, पैनापन उसका गुण था ; उसी से वह अपने पेशे की रक्षा करती थी। राममोहन को लगा कि जैसे वह उसके सामने तुच्छ है—न उसके धन का कोई मूल्य है न वैभव का। शेफाली आकर सीधी साधना के कमरे में जाती और बिना इधर-उधर देखे बाहर निकल जाती। जैसे एकमात्र उसका उद्देश्य रोगी को देखना ही हो, बस। शेफाली की निरीह प्रकृति ने राममोहन को उसके सम्बन्ध मे विचारने के लिए बाध्य कर दिया। इतनी सुन्दर स्त्री और इतनी निरभिमान और कर्तव्यशील, यही आश्चर्य का विषय है। साधना के प्रसव-पीडा प्रारम्भ होने के पूर्व ही कुछ मित्रो ने उससे शेफाली को बुलाने का आग्रह किया था। फिर भी उसने अपने पुराने डाक्टर तथा एक पहचानी हुई नर्स को बुलाकर ही काम चलाना उचित समझा। जब उनके किये कुछ

न हो सका और साधना की अवस्था दुखद से दुखदतर होती गई तब उसने अपनी दुकान के मुनीम को शेफाली को लाने भेजा। दूसरे दिन दुकान पर बैठे मुनीम ने प्रसग उठने पर राममोहन को जब भोजन की थाली छोडकर उसके घर दौडे आने का समाचार सुनाया तब उसका हृदय श्रद्धा तथा सम्मान के अतिरेक से भर उठा। इस पर एक आश्चर्य की बात यह हो रही थी कि शेफाली अपनी विजिट की फीस भी नही माँगती। एक बार उसकी इच्छा हुई कि घर जाकर उसकी फीस दे आए। वह जितना ही शेफाली के सम्बन्ध मे सोचता उतनी ही उसकी उत्सुकता बढती जाती। वह इसी उधेड-बुन मे पडा था कि प्राणनाथ ने कमरे में प्रवेश किया। प्राणनाथ को देखते ही राममोहन खिल उठा।

"साधना की कैसी अवस्था है, ठीक तो है न ? मैने तो अभी सुना," प्राणनाथ ने आरामकुरसी पर बैठते-बैठते पूछा।

"उसके जीने की तो कोई आशा थी नही, परन्तु एक नई लेडी डाक्टर शेफाली ने उसे बचा लिया।"

"शेफाली ?" प्राणनाथ ने आश्चर्य, उत्सुकता तथा कौतूहल की दृष्टि से प्रश्न-भरे स्वर मे पूछा।

"यह शेफाली कौन है ? कोई नई लेडी डाक्टर है शायद ! नाम तो बिलकुल नया है। हम बैरिस्टरों को शहर के सभी लोगो का ज्ञान रहता है। आज बार-रूम में भी उसका जिक्र चल रहा था। हमारे वह बृजेन्द्रनाथ है न, उनकी लडकी को उसने बचा लिया। बीमारी तो न जाने क्या थी ! चलो यह अच्छा ही हुआ। मतलब की बात कहूँ। बात यह है प्रेक्टिस की हालत तो तुम जानते ही हो। छ. मास होने आए अभी तक मामूली खर्च भी नही निकलता। पापा से भी कहाँ तक रुपया मँगाऊँ। विलायत मे ही मेरा खर्च सँभालने में उन्हे कठिनाई पडती थी। इसके अलावा तुम जानते हो हम विलायत से लौटे है, हर चीज चाहिए। आखिर जवानी है तो उसें जवान भी तो बनाकर रखना पडेगा। मुँह पर पट्टी तो बाँधने से रहा! मैं चाहता हूँ तुम्हारे सब केस मै किया करूँ।"

"अच्छी बात है मुझे इसमें क्या आपत्ति हो सकती है ! वैसे मेरे वकील तो वही बृजेन्द्रनाथ है," राममोहन बोला ।

प्राणनाथ ने तिरस्कार-भरे स्वर में उत्तर दिया—"छि', वह बुड्ढा क्या खाकर वकालत करेगा, जो कल तक मुख्तारगिरी करता-करता जैसे-तैसे वकील बना है ? जरा मेरे करिश्मे भी तो देखो। वैसे तुम मेरे पुराने साथी हो, तुम्हे तो पहले ही मुझे अपना वकील बना लेना चाहिए था, किन्तु जो अब तक नही हो सका उसकी याद दिलाना तो जरूरी है ही, इतना तो तुम मानोगे।"

राममोहन ने उसी ढग से उत्तर दिया—"बृजेन्द्रनाथ को छोड तो मै नही सकता, पर कुछ केस मै तुम्हे दूँगा।"

"भाई, बात यह है कि तुम्हे अपने केस तो देने ही होगे, और अपने दोस्तो के केसेज़ भी दिलाने होगे। तुम थोडे दिनो बाद देखोगे कि प्राणनाथ शहर का लीडिग वकील होगा। उस दिन हाईकोर्ट में बहस करते हुए मैने सरकारी प्लीडर के दाँत खट्टे कर दिए। जज भी मान गया ; और जज कौन हम लोगो से दूर है ? आखिर हमी में से तो जज बनते हैं। मै खुद जज होना चाहूँ तो हो सकता हूँ।"

"इसमें क्या शक है।"

"असल बात यह है कि मुझे इस समय पॉच सौ रुपयो की सख्त जरूरत है। काम तो मै तुम्हारा करूँगा ही, उसी में से काट लेना। और क्या हाल-चाल है ? हाँ, यह तो तुमने बताया ही नही कि बच्चा क्या हुआ—लड़का या लडकी ? मेरा खयाल है कि लडका ही हुआ होगा। तुम्हारे जैसे जवाँमर्द से लड़की की उम्मीद तो की नही जा सकती। यदि रुपया न हो तो चैक दे दो।"

राममोहन ने दराज में से पॉच सौ का एक क्रास चैक काटकर दे दिया।

"मेरे योग्य कोई काम हो तो बताना। परन्तु यह क्या तुमने मनहूसियत फैला रखी है कि न शरबत, न चाय। शराब तो भला पिलाओगे

ही क्या ?"

रामगोहन इस समय बातें करने के मूड मे नही था, फिर भी उसने प्राणनाथ के लिए चाय मँगाई। अपने-आप भी एक प्याला पी लिया। चाय पीते-पीते प्राणनाथ बोला—"तुम्हे मालूम है कि मैने अभी तक शादी नही की है। विलायत मे एक से दोस्ती हो गई थी, लेकिन वह बडी खर्चीली थी और पापा सुनते तो मेरा रहना हराम कर देते, हालाँकि मै किसी की परवाह नही करता। खैर, जाने दो इन बातो को, हाँ कोई, अच्छी लडकी हो तो मै शादी करना चाहूँगा। वैसे कभी-कभी सोचता हूँ शादी एक कण्ट्रेक्ट है, न भी की जाय तो भी कोई बुराई नही है। क्या विचार है तुम्हारा ? तुम मेरे पुराने दोस्त हो, इसलिए जरा बेतकल्लुफ होकर पूछ रहा हूँ। रात क्लब मे एक औरत से जान-पहचान हो गई। खूब पीती है भई, मै तो मान गया। सच कहता हूँ, नशे मे उसकी आँखो के डोरे लाल हो उठे थे। अच्छा चलूँ। कभी उधर भी आया करो न ? तुम तो पूरे बनिए होते जा रहे हो। अरे, रुपया, माना कि बडी चीज है, लेकिन है तो साला फूँकने के लिए ही न ? किसी ने क्या ठीक कहा है, 'जवानी के सागर मे गोता लगाने के लिए तू रुपये की नाव पर चढकर चल, तुझे जीवन का वास्तविक रत्न मिलेगा।' कहो कैसा है ? तुम आज गुम-सुम क्यो हो ? कोई चिन्ता है क्या ? चिन्ता जीवन की सबसे बड़ी मूर्खता है, लेकिन लोग प्रायः यह मूर्खता करने से बाज नही आते।"

राममोहन बोला—"तुम्हारी बात समाप्त हो तो बोलूँ। और बोलूँ भी क्या, जब तुम्ही सब-कुछ कहे डाल रहे हो तो मेरे लिए बाकी ही क्या रहा ! हाँ, एक काम तो करो, जरा शेफाली का पता तो लगाओ यह है कौन, कहाँ से आई है ?"

प्राणनाथ एकदम बोल उठा—"दोस्त, उडो मत, उसने तुम्हारी बीवी को ही अच्छा नही किया, तुम्हे भी घायल कर दिया है। खैर, मै एक बार देखूँगा। प्राणनाथ बैरिस्टर की चार आँखें है। उसके कान भी

देखते हैं और आँखें भी सुनती है। अच्छा चलूँ। आज एक को दावत दी है। तुम्हारा चैक तो कल ही भुनेगा, पर ढारस तो है ही।" इसके साथ ही वह मुँह से सीटी बजाता चला गया। नीचे उतरते-उतरते फिर लौटकर बोला—"राममोहन, दोस्त इतना काम और करो कि मुझे अपनी कार में इम्पीरियल तक पहुँचा दो, नही तो देर हो जायगी। गेटिंग टू लेट।"

राममोहन ने अनमने भाव से नौकर के द्वारा मोटर-ड्राइवर से प्राणनाथ को पहुँचाने को कहला दिया।

इतने में नर्स ने आकर साधना के बुलाने की सूचना दी। साधना उस समय पहले की अपेक्षा स्वस्थ थी। पति के आते ही बोली—"क्या तुमने डाक्टर की फीस नही दी ?"

"केवल एक बार की फीस दी है। सोच रहा हूँ कल आवे तो पूरी फीस चुका दूँ। तुम्हारी क्या सलाह है ?"

"ठीक है। कल सबेरे की गाड़ी से माँ आ रही हैं मुझे देखने।" इतना कहकर उसने पत्र उसके सामने फेक दिया, "यह अभी हलकू दे गया है ?"

राममोहन ने पत्र सरसरी दृष्टि से पढ डाला और उसी समय हलकू को बुलाकर आदेश दिया कि सबेरे की गाडी से जाकर माँजी को स्टेशन से ले आए। इतना सुनकर साधना ने कहा—"क्या तुम स्टेशन तक नहीं जा सकते ?"

"मेरा इतने सबेरे उठना कठिन है। साढ़े पाँच बजे गाडी आती है। उस समय मै उठ सकूँगा, इसमें मुझे सन्देह है। यह गाडी लेकर उन्हें उतार लायगा।"

"परन्तु वे अपने मन में क्या कहेगी ? पहली बार तो वे हमारे घर आ रही है। उनके खाने-पीने की अलग व्यवस्था भी तो करनी होगी।" इतना कहकर साधना राममोहन की ओर देखने लगी।

राममोहन 'अच्छा ध्यान रखूँगा,' कहकर चला गया। वह प्रयत्न

करके भी पार्वती को लेने न जा सका। सोकर ही नही उठा था वह। पार्वती के घर आ जाने पर भी वह सोता ही रहा।

उसके इस व्यवहार से साधना को चोट पहुँची। वह पडी-पडी बहुत देर तक बडबडाती रही। "पहली बार माँ आ रही है मुझे देखने, फिर भी इन्होने उनके प्रति उपेक्षा दिखाई। उनको लेने नही गये। सबेरे उठकर जाने मे हानि ही क्या थी! यह ठीक है सबेरे उठने की आदत नही है, फिर भी यदि कभी ऐसा मौका आ ही जाय तब क्या सोना नही छोड देना होता। माँ बिधवा हैं, गरीब है, इसीलिए उनके साथ इस प्रकार का व्यवहार किया गया है," आदि-आदि बाते वह नर्स से कहती रही।

जब पार्वती स्टेशन से उतरकर हलकू के साथ आई, तब भी साधना ने एक प्रकार की लज्जा का अनुभव किया और उसके आते ही वह पति के अस्वस्थ होने का बहाना बनाने लगी। पार्वती ने कुछ भी जवाब नही दिया, केवल उसकी कुशल पूछकर चुप हो गई। हलकू ने ही उसके स्नान-ध्यान का प्रबन्ध किया और वह नहाकर अपनी पूजा में बैठ गई। लगभग नौ बजे तक पूजा करती रही। इस बीच में राममोहन उठकर एक बार साधना की तरफ गया, परन्तु साधना मुँह फेरकर लेटी रही। राममोहन निर्द्वन्द्व-सा अपने कमरे में लौट आया और प्रात.काल का समाचारपत्र पढने लगा।

इसी समय शेफाली साधना को देखने आ पहुँची। साधना को देखकर प्रसन्नता प्रकट करते हुए उसने कहा—"आज तो शरीर ठीक है। बस, कुछ दिनो मे ठीक हो जाओगी। जरा हवा से बचाना।" इसके साथ ही उसने मेज पर रखी दवा की शीशी देखकर पूछा—"क्या कल दवा नही पी? यह एक मात्रा बच कैसे गई?" शेफाली ने अपने हाथ से साधना को दवा पिलाई।

वह उठने को ही थी कि साधना ने प्रार्थना-भरे स्वर में कहा—"आप बिलकुल मशीन की तरह काम करती है। क्या इतना समय भी

नही है कि कभी दो-चार मिनट मेरे पास बैठे ? आपने मेरे प्राण बचाए है, डाक्टर साहिब !"

शेफाली ने जाते-जाते मुडकर मुस्कराते हुए कहा—"दिन-भर बीमारो को देखना पडता है, इसीलिए मशीन बन जाना पडा है, साधना रानी।"

"परन्तु मुझे तो न जाने आपसे क्यो इतना स्नेह हो गया है कि कई बार दिन मे आपकी याद आती है। यह नर्स तो आपको ईश्वर की तरह मानती है। मेरी प्रार्थना है कि आप दोनो समय में एक बार अवश्य दस-पॉच मिनट मेरे पास बैठा करे। न जाने क्यो मुझे ऐसा लगता है कि आप मेरी बडी बहन है।"

शेफाली स्नेहाभिषिक्त-सी होकर साधना के पास पडी कुरसी पर बैठ गई और उसके सिर पर हाथ फेरने लगी। साधना ने शेफाली का हाथ अपने हाथो में ले लिया तथा आँखें बन्द करके उसके स्पर्श-सुख का उपभोग करने लगी। इसी बीच में साधना ने सूचना दी कि आज सबेरे माँ आ गई हैं, वे भी आपके दर्शन करना चाहेगी।

"अवश्य-अवश्य, मै तुम्हारी माँ के दर्शन करूँगी। अच्छा अब, चलूँ देर हो रही है," इतना कहकर शेफाली बक्स उठाकर चलने लगी।

दरवाजे से निकलते ही राममोहन मिल गया। उसने नमस्कार करते हुए कहा, "आप फीस न लेकर मुझे लज्जित कर रही हैं। कृपा करके दोनों बार प्रतिदिन आने की फीस तो ले लिया कीजिए। मैं जानता हूँ आपको फीस की चिन्ता नही है। आपने अपनी कर्तव्यनिष्ठा से हमको ही नही सारे शहर को मोह लिया है, और साधना तो आपकी चेली बन गई है।"

शेफाली ने कुछ कठोर होकर कहा, "फीस आपको स्वय देनी चाहिए। क्या माँगने की जरूरत है, लाइये ?"

राममोहन उसकी कठोरता से अभिभूत हो गया।

उसे आशा थी कि जिस सदयता, सदाशयता से उसने बातचीत की

है वह भी उसी तरह उत्तर देगी, किन्तु उसका कठोर तथा रूखा व्यवहार देखकर वह स्तब्ध रह गया। उसे अपने धन का गर्व एकदम हो आया। मानो उसकी आस्था का सचित प्रासाद एकदम ढह गया हो। उसने तत्काल उसी स्वर मे उत्तर दिया, "ठहरिए, मै आपकी फीस के रुपये अभी लाया।" इतना कहकर वह अपने कमरे की ओर तेजी से गया। शेफाली दरवाजे के पास कुछ देर तक खडी रही फिर बक्स उठाए बाहर निकल गई। उसके हृदय मे कुछ प्रसन्नता का-सा अनुभव हुआ, मानो राममोहन से उसने कोई पुराना बदला लिया हो। फिर भी स्वभाव के विरुद्ध कठोर होने के कारण उसे खेद भी हुआ। इसी सोच-विचार में शेफाली दूसरे रोगी के कमरे में घुस गई। उसे सोचने का अवकाश ही नही रहा।

राममोहन जब रुपये जेब में डालकर कमरे से निकला तो उसने देखा कि डाक्टर वहाँ नही है। दरबान से मालूम हुआ कि डाक्टर गाडी में बैठकर चली गई। वह बहुत देर तक वही खडा सोचता रहा।

धनी व्यक्ति रुपये का दबाव कभी नहीं सह सकता। रुपये के बल पर ही तो उसे दूसरो पर शासन का अवसर मिलता है। यह कैसे सम्भव है कि रुपये के लिए कोई उसे दबा ले। वह धन-राशि को दुगुना-तिगुना करके अपने प्रभाव को स्थापित करेगा। एक मामूली व्यक्ति, जो रुपये के लिए ही सब कुछ कर रहा है, उस पर अपना अकुश कैसे रख सकता है? इसी तरह के विचार राममोहन के मस्तिष्क में घूमने लगे। राममोहन के पास रूप-सौन्दर्य नही था, विद्या का भी कोई विशेष प्रभुत्व उसके पास नही था; धन तो था। पिछले युद्ध मे चोर-बाजारी के द्वारा उसने लाखो रुपये कमाए थे। इस समय नगर का सबसे बडा धनी न सही, धनी तो वह है ही। उसकी गिनती नगर के प्रतिष्ठित धनाढ्यो में तो है ही। फिर वह क्यो एक साधारण स्त्री से दबे! यह माना वह सुन्दर है, उसने उसकी पत्नी को जीवन-दान दिया है, किन्तु इससे क्या, वह धनी तो है ही, जिसके द्वारा वह असम्भव को

सम्भव कर सकता है, और साधना भी तो उसके घर धन के लिए ही आई है, पार्वती ने, जिसकी साधना इतनी तारीफ करती है, उसके धन के बल पर ही तो अपनी लडकी दी है। उसे पार्वती और साधना से भी एक प्रकार की विरक्ति हो गई। उसे मालूम होने लगा जैसे सभी पर उसने इस धन के बल पर शासन करने का अवसर पाया है। दूसरे क्षण ही उसे शेफाली के प्रति सोची गई बातो से दुःख हुआ। वह सोचने लगा कि शेफाली को रुपये की चिन्ता नही है। धन के बल पर उसने नगर के लोगो को नही मोहा है। उसमे कर्तव्यनिष्ठा, तप, त्याग, विद्या तथा सदयता है, जिससे उसने नागरिको की बुद्धि पर, उनके मस्तिष्को पर, उनके हृदयो पर अधिकार कर लिया है। वह नगर की प्रसिद्ध सुन्दरी है। मेरे-जैसे अनेको व्यक्ति अपने हृदय की प्यास बुझाने के लिए उसके दास बनने को उत्सुक होगे। वह सचमुच सुन्दरी है। वह आज ही शेफाली के घर जाकर उसकी फीस के डबल रुपये देकर अपनी कठोरता तथा असावधानी के लिए क्षमा माँगेगा। न जाने क्यों अपने हृदय में शेफाली के प्रति एक ममता, एक स्नेह का अकुर-सा उगा-उगा मालूम होता है। साधना इसके सामने कुछ भी नही है। इसी तरह की उधेड़-बुन में पार्वती आ गई और उसने राममोहन का नाम लेकर पुकारा; उसके स्वर में स्नेह भरा हुआ था। राममोहन ने सकपकाकर पार्वती को प्रणाम किया।

"अच्छे तो रहे भैया, सुना कुछ तबियत खराब थी ?"

"नही, ऐसी कोई बात तो थी नही। तुम जानो अम्मा, काम क्या थोडा है ?"

"हाँ भैया, जरा शरीर का ध्यान रखा करो। काम तो होता ही है।"

"आपको मार्ग में कोई कष्ट तो नही हुआ ?"

"कष्ट क्या होता, वहाँ भैया ने बैठा दिया, हलकू ने यहाँ उतार लिया।"

"अरे हलकू, अम्मा के जल-पान का कुछ प्रबन्ध किया या नहीं ?"

पार्वती ने उत्तर दिया, "मेरे जल-पान की तुम चिन्ता न करो भैया, मै इस घर का क्या जल भी पी सकती हूँ ? साधना को देखना था, देख लिया। वह ठीक हो रही है। बच्चा तो खैर, भगवान् और देंगे। बडा कष्ट भोगा है लडकी ने। तुमने भी रात-दिन एक कर दिया।" इतना कहते-कहते पास पडी एक कुर्सी पर पार्वती बैठ गई और कहने लगी, "साधना का शरीर अभी बहुत कमजोर है। अच्छा तो यह हो कि मै उसे कुछ दिनो के लिए घर ले जाऊँ वहाँ खुली हवा में रहेगी। क्या कहते हो ?"

राममोहन बोला, "यदि साधना चाहे तो मुझे क्या आपत्ति हो सकती है ! पर अभी उसका जाना क्या ठीक होगा ? अभी तो वह उठने-बैठने लायक भी नही है।"

हलकू ने आकर इसी समय सूचना दी कि अम्माजी के लिए रसोई खाली है, जो कुछ बनाना हो वह ला दे।

पार्वती ने उत्तर दिया, "अभी नही, मै शाम को खाना बनाकर खा लूँगी। तू बाजार से मुझे दूध ला दे, मै पी लूँगी।"

राममोहन को चुप देखकर पार्वती उठकर साधना के कमरे मे चली गई और राममोहन नहा-धोकर दुकान पर जाने की तैयारी करने लगा।

दोपहर को दुकान से लौटते हुए राममोहन घर लौटने की अपेक्षा शेफाली के घर चला गया। वह उस समय रोगियो को देखकर लौटी ही थी। राममोहन के आने का समाचार पाकर स्वय बाहर आ गई और उसे अपने कमरे मे ले गई। राममोहन ने कमरे में प्रवेश करते हुए कहा, "आपकी फीस के रुपये देने आया हूँ। मुझे खेद है कि इतनी देर हुई।" इतना कहकर उसने सौ रुपये का नोट उसके सामने मेज पर रख दिया।

शेफाली ने कुछ देर तक चुप रहकर पूछा, "यह क्या है, मुझे मेरी फीस के रुपये दीजिए मै अधिक न लूँगी।"

राममोहन ने तत्क्षण उत्तर दिया ; "आपने मेरी स्त्री को प्राण-दान दिया है। उसी के अनुसार तो नही, बल्कि यह उसकी तुच्छ भेंट है। मै तो आपसे इस जीवन मे कभी उऋण हो सकूँगा, ऐसी आशा नही है डाक्टर !"

इस प्रकार दीनता-नम्रता-मिश्रित सम्बोधन सुनकर वह अपनी कठोरता को स्थिर न रख सकी, फिर भी उसने गम्भीरता धारण किये ही कहा, "आप जानते है राममोहन बाबू, मै डाक्टर हूँ। मेरा काम रोगियो की सेवा करना है। उसी के सहारे मै जीवन-निर्वाह भी करती हूँ। आप क्या समझकर मुझे अधिक रुपये दे रहे है ? मुझे मेरी फीस चाहिए और कुछ नही। अच्छा, मुझे काफी काम है, मै क्षमा चाहती हूँ।" इतना कहकर वह उठने लगी।

राममोहन पराजित-सा हो गया, उसके धन का गर्व उस नारी के सामने तिल-तिल करके बह गया। उसने चुपचाप पचास रुपये निकाल कर मेज पर रख दिए फिर बोला, "परन्तु आप साधना को दोनो बार बराबर देखती रहेगी, ऐसी आशा तो मै कर ही सकता हूँ।"

"हाँ हाँ, साधना जब तक पूर्ण रूप से स्वस्थ नही हो जाती तब तक मैं उसे बराबर देखती रहूँगी, इसकी आप चिन्ता न करे। अच्छा !" राममोहन उठकर चलने लगा, इसी समय शेफाली ने जाते-जाते एक बार रुककर कहा, "क्षमा कीजिए, मेरा व्यवहार तनिक रूखा हो गया, किन्तु मैं विवश हूँ, काम ही इतना रहता है।"

राममोहन 'नही नही, ऐसी कोई बात नही है' कहकर बाहर निकल गया।

मार्ग मे चलते-चलते उसे ज्ञात हुआ कि उसका बल आज पानी की बूँदो के गिरने से ढहती रेत के समान हो गया है। जिस व्यक्ति ने चोर-बाजार से पैसा पैदा करते समय बडे-बडे सरकारी कर्मचारियो का मुँह बन्द कर दिया, आज वह साधारण नारी के सामने पराभूत एव अकिचन सिद्ध हुआ। उसके हृदय मे एक प्रकार की तीव्र कटुता तथा

प्रतिहिंसा की भावना उत्पन्न हुई। उसे लगा कि उसके आत्म-सम्मान, उसकी प्रतिष्ठा, उसके धनी होने के ईश्वरीय वरदान को एक साधारण नारी ने कुचल दिया है। वह प्रारम्भ से ही धन के महत्त्व को स्वीकार करके चला है और उसके अभ्रंकष कशाघात मे चौधिया देने वाली चपत को सभी ने सिर झुकाकर वरदान की तरह स्वीकार किया है। वह मानता रहा है कि लक्ष्मी की प्रतिष्ठा में सब गुण है, सब सौन्दर्य है और जीवन का अविरत, अखण्ड, अनिर्वचनीय और अमन्द प्रकाश है। पर···क्या वह उसे दण्ड दे, क्या उसे पीस डाले ? क्या करे ? क्या मान ले कि वह हार गया है ? नही वह इसका उपाय करेगा। साधना के प्राण-दान का विचार करके उसने शेफाली के विरुद्ध सोचने का विचार बदल दिया और धन से ही उसका बदला लेने की बात सोचता रहा। दोनो मे से कोई भी बात हो सकती है, उसने अपमान का कडवा घूँट पी ही तो लिया। घर आकर भोजन करते समय हलकू ने बताया कि अम्माजी ने आज महाराज को बडी डाँट लगाई, इससे उसने काम छोड दिया है।

राममोहन ने मुँह का कौर मुँह में दिये रहकर ही पूछा, "क्यो ?"

हलकू बोला, "मालिक, मुझे कुछ नही मालूम, वह काम छोड बैठा है, इतना जानता हूँ।"

हलकू यह बात कह ही रहा था कि पार्वती ने आकर एकदम कहना प्रारम्भ कर दिया—"लडकी देख-भाल नही कर सकती तो घर लुटने के लिए नही है। आँखो-देखी मक्खी तो निगली नही जा सकती भैया ?" राममोहन खाते-खाते पार्वती के मुँह की ओर देखता रहा। पार्वती कहती रही, "तुम्हारी कुछ बात नही है। तुम परहेज नही कर सकते न करो, परन्तु स्त्रियो की घर में मान-मर्यादा तो है ही। वह धूर्त हुक्का पीते-पीते बिना हाथ धोये रसोई मे चला गया। भला मै यह अत्याचार कैसे देख सकती थी। मैने आज उसको जवाब दे दिया। जब तक मै हूँ तब तक किसी रसोइये की जरूरत नही है।"

राममोहन अवाक् होकर सुनता रहा। उसे यह सब अच्छा न लगा, पर केवल इतने से ही नौकर को निकाल देने की बात उसकी समझ मे नही आई। फिर भी वह चुप रहा। पार्वती ने अपना समर्थन न पाकर कुछ जडता का अनुभव किया और खाने के सम्बन्ध मे कुछ और न पूछ सकी। राममोहन घर मे यह काण्ड देखकर बाहर चला गया।

पार्वती ने साधना मे जाकर वही दुहराया तो साधना लेटे-ही-लेटे बोली, "तुमने यह क्या किया माँजी, नौकर आजकल मिलते कहाँ हैं ? माना कि जब तक तुम हो किसी तरह काम चल जायगा, परन्तु तुम्हारे बाद तो हमको नौकर की जरूरत पडेगी ही।"

"तो क्या तू भी इतना काम नही कर सकती, जो नौकर के बस में रहना पडता है , यह ठीक नही है। पढने-लिखने का यह अर्थ नही है कि आदमी घर का काम भी न कर सके।"

इसी पर साधना ने उत्तर दिया, "मै भी कहाँ काम क र पाती हूँ ! मुझे मिलने-जुलने वालो से ही फुरसत नही मिलती, मुझसे रोटी नही बनती। दो-ढाई घण्टे तो नहाने-धोने मे लग जाते है।"

पार्वती बोली, "मुझसे भूल हुई साधना, जो मैने भ्रष्टाचार देखकर तेरे नौकर को अलग कर दिया। मै गरीब औरत क्या जानू कि तुम्हारे घर में धन का महत्त्व नौकर से ही है," इसी तरह की बहुत सी बातें वह कहती रही।

अमीरी और गरीबी में जो एक भेद है वह बाहर ही नही दिखाई देता, भीतर भी रहता है। दो दिन में ही वह भेद माँ-बेटी में उभर आए। साधना की हर बात का उसकी माँ विरोध करती। उसकी फिजूलखर्ची पर उसे फटकारती। माँ जो उपदेश उसे देती, उसमें बड़प्पन की बू थी। साधना जो सुनती उसमें उसे माँ की मूर्खता, अज्ञता लगती। दो ही दिन में माँ को लगा जैसे साधना उसकी लडकी होती हुई भी उससे बहुत दूर चली गई है। बेटी और जमाई दोनो की तरफ से उसे अपने प्रति उपेक्षा दिखाई दी।

शेफाली अपने डाइनिंग रूम में जैसे ही भोजन करने बैठी वैसे ही गिरधर आकर कुरसी पर बैठ गया। बोला—"हमारी समिति ने निश्चय किया है कि चित्रकला तथा संगीत की छात्र-प्रतियोगिता में आप सभापति होंगी। बस, आप स्वीकृति दे दीजिए।"

शेफाली ने खाते-खाते कहा, "सुनो गिरधर, मैंने तुमसे कह दिया है कि किसी ऐसे काम मे मै भाग न लूँगी। क्या तुम मुझे मेरा काम ही करने नही दे सकते ?"

"नही, जब आपकी ही प्रेरणा से यह कार्य हो रहा है तब आप बाहर कैसे रह सकती हैं ? आखिर इसमें आपका सम्मान भी तो है। आपने 'ट्रॉफी' के लिए धन दिया है। इसकी आयोजना में आपका हाथ है फिर आप दूर क्यो भागती है ?"

"मै दर्शक के रूप मे आ जाऊँगी, परन्तु मेरा सभापति बनना तो किसी तरह भी सम्भव नही है।"

गिरधर उदास हो गया। वह जितने उत्साह से आया था, उतना ही निराश हो गया। वह चाहता था कि जो नारी लडकियो की उन्नति में प्रच्छन्न रूप से इतना भाग ले रही है उसका सम्मान भी तो होना चाहिए। वैसे भी इस सम्मान के द्वारा वह शेफाली को खुश करना चाहता था और चाहता था यह दिखाना कि वह भी महत्त्वहीन, नगण्य नही है। किन्तु शेफाली ने न माना। वह चुप हो गया। थोडी देर के बाद बोला, "तो आप आयँगी तो ? देखिए नगर के सभी प्रतिष्ठितो को हमने आमन्त्रित किया है।"

"हाँ, आने का यत्न करूँगी।"

"क्या आने मे भी यत्न की आवश्यकता है ?"

"बात यह कि मुझे बीमारों के देखने से अवकाश नही मिलता, काम इतना बढ़ गया है। क्या करूँ! मुझे सेवा में आनन्द भी मिलने लगा है। यह अब मेरा पेशा नही है।"

"यह तो मै जानता हूँ। लोग आपको 'मसीहा' की तरह पूजने लगे है। इधर चित्र-कला भी आपकी इसी कारण रुक गई है। अच्छा तो वे अपने चित्र तो हमे लगाने के लिए दे दीजिए।"

"नही, यह नही हो सकता। वे चित्र मैने प्रदर्शनी के लिए नही बनाये। वे मेरी 'हाबी' है। तुम उनके लिए मुझे दिक न करो। तुम भी खाना क्यो नही खा लेते गिरधर ?"

गिरधर ने कोई उत्तर नही दिया। शेफाली ने रसोइये को बुलाकर भोजन लाने की आज्ञा दी। गिरधर खाने लगा। दोनो भोजन कर ही रहे थे, इसी समय शुभदा आई। आते ही उसने कहा, "दीदी, कल होने वाली सगीत की छात्र-प्रतियोगिता मे भाग लेने के लिए मुझे विवश किया गया है। मै स्वाकृति दे आई हूँ। अरे गिरधर, तुम भी यही हो ?"

"शुभदा, तुझे अवश्य भाग लेना चाहिए। मेरा विश्वास है तुझे कोई-न-कोई पारितोषिक अवश्य प्राप्त होगा। क्यो गिरधर ?"

"अवश्य, बशर्ते शुभदा सकोच न करे। पिछले दिनों कालेज मे तो इसने रेढ ही मार दी, हालाँकि स्वर तथा सगीत की दृष्टि से कोई भी इसके बराबर नही था।"

शुभदा बोली, "लडको ने मेरे उठते ही तालियाँ पीट दी, तमाम हॉल कोलाहल से गुँजा दिया, मै क्या करती ?"

शेफाली ने हँसकर कहा, "यदि कल भी ऐसा ही हुआ तो ?"

शुभदा चुप हो गई। गिरधर कहने लगा, "कला के प्रदर्शन में संकोच काम नही देता। शायद शुभदा इसे अपना भूषण समझती है।"

शेफाली ने स्वीकार किया कि वह कल की प्रतियोगिता में अवश्य आयगी।

गिरधर चला गया। शेफाली के अनुरोध पर शुभदा ने सितार

लेकर गाना प्रारम्भ किया। पहले मालकोस फिर एक विहाग गाया। निश्चय हुआ कि मालकोस ही कल सुनाया जाय। सचमुच शुभदा का गला बहुत सुन्दर था। उसके स्वर के उतार-चढाव तथा ताल से सगीत में जान आ गई। रात के उस एकान्त प्रदेश मे राग मानो मूर्तिमान हो उठा।

शुभदा एक बगाली लडकी है। जिस समय कलकत्ता मे अकालग्रस्त बगाल के प्राणी आकर अन्न के एक-एक दाने के लिए तरसकर प्राण-विसर्जन कर रहे थे, उन दिनो शुभदा भी अपने अन्न-पीडित माता-पिता के साथ ढाका के पास किसी गाँव से कलकत्ता आ गई। अकाल से पूर्व वह ढाका के हाई स्कूल से मैट्रिक पास कर चुकी थी। दिनदिन बढने वालो दुरवस्था के कारण अन्नत्रस्त लोगो के एक गिरोह ने मधुसूदन वसाक के अन्न-भण्डार को लूट लिया; उनके प्रतिरोध करने पर उनके घर मे आग लगा दी। बहुत दिनो तक वह अपने परिवार को किसी तरह पालते रहे। इसी बीच क्षुधा से पीडित होने पर उनकी पत्नी तथा एक बडा कन्या का अवसान हो गया। एक लडका था, वह युद्ध मे आहत होकर मर गया। मधुसूदन एकमात्र अपनी कन्या शुभदा को लेकर कलकत्ता आये, परन्तु उन्हे कही काम न मिला। और तो और माँगने पर भीख भी न मिली। ऐसी निरीह अवस्था मे एक दिन सायकाल के समय हावडा के पुल के पास मधुसूदन भी भूख से तडप कर इस कष्ट से छुटकारा पा गए। शुभदा पहले लडकियो के व्यापारियो के चगुल मे पड गई। एक दिन उस नरक से भाग निकलने पर वह बगाल मे औषधि-वितरण करने गये हुए डाक्टरो के बैच की लेडी डाक्टर शेफाली को मिल गई। शेफाली ने उसे आश्वासन दिया तथा अपने साथ ले आई। तब से शुभदा शेफाली के ही पास रहती और कालेज मे पढती है। शेफाली उसे अपनी छोटी बहन की तरह मानती है। शुभदा पहले कुछ दिनो तक निराशाच्छन्न तथा दुखी रही। रह-रहकर उसे अपने परिवार का ध्यान होने पर रोना आ जाता। एक दिन उसने

उसी आवेश में शेफाली के कम्पाउण्डर की दृष्टि बचाकर विष खा लिया, परन्तु डाक्टर के तात्कालिक प्रयत्न से वह बच गई। फिर एक मास तक बराबर बीमारी भोगकर उठने पर साधारण स्वास्थ्य-लाभ हुआ। अब भी उसे कभी-कभी विष का प्रभाव बेचैन कर देता है। अठारह वर्ष की इस लडकी को शेफाली से इतना स्नेह हो गया है कि वह उसे अपना सर्वस्व समझती है। बहुत दिनो तक शेफाली को वह अपनी स्वामिनी समझती रही, परन्तु शेफाली के व्यवहार ने उसे उसकी बहन बनने को बाध्य कर दिया। शेफाली के ही अनुरोध पर उसने सगीत का अभ्यास प्रारम्भ किया है। जिस समय रात को शुभदा सितार लेकर गाती है उस समय शेफाली चित्र बनाती है।

दूसरे दिन प्रातःकाल साधना ने कहा, "आज वाई० एम० सी० ए० हॉल मे सगीत तथा चित्रकला की प्रतियोगिता है। क्या ही अच्छा होता कि मै वहाँ जा सकती डाक्टर ?"

शेफाली ने टेम्परेचर लेते हुए कहा, "बहुत नही, तीन-चार दिनों तक मै तुम्हे घर में चलने-फिरने की आज्ञा दे सकूँगी।" थर्मामीटर देखकर बोली, "बुखार तो नही है, फिर भी दवा खाते रहना ताकि फिर न आ जाय। अच्छा चलूँ।"

साधना ने हाथ पकड कर कहा, बैठिए न ! आप तो बैठती भी नही है। क्या आज आप वहाँ जायँगी ? मेरी सखी की लडकी का भी पार्ट है। सुना है शुभदा नाम की लडकी बहुत अच्छा गाती है।"

शेफाली ने उत्सुकतावश पूछा, "तुमने कहाँ से सुना ?"

"वैसे ही मेरी सखी की लडकी कहती थी। सचमुच मुझे इन चीजो से बहुत प्रेम है। मैने ऐसे अधिवेशन कभी मिस नही किये हैं डाक्टर। जीवन मे यही तो है हँसना-खेलना। कभी-कभी इच्छा होती है कि मैं भी सुनाऊँ, पर अब तो सुनने के दिन है न ?"

"तुम, क्या तुम भी गाती हो ?"

"आप शुभदा को जानती है क्या ?"

"हाँ।"

"सचमुच, कैसी है वह ?"

"मेरे पास ही तो रहती है। मेरी छोटी बहन है।"

"हाँ," इतना कहकर वह गद्गद् हो गई। "एक दिन उसे लाइए न, मै भी देखूँ। वैसे तो कभी-कभी रात को आकर कृष्णा गाना सुनाती है, परन्तु उसके वही पुराने गाने है—सुनती हूँ जी पर पत्थर रखकर। डाक्टर, क्या आप उसे एक दिन ला सकेगी ? अच्छी होने पर मै एक दिन आपके सत्कार में पार्टी देना चाहती हूँ।"

शेफाली ने पूछा, "राममोहन कहाँ है ?"

"वे तो दुकान गये है। आपकी काफी तारीफ करते है।"

शेफाली चुप रही।

साधना फिर बोली, "मुझे अब आप घर की-सी लगती है। मै अब आपको डाक्टर नही कहूँगी। आपका नाम लेकर या 'दीदी' कहकर पुकारा करूँगी। आपको पसन्द है न ?"

"पसन्द क्यो नही है। मै सब बीमारो को अपनी बहन, माँ, बेटी समझती हूँ। तुम्हे भी।"

"क्या ?"

"बहन।"

"हाँ, ठीक है।" साधना शेफाली का हाथ पकडे रही। कभी-कभी प्रेमातिरेक से वह उसका हाथ चूम लेती। इसके साथ ही साधना कह बैठी, "एक बात पूछूँ ?"

"पूछो न ?"

"आपने विवाह क्यो नही किया ?"

शेफाली एकदम हाथ छुडाकर उठ खडी हुई। "यह सुनकर क्या करोगी साधना, यह कहने की बात नही है। फिर कभी सही।" शेफाली के जाते-जाते पार्वती कमरे मे आ गई। साधना ने कहा, "यह मेरी माँ है।"

शेफाली ने रुककर नमस्ते किया। पार्वती ने आशीर्वाद दिया तथा बोली, "डाक्टर साहिबा, आपने मेरी बच्ची को बचाया है। ईश्वर आपका भला करे।"

शेफाली ने कोई उत्तर नही दिया। साधना ने जिज्ञासा-भरे स्वर में अनुरोध किया, "माँ आपको देखने को उत्सुक थी। यदि देर न हो तो एक प्याला चाय पी लीजिए, कृपा होगी।"

पार्वती ने वही बात और भी जोरदार शब्दो में दुहराई। शेफाली ने कार्यव्यग्रता का बहाना किया, किन्तु अन्त में उसे पार्वती का अनुरोध टालने का साहस न हुआ। नौकर को बुलाकर चाय लाने की आज्ञा दी गई। इसी बीच में पार्वती ने पूछा, "बेटी, क्या तुम्हारा विवाह नही हुआ ? ऐसी सुन्दर हो, लाखो में एक ! क्या तुमने विवाह किया ही नही ?"

शेफाली ने अनमने भाव से पार्वती के प्रश्न को टालना चाहा। जब वह इस पर भी न मानी तब उसने कहा, "क्या विवाह कोई आवश्यक बात है ? मै नही मानती कि विवाह आवश्यक है। मनुष्य को कोई काम चाहिए, जिसमें उसका मन लगे। वह काम मुझे मिल गया है। दिन-रात रोगियो की सेवा करती हूँ, इसी मे मुझे प्रसन्नता है।"

साधना ने बीच में ही बात काटकर कहा, "माँ, इनकी एक बहन बडा सुन्दर गाती है। आज वाई० एम० सी० ए० में उसका सगीत है।"

पार्वती बोल उठी, "क्या उसे भी अनब्याहे रखना है, बेटी ! तुम बडी पढी-लिखी लडकियो के सामने मै हूँ तो मूर्ख, परन्तु इतना कहूँगी कि बिना ब्याह के स्त्री का जीवन बडा कठिन हो जाता है। ब्याह से पहले साधना का भी यही विचार था, तब मैने इससे कहा कि 'मेरे रहते तू ऐसा नही कर सकती। मेरे बाद चाहे सो करना।' अब भगवान् की दया से सुखी है।" शेफाली ने कोई उत्तर नही दिया। चाय आने पर चुपचाप पीकर चली गई।

उस दिन उत्सव मे जब शेफाली पहुँची तो आधा कार्यक्रम समाप्त हो चुका था। शुभदा ने बहन के आने मे देर देखकर अपना नाम हटवाकर पीछे रखवा लिया। मिसेज ईदुलजी, एक पारसी महिला, सभानेत्री के पद पर थी। कार्यक्रम बडा आकर्षक था। गिरधर तथा कालेज के अन्य छात्र-छात्राओ का प्रबन्ध था। शेफाली के प्रवेश करते ही गिरधर ने उसे ले जाकर डाइस के पास प्रतिष्ठित महिलाओ के स्थान पर बैठा दिया। श्रोताओ के आग्रह पर गिरधर को एक कविता सुनानी पडी। सगीत का कार्यक्रम चल रहा था। चित्रकला की प्रदर्शनी पहले समाप्त हो चुकी थी। जब शुभदा की बारी आई तब वह मच पर आकर बैठ गई। धीरे-धीरे सितार लेकर उसने रात के निश्चित गानो को दुहराया। शेफाली के कारण या न जाने कैसे शुभदा तन्मय होकर गाने लगी। सौभाग्य से उसका गीत श्रोताओ ने मन्त्र-मुग्ध होकर सुना। समाप्त होने पर लोगो ने फिर आग्रह किया। इस बार उसने एक बगाली गीत सुनाया। वह रवीन्द्रनाथ का गीत था—

पान्थ तुमि पथिकजनेर सखा हे
पथे चलाइ सेइ तो तोमाय पाओया, आदि

सगीत के पश्चात् शुभदा अपने स्थान पर बैठने की अपेक्षा बहन के पास आकर बैठ गई। शेफाली ने उसकी पीठ ठोकी। कार्यक्रम की समाप्ति के बाद निर्णायको ने जो निर्णय दिया उसमे शुभदा का सगीत सर्वप्रथम रहा और चित्रकला मे शेफाली के चित्र अधिक पसन्द किये गए यद्यपि वे पारितोषिक मे न थे। पारितोषिक एक और कन्या को मिला। एक व्यक्ति ने शेफाली के चित्रो को खरीदने का आग्रह किया, किन्तु 'ये बेचने के लिए नही है' कहकर टाल दिया गया। जब शेफाली को अपने चित्रो के सम्बन्ध में ज्ञात हुआ तो वह भीतर-ही-भीतर बहुत झल्लाई, किन्तु इसका परिणाम यह हुआ कि शेफाली और शुभदा की प्रसिद्धि चित्रकार तथा सगीतज्ञ के नाते हो गई। राममोहन तथा प्राणनाथ ने आकर दोनो को बधाई दी। स्वय सभापति मिसेज ईदुलजी ने शुभदा

की प्रशसा की ।

घर आने पर शेफाली ने गिरधर को फटकारा और बिना आज्ञा उसके चित्र प्रदर्शनी मे रखने के कारण उसे बहुत भिडका । गिरधर को इससे कोई अप्रसन्नता नही हुई । उसने कहा, "आपके मत से मैं सहमत नही हूँ । आपने कला को छिपाकर उसकी हत्या की है, मैने उसका प्रकाश किया है । वैसे आप जो कुछ भी कहेगी, मै सहर्ष सह लूँगा" इस बात को सुनकर शेफाली भी भीतर-ही-भीतर प्रसन्न हुई । अपना यश कौन नही सुनना चाहता ! शुभदा और गिरधर भीतर-ही-भीतर हँसे ।

उसी समय राममोहन के साथ प्राणनाथ आया । राममोहन ने शुभदा को अपनी ओर से पेशावरी 'ग्लव्स' भेट किये ।

शुभदा ने मना भी किया, किन्तु शफाली के कहने पर उसने स्वीकार कर लिया । राममोहन ने प्राणनाथ का परिचय कराते हुए कहा, "यह मेरे मित्र प्राणनाथ, बैरिस्टर ! यूरोप मे बहुत दिन रहे है । आप वहाँ की कई प्रसिद्ध पार्टियो मे काम करते रहे है ।" शेफाली ने मुस्कराकर उसका स्वागत किया ।

प्राणनाथ ने कहा, "मैने यूरोप की प्रदर्शनियो मे 'पाब्लोपिकासो' के चित्र देखे है और उस समय के, जब वह कम्युनिस्ट नही था और उसके बाद के भी, किन्तु आपके चित्रो में रोरिक और अवनीन्द्र की कलात्मकता के अतिरिक्त और भी बहुत-कुछ है, जो आपका अपना है । वैसे स्वभावतः मै रोमाण्टिक चित्रो को पसन्द करता हूँ, परन्तु आपके 'आसन्न मृत्यु' चित्र ने मेरी भावना को बदल दिया है । मै मानता हूँ यथार्थता भी कला का वास्तविक मूल्य है । मैं विश्वास करता हूँ यदि आपने अपनी कला को बढ़ने दिया, जिसकी कम ही सम्भावना है क्योकि आपका पेशा एकदम कलाहीन है, तो मैं कह सकता हूँ कि इन चित्रों के द्वारा आप अमर हो जायँगी ।"

गिरधर बोला, "जीवन-दान की कला को क्या आप हीन

समझते हैं ?"

प्राणनाथ ने उपेक्षा की दृष्टि से गिरधर की ओर देखकर कहा, "जीवन-दान एक पेशा होते हुए भी कला नही है, रस नही है। एक प्रकार के निश्चित सिद्धान्तो पर चलने की प्रेरणा है, नियम-पालन है। डाक्टर शरीर के मिस्त्री है, जिनका काम शरीर-रूपी मकान को देर तक बनाये रखना है।"

शुभदा बोली, "जीवन को बनाए रखना ही तो सृष्टि मे महत्त्वपूर्ण है। कला-भावना उसी के ऊपर तो निर्भर करती है।"

प्राणनाथ ने तत्क्षण उत्तर दिया, "डाक्टर जीवन नही है, जीवन को बढाये रखने का निमित्त है, इसलिए उसका महत्त्व ईटो की दीवारे या टूटे-फूटे की मरम्मत करने के अतिरिक्त और कुछ नही है। जीवन के स्रष्टा स्त्री-पुरुष है। सौन्दर्य, प्रतिभा, शक्ति भी उनके प्रयत्नो का सार है। डाक्टर तो केवल फटे हुए को सीने वाला दर्जी है, यदि इतनी बात से आप उसका महत्त्व समझती है तो मुझे कोई आपत्ति नही है।"

शुभदा चुप हो गई। गिरधर बोलना नही चाहता था। मालूम होता था कि प्राणनाथ ने सबको प्रभावित कर दिया है। शेफाली ने मुस्कराते हुए कहा, "मै डाक्टरी के महत्त्व को बढाना नही चाहती। वह न मिस्त्री के काम की तरह है, न दर्जी के। वह ससार के सौन्दर्य, स्वास्थ्य, प्रतिभा को अक्षुण्ण बनाये रखने वाला एक लगन का स्रष्टा है, जिसके प्रयत्नों मे जीवन की स्थिरता है। डाक्टर मृत्यु को जीतने के प्रयास का प्रतीक है, यदि वह शुद्ध रूप से उसी भावना को लेकर काम करे। मुझे रोगियो की सेवा मे वास्तविक आनन्द आता है। चित्रकला तो मेरे लिए एक 'हॉबी' है। 'हॉबी' जीवन के आनुषगिक आनन्द का साधन है। जो लोग इसको प्रधान रूप से अपनाते है, उनको मै प्रणाम करती हूँ।"

फिर भी प्राणनाथ की बातो से शेफाली प्रभावित हुई। उसे लगा जैसे यह व्यक्ति जहाँ ज्ञानी है वहाँ अनुभवी भी है, बहुश्रुत होने के साथ

बहुद्रष्टा भी है; बत्तीस-तेतीस की आयु मे जैसे इस व्यक्ति ने अपने अनुभवो से बहुत-कुछ कूडा-कर्कट छानकर नवीन दृष्टि से जीवन का सग्रह किया है। बातचीत मे तीव्र, विवेचनात्मक दृष्टि, पार तक जाने वाली प्रतिभा, उसके साथ ही शारीरिक सौन्दर्य और वाणी का विलास, इन सबने मिलकर शेफाली, शुभदा तथा गिरधर को मोह लिया।

राममोहन ने आगे प्रसग बढाने के लिए कहा, "प्राणनाथ अच्छे मित्र ही नही है, ससार को खुली आँखो से भी उन्होने देखा है। यूरोप के सभी देशो मे ये घूमे है।"

प्राणनाथ ने बीच में बात काटते हुए कहा, "इससे क्या होता है राममोहन, मनुष्य को उन्ही अनुभवो से लाभ होता है जिनका उसके दैनिक जीवन से सम्बन्ध होता है। यद्यपि मै मानता हूँ कि परोक्ष रूप से मनुष्य स्वय वही नही है जैसा वह दिखाई देता है; उसके सम्बन्ध, उसका ज्ञान दूर तक व्याप्त होते हैं। यद्यपि आज मेरे उन व्यापारो, कामो का यहाँ कोई महत्त्व नही है, कोई उपयोगिता भी नही है, जो मैने जर्मनी, फ्रास, इङ्गलैण्ड में प्राप्त किये है।"

शुभदा बोल उठी, "तो आप कितने दिन तक यूरोप में रहे ?"

"लगभग आठ साल। पढने गया था बाप के खर्च पर, घूमना मेरा लक्ष्य हो गया, और काम भी किया।"

"क्या काम ?" शेफाली बीच में पूछ बैठी।

"ये सब लम्बी बाते है। फिर भी मैने प्राय. सभी प्रकार की सभा-सोसाइटियो मे घुसकर देखा और पाया कि हर सोसाइटी में मुश्किल से एक प्रतिशत आदमी ईमानदार है, पाँच प्रतिशत अन्ध-विश्वासी जो दूसरे की बुद्धि को बडा मानकर चलते हैं, दस प्रतिशत स्वार्थी और शेष अवसरवादी होते है।"

"क्या मतलब ?"

प्राणनाथ जैसे अपने दिमाग की किताब खोलकर उसमें से कुछ पन्ने पढ रहा हो, बोला, "यूरोप में विचारो का बडा संघर्ष है। सभी

तो पढे-लिखे है। सभी की समस्याएँ है, इसलिए वहाँ मनुष्य का मस्तिष्क निश्चेष्ट नही है। सभी के मस्तिष्क मे एक भयकर द्वन्द्व उठता रहता है।"

बातचीत गम्भीर हो चली थी। वातावरण में निस्तब्धता आ गई थी, फिर भी जैसे सभी प्राणनाथ की बात सुनने के लिए उत्सुक थे। राममोहन का मन दुकान की तरफ था। वह रह-रहकर बेचैन हो उठता। एकाध बार उसने प्रसग बदलकर बात को समाप्त करने की कोशिश की, परन्तु प्राणनाथ जैसे छा गया था। बाकी सब उसे सुनने को तैयार थे। हारकर राममोहन बोला, "अच्छा, मै अभी आ रहा हूँ। क्षमा कीजिए, जरा जरूरी काम याद आ गया।" इतना कहकर राममोहन चला गया।

शेफाली ने पूछा, "यूरोप आपको कैसा लगा ?"

"आपका क्या मतलब है ? यूरोप अच्छा है। सब आदमी अपनी-अपनी दृष्टि लेकर यूरोप जाते है। पढने-लिखने वालो के लिए, सैर-सपाटे वालो के लिए और व्यापारी वर्ग के लिए—सभी के लिए अपने-अपने दृष्टिकोण से वह विचित्र देश है। सबके लिए सब-कुछ वहाँ मिलता है। जहाँ वह पूरा भौतिकवादी देश है वहाँ विलास की भी कमी नही है। शिक्षा-शास्त्री भी वहाँ एक से एक बढकर है, विचारक भी। मैने वहाँ के सभी वर्गो को देखा है। उनमें घुल-मिलकर रहा हूँ। मुझे लगा, आचार जैसी कोई चीज वहाँ नही है।"

"क्या मतलब, क्या सभी आचारहीन है ?"

"हाँ, हमारे आचारो के साथ वहाँ के लोगो का मेल नही खाता। वे जहाँ विचारो मे स्वतन्त्र है वहाँ देश की रूढियो के भी कट्टर पालक हैं। वे उसे एटीकेट या शिष्टाचार मानते हैं। इधर जर्मनी मे काफी दिन रहा हूँ; वह विचित्र देश है।"

"किस दृष्टि से ?"

"विचारों की दृष्टि से। द्वितीय महायुद्ध से पहले उसकी तैयारी देखकर हैरानी होती थी। साम्यवादी, समाजवादी और साम्राज्यवादी

इन तीन प्रकार के विचारों का जितना सघर्ष मैने जर्मनी मे पाया उतना और कही नही। इसीलिए मै तीन वर्ष तक जर्मनी मे रहा। कुछ काम भी कर लेता था, जिससे गुजारा हो जाता था। आपको शायद मालूम हो, जर्मनी बुद्धिमत्ता का, विज्ञान का, सबसे बडा केन्द्र है। वहाँ के मनुष्य का निर्माण विचित्र ढग से हुआ है। हिटलर ने अपने शासन-काल में उसमें एक प्रकार की कट्टरता भर दी। वहाँ का व्यक्ति अपने को ससार मे सबसे श्रेष्ठ समझने लगा।"

"तो आप वहाँ कौनसी पार्टी में शामिल हुए ?"

"कई पार्टियो में, और अन्त मे कम्यूनिस्ट पार्टी मे। वही मुझे अच्छी लगी। उसी का काम मुझे ठीक ढग से काम करनेवाला लगा। बाकी फासिस्ट मै हो नही सकता था, क्योकि फासिज्म का प्रचार केवल जर्मन लोगो के लिए था। सोशलिस्ट पार्टी वहाँ अवसरवादी थी। कम्यूनिस्ट पार्टी का काम और ध्येय ससार मे कम्यूनिज्म का प्रचार करना था। बडी कठिनाई से एक मित्र की सहायता और बराबर प्रयत्न करने के बाद मुझे उसमें घुसने के लिए छ मास लगे।"

"तो क्या आपका विश्वास है कि ससार के कल्याण के लिए केवल यही एक विचार सुसगत है ?" शेफाली ने प्रश्न किया।

"हाँ, उस समय तो यही था।"

"और आज क्या है ?" शुभदा ने पूछा।

"आज मै मानववाद का उपासक हूँ।"

"वह क्या बला है ?" शेफाली ने व्यग्य करते हुए पूछा।

प्राणनाथ उत्तर देने ही जा रहा था कि शेफाली के नौकर ने रोगी देखने के लिए एक आदमी के आने की खबर दी। शेफाली उसी समय बाहर चली गई। लौटकर बोली, "क्षमा कीजिए प्राणनाथ बाबू, एक बीमार को देखने जाना पड रहा है। आपसे मिलकर बडी खुशी हुई।" इतना कहकर शेफाली अपना बक्स लेकर बाहर चली गई।

शुभदा इतने पर भी प्राणनाथ की बातो में रस ले रही थी। गिरधर

भी प्राणनाथ की बातो में तल्लीन था। वह कट बैठा, "यह मानवतावाद वस्तुतं कोई वाद नही है, एक प्रकार की विचार-धारा है जो समय और परिस्थितियो से निकली है।"

प्राणनाथ ने उत्तर दिया, "आज मनुष्य के सब पुराने मूल्य बदल गए है। वह स्थूल मे सूक्ष्म और सूक्ष्म से विशाल तथा व्यापक की ओर जा रहा है। मानो विज्ञान तथा प्रकृति के सूक्ष्म रहस्यो का निरन्तर उद्घाटन हो रहा है। नये-नये आविष्कारो के द्वारा देश और काल की सीमाएँ टूट रही है। आदर्शो की अपेक्षा यथार्थवादी दृष्टिकोण ने मनुष्य को एक नये ढग से सोचने को बाध्य कर दिया है।"

शुभदा ने जाना जैसे यह व्यक्ति व्याख्यान दे रहा है। उसका मन ऊबने लगा। फिर गिरधर भी कुसमुसाने लगा। प्राणनाथ ने यह देखा और अन्त में उसने कहा, "मेरे कहने का तात्पर्य इतना ही है कि सब-कुछ परिस्थितियाँ उत्पन्न करती है। और ये हमारे निरन्तर अवचेतन मनो के आविष्कार है, कोई वस्तु अपने-आप अकारण नही होती। अच्छा, फिर आऊँगा," कहकर वह उठा।

शुभदा बोली, "तो क्या आप भी कम्यूनिस्ट रहे है ?"

"हाँ, काफी दिनो तक। मै जर्मन कम्यूनिस्ट पार्टी का मेम्बर था। वही काम करता रहा, जेल गया, मार खाई। विश्वास था कि अब लौटना मुश्किल है, पर समय ने पलटा खाया, जर्मनी का रूस से समझौता होने के कारण मैं भी छूट गया। पर बात यह है कि मै कभी बहुत बडा का`कर्त्ता नही रहा हूँ। मै तो सोचना और लिखकर प्रचार करना पसन्द करता रहा हूँ। मै जिन दिनो पाँचवी-छठी मे पढता था, उन दिनो भी असहयोग आन्दोलन मे मैने पढना छोड दिया था।"

"मानवतावाद तो अधूरा रह गया," गिरधर बोला।

"मानवतावाद वैसे कोई वाद नही है। ईसाइयो के स्वर्गवाद से इस का आरम्भ हुआ, किन्तु आज मै जिस मानवता का उपासक हूँ वह किसी एक की नही, संसार के सभी विचारकों द्वारा मनुष्यता की प्रतिष्ठा-पूजा,

उसकी उन्नति का रूप है। अच्छा चलूँ, देर हो रही है।"

शुभदा ने खडे होकर विदा करते हुए आग्रह किया, "यह आपका घर है प्राणनाथ बाबू।"

प्राणनाथ दोनो को नमस्कार करके चला गया। थोडी देर तक दोनो चुप रहे। गिरधर बोला, "अनुभवी और विचारक है, दुनिया देखे हुए है।"

"बैरिस्टर भी तो है।"

"हाँ।"

"इस ससार में ज्ञान अनन्त है। उसका सुख भी अनन्त है। कोई भी रूप हेय नही है। वह मनुष्य है जिसके कारण हेय और उपादेय होता है।"

"तो हेयता और उपादेयता वस्तु मे नही, ग्राहक में है। ग्राहक-मनुष्य अपने अधूरे सुख-दुख के कारण वैसी विवशता अनुभव करता है। खैर, जाने दो इन बातो को। तुम एक कविता सुनाओ।"

"इस समय मूड में गम्भीरता छा गई है, इसलिए बस, अब जाता हूँ।"

गिरधर चला गया। शाम को प्राणनाथ के साथ राममोहन आकर निमन्त्रण दे गया। उसने कहा, "यह मेरा तो आग्रह है ही, साधना की भी प्रार्थना है। आप सबको आना होगा।" शेफाली ने अर्ध मन से उसके आग्रहपूर्ण निमन्त्रण को माना।

प्राणनाथ बोला, "पहले यह बताओ उस निमन्त्रण में मेरा नाम भी है या नही ?"

राममोहन ने हँसकर कहा, "तुम्हे न भी बुलाता तो तुम कब माननेवाले हो !"

"तो वैसे तुम बुलाना नही चाहते क्यो ?"

राममोहन बोला, "हाँ भाई, तुम्हारा नाम तो उसमें होगा ही। आखिर एक विचारक के बिना पार्टी का मजा भी क्या ?"

शेफाली ने हँसकर कहा—"हाँ, यदि आपने प्राणनाथ बैरिस्टर को न बुलाया तो हम न आयँगे।"

इसी समय चाय आ गई। शेफाली ने बडे सत्कार से प्राणनाथ तथा राममोहन को चाय पिलाई। राममोहन चाय पीते-पीते बोला, "प्राणनाथ, मै एक बात पूछता हूँ। वकालत का पेशा क्या कम बोलने-वालो के लिए नही है ?"

प्राणनाथ चाय का प्याला नीचे रखकर वाक्-युद्ध की तैयारी के लिए सन्नद्ध वकील की तरह बोला, "सुनो राममोहन, वकालत बोलने का नाम ही तो है। वह वकील ही कैसा जिसे बोलना न आए। हम लोग ससार का कष्ट केवल वाणी के द्वारा दूर करते है, न्याय की प्रतिष्ठा करते है, झूठ और सच को दूध-पानी की तरह अलग करते है, सो केवल बोलकर ही तो, तर्क-सगत प्रतिभा से। और तुम सुनाओ जो चुपके-चुपके मुस्कराते हुए करोडो की सम्पत्ति हजम कर जाते हो—डकार भी नही लेते। सच पूछा जाय तो ससार मे सबसे भयकर व्यक्ति पूँजीवादी है। उसकी गहराई तक पहुँचना शायद विष्णु के बस की बात भी नही है। उसका पेट पाताल से गहरा है—समुद्र-सा अगाध, जिसमें असख्यो गरीबी से पिसने वाले जीव कुलबुलाते रहते है। तुम्हारी निन्दा या करतूतो का स्तोत्र तो शेषनाग भी शायद ही कर सके।"

राममोहन ने कहा, "तो क्या तुम समझते हो मै वैसा पूँजीवादी हूँ ?"

प्राणनाथ ने कहा, "साँप सब एक-से है, चाहे छोटे हो या बडे।"

इसी समय गिरधर भी किसी काम से आ गया। राममोहन ने सफाई देने की चेष्टा की; इसी बीच मे शेफाली ने कहा, आपको मालूम है हमारे गिरधर बाबू कवि है। कल आपने इनकी कविता सुनी होगी। मेरा दुर्भाग्य है, मै वह नही सुन सकी।"

शुभदा ने गिरधर की आँखो में हँसते हुए कहा, "गिरधर अच्छे

कवि ही नहीं हैं, गाते भी बहुत सुन्दर है ।"

गिरधर ने 'जीवन के अधूरे चित्र' नाम की कविता सुनाई । नवयुवक गिरधर की स्वर-माधुरी तथा भावो से विलास करने वाली शब्द-योजना पर सुननेवाले मुग्ध हो उठे । प्राणनाथ के लिए तो हिन्दी कविता नई चीज थी । वह अँग्रेजी कविता के गीत गाता रहता था । वह उसके सामने देश की कोई भी कविता श्रेष्ठ मानने को तैयार न था । गिरधर की कविता सुनकर वह चुप हो गया । राममोहन, शेफाली शुभदा ने उसकी कविता की भूरि-भूरि प्रशसा की । शेफाली तथा शुभदा की इच्छा थी कि गिरधर एक कविता और सुनाये कि इसी समय राममोहन ने प्राणनाथ से पूछा, "हिन्दी कविता के सम्बन्ध में तुम्हारा क्या विचार है प्राणनाथ ?"

प्राणनाथ ने उत्तर दिया, "सारी हिन्दी कविता के सम्बन्ध मे नही कह सकना । हाँ, इतना कह सकता हूँ कि गिरधर की कविता को जैसा मैं समझता हूँ उसके अनुसार यह द्वितीय श्रेणी के कवि भी अभी तक नही स्वीकार किये जा सकते । इनकी कविता पढे-लिखे मस्तिष्क और हृदय को प्रेरणा देती है । मुझे कविता सुनकर आनन्द आया । यूरोप में गाकर कविता पढने की प्रथा नही है, न वहाँ कवि-सम्मेलन-जैसी कोई चीज है । विशेष रूप से आमन्त्रित होकर केवल योग्य व्यक्तियो के सामने कवि कविता-पाठ करते है । मैने 'लैटर आफ एकेडेमी' मे यूरोप के प्रसिद्ध कवियो का कविता-पाठ सुना है । उसमे श्रोता को कितना आनन्द आता है ! वह सभा केवल सीमित लोगो की है । एच० जी० वेल्स, बर्नार्ड शॉ के भाषण भी मैने सुने है । ऐसे अवसर पर प्रैसो के प्रतिनिधि भी एकत्रित होते है ; वे रत्ती-रत्ती रिपोर्ट लेते है और दूसरे दिन समाचारपत्रो में आलोचना-प्रत्यालोचना के साथ उस कार्य-वाही का वर्णन रहता है । मुझे हिन्दी की कविता सुनकर नया अनुभव हुआ । मै मानने लगा हूँ कि भावो की दृष्टि से वह कविता सुन्दर है । एक बार मुझे 'न्यू-जर्स' के दल वाले कवि लेविस तथा मेकनीस से

भी मिलने का अवसर मिला है। उस दिन लन्दन की एक पार्टी मे मैं सम्मिलित हुआ था। वही एक सज्जन ने उनके सम्बन्ध में बताया। वहाँ नये युग का एक कवि 'आडेन' है। वह राजनीति और मनोविज्ञान दोनो का विश्लेषण कविता में करता है। आत्म-विश्लेषण की रहस्यात्मिका पद्धति पर वह नही चला है, जैसी कि हमारे यहाँ प्रथा है। उसने अपनी कविता मे युग की कटु अनुभूतियो का वर्णन किया है।"

राममोहन उठने के लिए आतुर था किन्तु प्राणनाथ के व्याख्यान से रुक गया। अन्त में जब उससे न रहा गया तो बोला—"बस, बस, रहने दो प्राणनाथ, मैने जो-कुछ प्रारम्भ में तुम्हारे सम्बन्ध मे कहा था, शेफाली जी इसका प्रमाण है कि वह झूठ नही सिद्ध हुआ।" इसके साथ ही वह हँस पडा।

प्राणनाथ उस समय भी व्याख्यान झाड रहा था। वह उस समय बहुत गम्भीर होकर बोल रहा था। राममोहन की बात सुनकर बोला, "चाय पीकर प्रेरणा प्राप्त हुई है, उसका प्रतिदान कर रहा हूँ राममोहन, अच्छा चलो। तुम यहाँ बैठने न दोगे। व्यापारी की बुद्धि हमेशा सक्षेप तथा मतलब की बात मे रहती है।" इतना कहकर दोनो उठ खडे हुए। शेफाली ने धन्यवाद देकर उन्हे दरवाजे तक पहुँचा दिया।

गिरधर भी थोडी देर बैठकर चला गया। शुभदा ने अपने कमरे में जाकर पढना प्रारम्भ कर दिया।

शेफाली राममोहन तथा प्राणनाथ के सम्बन्ध मे सोचने लगी। यह प्राणनाथ कितना सुन्दर और कितना बहुज्ञ है—हवा की तरह प्राण देने वाला। क्या इसे किसी बात का अभाव नही है ? सन्तुलित अवस्था का नाम जीवन है। शरीर की रसग्राहिणी शक्तियो का अपने-अपने कार्य को पूरा करते जाना उसकी स्थिरता है। फिर वासना या सेक्स-तृष्णा को भी उसका आहार देना क्या उचित नही है ? यह जीवन सभी ओर से तो रस लेता है। केवल अन्न, केवल पानी, केवल हवा या आग से जैसे काम नही चल सकता इसी प्रकार क्या यौवन भी एक

प्यास नही है ? प्यास, भूख···प्राणनाथ, राममोहन, पुरुष, स्त्री··· कितना सुन्दर स्वप्न है जीवन का स्वप्न ! परन्तु मैने तो अपना जीवन रोगियो की सेवा को दे रखा है न ? उस सेवा-भावना से क्या मेरा काम नही चल सकता ? अवश्य मानसिक प्रेरणाओ को एकाग्र करके एक तरफ लगा देने से शरीर के स्वास्थ्य को स्थिर रखा जा सकता है। विवेकानन्द, परमहस, दयानन्द आजीवन ब्रह्मचारी रहकर यदि स्वस्थ रह सकते है तो कोई कारण नही कि मै अपने उद्देश्य की एकाग्रता में लीन रहकर सेक्स की भूख को न भूल जाऊँ। राममोहन ? राममोहन का विचार आते ही शेफाली का हृदय विरक्ति से भर उठा। वह इससे अधिक कुछ न सोच सकी। कमरे के बाहर छज्जे पर टहलने लगी। उस समय रात के दस-ग्यारह का समय होगा। आकाश के एक कोने से चन्द्रोदय हो रहा था। शायद उस दिन पचमी या छठ थी, चन्द्र के उदय के कारण नीले आकाश का यह कोना जगमगा उठा था, आशा की किरण की तरह। उसे दिखाई दिया कि इतना सुन्दर होते हुए भी यह चन्द्रमा अपनी धवलिमा मे अन्धकार का चिह्न, लाँछन ढोता रहता है। हमारे सूर्य मे भी अनन्त गड्ढे हो गए है। पहाडो मे गुफाएँ है, फूलो मे कीट है, जहाँ सरिताओ मे स्फुटिक-स्वच्छ जल है वहाँ उनकी तहो में किरकिरा देने वाली बालू रेत भी है। इन पत्थर और ईटो के मकानो मे मनुष्य नामक प्राणी रहता है, जिसमें अनन्त विकृतियों का ढेर है। उसका ध्यान सामने के परिवार की ओर गया। उस छोटे-से मकान में पशुओ की तरह बच्चे रहते है। उनके माता-पिता बच्चो के जीवन की गाडी ढोने वाले दो बैलो की तरह है, जिनके पास कोई सुख का साधन नही है। स्त्री प्रतिवर्ष एक बच्चा देती है। पालने की क्षमता नही है, फिर भी बच्चे होते जाते हैं। लालन-पालन, शिक्षा-सस्कारों के अभाव मे भी ये दयनीय दम्पति सन्तान पैदा करते हुए मानो विवश हैं। पिछले दिनो मुझे बुलाने के लिए इनके पास फीस नहीं थी, इसलिए मुझे न बुला सके, किन्तु मै स्वय गई और बिना फीस लिये मैंने

चिकित्सा की। मुझे इस काम से कितनी प्रसन्नता हुई ! क्या यह वास्तविक सुख नही है ?

उसने सुना कि दम्पति मे झगड़ा हो रहा है। स्वर की कठोरता, बातो का घनापन बढता जा रहा है। शेफाली ने और पास खडे होकर सुनने का यत्न किया, किन्तु कोई बात साफ सुनाई नही दी, केवल कभी-कभी कोई वाक्य तेजी से बोलने पर सुनाई दे जाता। उस एकान्त रात मे सुनसान होते हुए भी, क्रमश कुछ भी सुनाई नही दे रहा था। थोडी देर मे ही उसने जाना कि पडोसी अपनी स्त्री को पीट रहा है। स्त्री मार खाकर भी चुप है। इसी बीच मे बच्चे के रोने की आवाज सुनाई देने लगी। पुरुष ने उन बच्चो मे बडी लडकी को भी मारा। वह पिटती और जोर-जोर से रोती जाती थी। शेफाली से यह सब न देखा गया। वह विवश होकर मकान से उतरी और उस मकान मे गई। मकान शेफाली के पीछे की गली मे था—तंग और गन्दा। उसके दरवाजा खटखटाते ही पडोसी नीचे उतर आया। सब लोग चुप हो गए।

शेफाली को देखकर उसे आश्चर्य हुआ। वह उसे जानता था। वह जानता था कि वह लेडी-डाक्टर हैं। बिना फीस लिये डाक्टर लोग कही नही जाते, किन्तु शेफाली के सम्बन्ध मे यह बात न थी। वह एकबार उसके घर बिना फीस लिये भी देखने आई थी। फिर भी इस अवस्था मे उसके आने का वह किसी प्रकार भी स्वागत नही कर सकता था। उसके बाल बिखरे हुए थे। वह एक फटी हुई मैली बण्डी तथा घुटने तक का जाँघिया पहने था। उसने शेफाली को देखते ही प्रभाव या विवशता से पूछा, "कहिए, क्या बात है ?"

शेफाली जितनी तेजी से उधर आई थी, उससे उसने यह नही सोचा था कि वह वहाँ क्या करने जा रही है। वह स्वाभाविक रूप से दयार्द्र होकर उन्हे कष्ट से बचाने आई थी। यदि आवश्यकता पडती तो आर्थिक सहायता के लिए भी वह तैयार थी, किन्तु उस व्यक्ति के इतना पूछने पर वह भूल गई कि उसे इसका क्या उत्तर देना चाहिए। फिर भी उसे

कुछ तो करना ही होगा, कुछ तो उत्तर देना ही होगा। इसी से वह बोली, "क्या तुम्हारे घर कोई कष्ट में है? बडे जोर-जोर से आवाज आ रही थी। यदि मेरी सेवा की आवश्यकता हो तो तैयार हूं।"

पडोसी ने कहा, "ऐसी तो कोई बात नही है।"

इतने मे उसकी स्त्री आ गई। शेफाली को देखते ही उसने प्रणाम किया और बोली, "आइए डाक्टर साहब, अन्दर आ जाइए।"

लेडी डाक्टर अन्दर चली गई। उसने अन्दर जाकर जो देखा उससे उसके रोंगटे खडे हो गए। लडकी एक तरफ पड़ी सिसक रही थी। शेष बच्चे चुपचाप पडे थे। एक फटी दरी पर मामूली कम्बल मे बच्चे पडे थे। चिल्लाने तथा लडाई के कारण गोद का बच्चा जाग गया था। स्त्री उसे गोद मे लिये थी।

शेफाली से न रहा गया। उसने कहा, "मुझे आपके घर में इस समय आने का कोई अधिकार नही है, किन्तु आप दोनो की लडाई तथा इस बच्ची का रोना सुनकर मुझसे न रहा गया, इसी से मै आ गई हूँ।"

दम्पति चुप थे। वे क्या उत्तर देते? उन्हे लेडी डाक्टर को देखकर सकोच हो रहा था कि वे उसे बैठाएँ कहाँ?

इसी बीच मे उसकी पत्नी बोली, "बहनजी, ऐसी तो कोई बात नही है। शायद आपको मालूम हुआ कि लडाई हो रही है। वैसे ही बच्चो की शरारत पर ये चिल्ला रहे थे।"

शेफाली क्या उत्तर देती! बिना कुछ कहे वह घर के चारो ओर दृष्टि डालकर लौट आई।

सबेरे उसने उन बच्चो की माँ को बुला भेजा। उसके हाथ में सौ रुपये देते हुए कहा, "मालूम होता है तुम्हारे पति बेकार है। यह घर

के खर्च के लिए है ।" इतना कहकर वह मरीज को देखने वाले कमरे में चली गई ।

हीरादेई पहले हिचकिचाई । वह 'बहनजी,' कहती हुई आगे चला भी कि इसी समय शेफाली ने लौटकर कहा, "इस समय जाओ, फिर बात करूँगी ।"

हीरादेई चुपचाप बहुत देर तक खडी रही, फिर घर लौट आई ।

रात के ममय शुभदा के अपने कमरे मे वले जाने पर शेफाली फिर उस पडोसी के घर पहुँची और जाकर उसकी पत्नी से कहा, "इन लड-कियो को पढने भेजो । मै इनकी पढाई का खर्च दूँगी ।" इसके साथ ही उसने हर-एक बच्चे से प्रेम-भरी बाते की और बोली, "इन बच्चो के कपड़े सिलवाओ । जितनी और आवश्यकता होगी मै दूँगी ।"

हीरादेई एकदम रोकर शेफाली के पैरो पर गिर पडी । शेफाली ने उसे उठाते हुए कहा, "मै तुम्हारी बहन हूँ, जिस चीज की आवश्यकता हो, मुझसे कहना ।" कुछ इधर-उधर की बाते करके वह चली आई ।

इसी समय दरवाजे पर प्राणनाथ मिल गया । बोला, "शायद इतनी रात को आपके पास आना अनुचित है । फिर भी जी न माना । इधर से गुजर रहा था, सोचा मिल लू । आपको कोई ऐतराज तो नही है ?"

शेफाली ने बाहर से झिझकते हुए कहा, "एतराज किस बात का प्राणनाथ बाबू, आइये न ! प्राणनाथ के भीतर आते ही शुभदा अपने कमरे से उठकर शेफाली के पास आ बैठी ।

प्राणनाथ बोला—"राममोहन के ऊपर चोर-बाजार में ज्यादा दाम लेकर सामान बेचने का मुकदमा चल रहा है । बडी दौड-धूप हो रही है । आज उसने मुझे भी अपना वकील बनाया है । ये लोग लूटने में डाकुओ से कम नही हैं । सरकार जितना ही कण्ट्रोल करती है उतना ही लोगो का कष्ट बढता है और उतना ही व्यापारियो को कमाने का अवसर मिलता है ।"

शुभदा पूछ बैठी, "तो फिर आप क्यो बेईमानो को बचाने पर तुले हुए है ? आपको तो सोच-समझकर केस हाथ मे लेना चाहिए । इसका स्पष्ट अर्थ यह है कि आपका कोई सिद्धान्त नही है । केवल रुपया कमाना ही उद्देश्य है चाहे जैसे मिले ।"

प्राणनाथ ने उत्तर दिया, "शुभदा, मेरे सामने यह प्रश्न नही है कि मेरा क्लाइण्ट कैसा है, वह कितना ईमानदार है । मेरे सामने तो अपनी वकालत का प्रश्न है । इधर वकालत करते मुझे छः मास से ऊपर हो गए, मै अभी तक अपना खर्च भी नही निकाल पा रहा हूँ । उसी वकील या बैरिस्टर की समाज मे प्रतिष्ठा है, जो खूब कमाता है । जिसके पास बहुत से केसेज आते है; जो झूठ को सच बनाकर अपने मुवक्किल को जिता दे । भूखो मरने वाले योग्य से योग्य वकील को कोई भी नहीं पूछता, यहाँ तक कि जज भी नही । समाज मे तो वह एक बेकार-सा आदमी है ।"

शुभदा बोली, "तो इसका यह अर्थ हुआ कि आपके सामने धर्म-अधर्म कुछ नही है ?"

प्राणनाथ इस प्रश्न के लिए तैयार ही बैठा था । कहने लगा, "हमें पहले यह देखना होगा कि धर्म क्या है, अधर्म क्या है ? वैसे मै धर्म-अधर्म कुछ भी नही मानता । फिर भी आपके सामने एक वकील की हैसियत से बहस करने को तैयार हूँ । धर्म-अधर्म अपेक्षाकृत चीजें हैं । जिसको एक व्यक्ति धर्म मानता है दूसरा उसे धर्म नही मानता । मनुष्य को मारना आपकी दृष्टि में अधर्म है, किन्तु युद्ध मे उसी व्यक्ति को मारना धर्म कहा जा सकता है । सबल व्यक्ति कानून बनाकर धर्म को अधर्म और अधर्म को धर्म बना देता है । हिटलर ने अपने सिद्धान्त-विरोधी प्रत्येक व्यक्ति को मार देना, उसे पीडित करना, धर्म बना रखा था । इसी तरह कम्यूनिस्ट अपने विरोधी को मार देने में कोई पाप नही समझता । वह ईश्वर को मानने वाले दकियानूसी विचार के प्रत्येक व्यक्ति को अपना शत्रु समझता है । उसे मार देने में उसे कोई आपत्ति

नही है।"

शेफाली ने कहा, "ये तो राष्ट्र में किसी व्यक्ति या दल के सबल होने पर बनाये गए अपने सिद्धान्त के अनुसार समाज का निर्माण करने वाले लोगो की बातें है। साधारणतया, सामान्य अवस्था मे तो हमें धर्म-अधर्म को उसी रूप मे स्वीकार करना होगा। उस अवस्था मे धर्म का तो एक ही रूप होगा न? मान लीजिए, एक व्यक्ति चोर-बाजार के द्वारा अधिक लाभ उठाकर लोगो को उत्पीडित करता है, अपने स्वार्थ के लिए जरूरतमन्द लोगो को सामान न देकर उन्हे देता है जिनके पास पैसा है। उसके इस कार्य से हजारो व्यक्ति भूखो मरते है तो क्या उसका यह काम किसी भी अवस्था में धर्म है?"

प्राणनाथ ने कहा, "आप ठीक कहती है। हमें देखना चाहिए इस चोर-बाजार की क्रिया का प्रारम्भ कहाँ से होता है। आपको मालूम है, भारतवर्ष मे इतना अन्न उत्पन्न होता है कि वह अपना ही नही दूसरे देशो का भी पेट भर सकता है? स्पष्ट है कि इस युद्ध में सरकार हमारी इच्छा के विरुद्ध लोगो को सेना मे भरती करके ले जा रही है। जो अन्न होता है वह भी पूर्णरूप से हमारे गुजारे को न छोडकर सब फौजो के लिए ले जा रही है। तो क्या आपकी दृष्टि में सरकार का वह अन्न, जिस पर हमारा अधिकार है, हससे छीन ले जाना न्याय है? जब सरकार ही हमारे साथ न्याय नही करना चाहती और हमको लूट रही हैं तो ये छोटे-छोटे व्यापारी जो हमको लूट रहे हैं, उनमें कौन लूटने वाला बडा है? आप कहेगी कि सरकार इन व्यापारियों के द्वारा हमें अधिक लूट रही है। अब और सुनिए। कष्ट है केवल गरीबो को; अमीरो तथा अधिकारियो को कोई कष्ट नही है। अमीर अधिक से अधिक रुपया खर्च करके सामग्री प्राप्त कर लेते है; अफसर अपने प्रभाव से प्राप्त कर लेते है। यहाँ तक कि जिन लोगो ने कण्ट्रोल चलाया है वे भी उसके लाभ में सम्मिलित है; उनके भी हिस्से है। यदि व्यापारी उन्हें उनका पूरा शेयर नहीं देते तो वे व्यापार करने से वञ्चित कर दिए

जाते है। फिर आप बताइए, क्या सरकार स्वय अप्रत्यक्ष रूप से व्यापारियो को चोर-बाजार के लिए प्रोत्साहित नही करती ? बात यह है, जैसे सरकार लोगो की आँखो मे धूल झोककर फौजो के लिए अन्न, कपडा रुपया, सग्रह कर रही है, इसी तरह कर्मचारी भी व्यापारियो को दबाकर अपना पेट भर रहे है। व्यापारी इधर गरीबो का पेट काट-काटकर अपनी थैली मे कमी नही होने देते। सबका बोझ पडता है गरीबो पर। अब दोषी कौन है—व्यापारी या सरकार ? वैसे तो इस लडाई से, यह कहना होगा, 'मॉरल' सबका गिर गया है—सरकार, अधिकारी, व्यापारी तथा गरीबो का, सबका। जिस देश मे लोग आचारहीन हो जाते है उस देश की यही अवस्था होती है। बडे को लूटते देखकर छोटे भी लूट मचाने लगते है, इसलिए केवल व्यापारी ही दोषी नही है। जो न्याय का ढोग रचते है वे भी उतने ही दोषी है। इसके साथ ही जनसख्या की वृद्धि, अन्न की कम उपज, ऊपर से आचारहीनता, आपा-धापी—ये सब चीजे है जिनके कारण सारा देश दुर्दशाग्रस्त और चोर-बाजारी का शिकार बन गया है।"

"पर यह कहाँ सिद्ध हो गया कि आपका चोर-बाजारी करने वालों को सहायता देना ठीक है," शुभदा पूछ बैठी।

"तो मै क्या करूँ, भूखो मरूँ, या आत्महत्या कर लूँ ? कहिए।"

शुभदा इतनी दूर तक जाने को तैयार न थी, इसलिए चुप हो गई। यद्यपि सन्तोष उसे नही हुआ था, फिर भी वह बोली, "सच है, गडबड सभी जगह है।"

शेफाली ने कहा, "इसका उत्तर तो प्राणनाथ बाबू ने दे दिया कि जब ऊपर से नीचे तक अधर्म ही अधर्म है तो व्यापारी क्या करे ? उसे भी मजबूर होकर यही करना पडता है जो वह कर रहा है। सभी तो जीना चाहते हैं 'वेस्टेड इण्टरेस्ट' या निहित स्वार्थ ही इस बुराई की जड है। तो क्या प्राणनाथ बाबू, राममोहन इस अभियोग से बरी हो जायँगे ?"

प्राणनाथ ने कहा, "नि सन्देह ! यह तो उनके रुपये पर निर्भर है जो बडे से बडे को उसकी तरफ फैसला करने को बाध्य कर देगा। उसके रुपये की शक्ति से हाईकोर्ट के बडे से बडे वकील का दिमाग उसके पाप को पुण्य सिद्ध करेगा। आप देखेगी, राममोहन का बाल भी बाँका न होगा।"

शुभदा बोली, "किन्तु वह मेरी दृष्टि मे तो · "

प्राणनाथ ने इसका कोई उत्तर नही दिया और बोला, "खैर जाने दीजिए, मै भी इसे अधर्म ही मानता हूँ। पर क्या करूँ ? और इन सबका एकमात्र उपाय है हमारे आर्थिक ढाँचे का पुनर्गठन। यही एक-मात्र इस कष्ट का उपाय है।"

दूसरे दिन इच्छा न होते हुए भी शुभदा के साथ शेफाली राममोहन के घर गई। और शुभदा तो प्राणनाथ से राममोहन के चोर-बाजार के द्वारा रुपया कमाने की बात सुनकर आने के लिए तैयार ही नही थी। उसने चलने से पूर्व इसका घोर विरोध किया। उसने कहा—"दीदी, क्या तुम ऐसे व्यक्ति के यहाँ जाना पसन्द करती हो जिसने हजारो गरीबो का खून चूसकर रुपया कमाया है। उसे याद आ रहा था कि बगाल को भूखा मारने में इन्ही लोगो का हाथ था, जो बगाल सभ्यता, सस्कृति, विद्या-बुद्धि का केन्द्र युग-युगान्त से चला आ रहा था उसी के लोगो को वहाँ के इन चोरो ने भूखा मार डाला। पशु-पक्षियो और कीडो की तरह उन्हे विवश होकर प्राण देने पडे"। शुभदा कहते-कहते एकदम रो पडी।

शेफाली ने प्यार करते हुए अपने हाथो से उसके आँसू पोछे, तथा बहुत समझाने-बुझाने के बाद वह जाने के लिए तैयार हुई।

जिस समय ये दोनो राममोहन के घर पहुँची उस समय दरवाजे पर ही साधना मिली। साधना ने दोनो को आते देख आगे बढकर स्वागत किया। इसी समय राममोहन भी आ गया। उसने हाथ जोडकर दोनों को नमस्कार किया। जिस कमरे में बैठने का प्रबन्ध था वह काफी

*सजाया गया था। कुछ और व्यक्ति वहाँ बैठे हुए थे। शेफाली और शुभदा को साधना ने ले जाकर कुछ अन्य स्त्रियो के पास बिठा दिया। वे सब स्त्रियाँ एक से एक सुन्दर कीमती कपडो तथा साडियो से सुसज्जित थी। प्राय सभी के मुँह पाउडर से रगे थे, होठो पर लिपस्टिक तथा नाखूनो पर नेल पेट था। कुछ के नाखून शोभा के तौर बढे हुए थे। साधना ने शेफाली और शुभदा का परिचय कराया और वे दोनो बैठ गई। यथासमय प्राणनाथ भी आ गया।

सब मिलकर कुल दस-बारह पुरुष थे और इतनी ही स्त्रियाँ। पुरुषो मे अधिकतर व्यापारी वर्ग था, कुछ बिलकुल अपटुडेट भी। दो बूढे गाव तकियो का सहारा लिये आपस मे धीरे-धीरे बातें कर रहे थे। एक व्यक्ति अपनी पतलून की क्रीज ही बार-बार सँभाल रहा था। मालूम होता था, उसे वहाँ बैठने से अधिक अपने कपडो की चिन्ता है। प्राणनाथ के पास एक और व्यक्ति बैठा था, जिसकी सफेद दाढी, भरा-पूरा मुख और सिर के बाल काफी लम्बे थे। वह राम-नामी चादर ओढ रहा था। मालूम होता था या तो वह किसी मन्दिर का पुजारी है या साधु। वह पालथी मारे, ध्यान लगाये हुए था। गाव तकिए के सहारे बैठे दो सेठ कह रहे थे, "व्यापार कोई क्या खाकर करेगा ? सबका राशन है, सब पर कण्ट्रोल है। सरकार ने कोई चीज तो हम लोगो के लिए नही छोडी। घी डालते हाथ जलता है।"

दूसरा बोला, "वह व्यापारी ही किस काम का जो धोका खा जाय! हम तो पत्थर को सोना बनाकर भी पैसा कमाएँगे। सरकार डाल-डाल चलती है, हम पात-पात चलेगे। मेरे ऊपर मुकदमा चलाकर सरकार ने क्या ले लिया ! तीन लाख कमाया, एक लाख से अधिकारियो का मुँह बन्द कर दिया, दो लाख का फायदा ही सही, न सही तीन लाख। अफसर मान गए कि कोई है।"

पहले ने यह सुनकर कहा, "हाँ, सो तो ठीक ही है।"

प्राणनाथ इसके साथ ही बोल उठा, "काम वह है जो सफलता-

पूर्वक हो जाय। चोर उस समय तक चोर नही है जब तक वह पकडा नही जाता। कुछ लोग स्वार्थ सिद्ध करने के लिए धर्म की आड लेते है, कुछ असफल होने पर धर्म की दुहाई देते है। सचाई से दोनो परे हैं। ईमानदारी समाज के आदान-प्रदान की सफलता का नाम है जिस पर वह स्थिर रहता है। बहुत लोग जिसको सत्य समझते है वह सत्य है, जिसको झूठ समझते है वह झूठ है। एक झूठ दूसरी जगह जाकर सत्य बन जाता है ; वही अपने स्थान मे झूठ है।" प्राणनाथ ने दार्शनिक की तरह निर्भय होकर ये बाते कह डाली।

व्यापारियो ने उसकी बात समझी ही नही, इसलिए वे चुप रह गए। बार-बार पतलून की क्रीज सँभालने वाले नवयुवक ने, जिसका नाम दुर्गाकिशन था, प्राणनाथ की तरफ मुडकर कहा, "यह तो 'यूटो-लिटेरियनिज्म' का अधूरा सिद्धान्त है, जिसके बल पर आप बहुमत को प्रधानता दे रहे है। 'बहुजन-हिताय' का सिद्धान्त सब जगह ठीक नही है। वहाँ भी हमें विवेक के साथ बहुजन-हित को प्रधानता देनी होगी।"

प्राणनाथ उस नवयुवक की बातो का उत्तर देने के लिए जा ही रहा था कि कुछ सम्भ्रान्त नागरिक आ गए। उनके साथ स्त्रियाँ भी थीं। एक वृद्ध थे, जो खास ढग की पगडी बाँधे तथा रेशमी चोगा पहने थे। उनके साथ एक नवयुवक था जो उसी वेश में था। उन दोनो के पीछे एक काला-सा व्यक्ति तोद फुलाए अचकन की दोनों जेबो में घडी की सोने की जजीर डाले पगडी बाँधे आया। एक और व्यक्ति था, जो वैसी ही वेशभूषा मे था, परन्तु उसके माथे पर लम्बा तिलक था। मालूम होता था रामानुज सम्प्रदाय का व्यक्ति है।

राममोहन ने सबको शिष्टाचार के साथ बिठाते हुए एक-एक का परिचय देना प्रारम्भ किया। जो दोनो गाव तकिए का सहारा लिये हुए थे, उनमें से एक के सम्बन्ध में कहा, "ये हमारे नगर के प्रसिद्ध धनी हैं—सेठ रामकुमार। ये सेठ बनवारीलाल, आपके यहाँ लाखो रुपये के

लेन-देन का काम होता है। इनके साथ के सेठ रामप्रसाद नगर के प्रसिद्ध ठेकेदार, आपने सरकार को युद्ध में एक लाख की सहायता दी थी।" क्रीज वाले नवयुवक की ओर सकेत करते हुए कहा, "ये है राय-बहादुर रामकिशन के लडके दुर्गाकिशन। यहाँ के प्रसिद्ध बैंकर है। ये है महन्त गगागिरि। इन्होने प्रतिज्ञा की है कि एक हजार मन्दिर बनवाने के बाद दाढी बनवाएँगे, इसीलिए आप इनकी दाढी बढी हुई देख रहे है। नवागन्तुको मे से ये मेरे मान्य सेठ राधाकिशन। आप नगर के सम्मान्य व्यक्ति है। आपका सरकार तथा जनता मे सम्मान है। ये है इनके सुपुत्र दयाकिशन। ये रायबहादुर हीरालाल। ये एडवोकेट ताराचन्द, नगर के प्रसिद्ध वकील। ये मेरे मित्र बैरिस्टर प्राणनाथ।" इसके बाद स्त्रियो की ओर सकेत करके राममोहन ने बताया, "ये डा० शेफाली है, एम० बी० बी० एस०।"

सबने एक-दूसरे का अभिवादन किया और यथास्थान बैठ गए। कुछ देर तक चुप्पी रही, इसी समय महन्त गगागिरि ने कहा, "मन्दिर, मै नही, भगवान् स्वय बनवा रहे है। इन धनिको को प्रेरित कर देते है और ये बना डालते है। मै तुच्छातितुच्छ व्यक्ति हूँ—निमित्तमात्र। हरि ओम्, हरि ओम्।"

रामकुमार ने कहा, "धनी तो पहले भी थे, किन्तु प्रेरित करने वाला न होने से यह काम नही हुआ था। साक्षात् भगवद्भक्त है महन्तजी। इन्होने सनातन धर्म के उद्धार का बीडा उठाया है। अब तक तीन सौ नये मन्दिर बन चुके है। भगवान् की कृपा है।"

ठेकेदार रामप्रसाद ने पूछा, "पीपल वाले मन्दिर के लिए चूना तो आपको मिल ही गया होगा। कमी रह जाय तो मुझसे कहिएगा महन्त-जी, सरकारी काम के लिए जो आता है, उसी में से भिजवा दूँगा।"

महन्तजी ने उत्तर दिया, "आपकी कृपा है आत्मन्! इधर बीस मन्दिरो की नीव अगले चार मास तक रखी जाने के लिए भक्तो को तैयार कर लिया है। दो तो आपके सेठ साहब के है। एक सेठ

हीरालाल का है। सत्रह मन्दिरो के लिए मैने दूसरे नगरो में भक्तो को तैयार किया है। हरि ओम्, हरि ओम् !"

दुर्गाकिशन ने बीच में ही बात काटकर कहा, "बाबूजी, अपनी नई कोठी मे एक मन्दिर की बात कह रहे थे। कदाचित् आपकी ही प्रेरणा से।"

महन्त थोडी देर चुप रहकर बोले, "दुर्गाकिशन बेटा, धर्म का काम तो तुम्ही लोगो के ऊपर निर्भर है न ? आखिर धर्म के जो तीन पैर कट गए है वह एक पैर इन्ही दानवीरो पर तो टिका हुआ है। हरि ओम्, हरि ओम् ! तू ही है परमात्मन् !"

प्राणनाथ को इन लोगो की बातो में कोई रस नही मिल रहा था। उसके प्राण भीतर-भीतर कुसमुसा रहे थे।

इसी समय दीवान बहादुर ने कहा, "आप ठीक कहते है महाराज, सचमुच धर्म के तीन पैर कट गए है। मेरा विचार है, इन मन्दिरो मे नित्य-प्रति दो-तीन घण्टे कीर्तन की व्यवस्था भी हो जाय तो जनता का बहुत कल्याण हो।"

महन्त ने कहा, "मै यह भी सोचता हूँ दीवान साहब, मैने निश्चय किया है कि नित्य-प्रति कथा तथा कीर्तन अवश्य हो। धर्म का तो तुम समझो बिलकुल ह्रास होता जा रहा है। लोग आचरणभ्रष्ट, कर्त्तव्य-भ्रष्ट हो गए है। न सध्या, न पूजा, न जप, न पाठ। होटलो में खाते है। अब एक और पख लगी है, इन अछूतो को मन्दिरो में जाने दो साहब ! भला पूछो इन मूर्खों से, अरे भाई, मन्दिरो में अछूत कैसे जा सकते है ? मै तो मर जाऊँगा, प्राण दे दूँगा, पर अछूतो को मन्दिरो में न जाने दूँगा।"

सब लोग एकदम बोल उठे, "धर्म का नाश हो रहा है महन्तजी, आप-जैसे ही इसकी रक्षा कर सकते हैं महाराज !"

महन्तजी ने कहा, "तुम्हारे जैसे भक्त बने रहे तो धर्म का नाश नही होगा। अरे भाई राममोहन, कितनी देर है ? कुछ खीर-खार भी

है या यूँ ही पूडी खिलाकर टाल देगा।"

राममोहन ने हाथ जोडकर कहा, "सब-कुछ है महाराज !"

"एक मन्दिर तुझे भी बनवाना होगा। प्रतिज्ञा कर तभी मै भोजन करूँगा, सुना ? तूने भगवान् की दया से बहुत रुपया कमाया है। दो-तीन लाख तो होगा ही।"

रामप्रसाद ठेकेदार ने तत्काल उत्तर दिया, "दो-तीन लाख ! दस की बात करो। राममोहन नगर के धनियो मे है। फिर भी ग्राजकल है बडी मुश्किल। इन्ही सेठ हीरालाल को लो पिछली बौनी पाँच लाख की हुई है।"

हीरालाल ने मुस्कराकर सिर हिलाते हुए कहा, "दिया कितना जानते हो ? डेढ लाख—पूरा डेढ लाख। मैने कहा था यदि यह रुपया न देना पडा तो एक धर्मशाला और एक मन्दिर बनवाऊँगा।"

महन्त बोल उठा, "तो ग्रब भी क्या बिगडा है सेठजी, वह तो बनेगा ही।"

हीरालाल ने कहा, "हाँ, सो तो होगा ही, परन्तु कह रहा हूँ बच जाता तो मन्दिर के ही काम ग्राता। भगवान् के निमित्त ही तो लगता, परन्तु उन्हें यह मजूर ही न हुग्रा।"

सेठ राधाकिशन बोले, "शास्त्र में लिखा है, 'यदस्मदीय नहि तत्परेषाम्', जो हमारा है वह ग्रौर का नही हो सकता। शास्त्रो में विश्वास करो, धर्म से प्रेम करो, साधु-सन्त की सेवा करो, ब्राह्मण की पूजा करो। सुबह-शाम भगवान् का नाम लो, सब पाप धुल जायँगे।"

प्राणनाथ से जब उस घुटते हुए वातावरण में बैठे न रहा गया तो बोला, "नगर में एक प्रसूतिगृह की ग्रावश्यकता है। यदि धनी लोग उधर ध्यान दे तो जनता का बडा कल्याण हो।"

इस पर सब लोग चुप रहे। किसी ने भी प्राणनाथ की बात का न तो उत्तर ही दिया न उधर ध्यान ही दिया।

महन्त ने कुछ भी न कहकर एक बार जोर से कहा, "हरि ग्रोम्,

हरि ओम् !"

इसी समय मि० ब्रजेन्द्रनाथ ने कमरे मे प्रवेश किया—पुराने ढग के आदमी, पुरानी तेल से सनी फेल्ट कैप, गले से मैली कमीज से चिपटी हुई टाई जो न कोट से मैच कर रही थी न भीतर की वास्कट से ; कोट का रग खाकी और वास्कट काली , पतलून कत्थई ; देखकर मालूम होता था शायद इसकी क्रीज धोबी ने भी ठीक नही की थी ; होठ काले, दाढी बढी हुई, पान से दाँत लाल और मैल भरे हुए, उँगलियो मे सिगरेट दबी हुई । ब्रजेन्द्रनाथ को देखते ही प्राणनाथ ने उसका स्वागत किया । ताराचन्द ने फीकी हँसी हँसते हुए 'आइए' कहा और दूसरी तरफ मुँह फेर लिया। ब्रजेन्द्रनाथ प्राणनाथ के पास आ बैठा और सब उपस्थित धनी लोगो को सिगरेट के हाथ से एक-एक करके सलाम किया ।

सेठ राधाकिशन बोले, "वकील साहब, बहुत देर कर दी ।"

वकील ने खीसें निपोरकर उत्तर दिया, "ह-ह-ह, देर हो गई दीवान साहब, आपकी अपील की तो ता० २४ पडी है न?"

"हाँ, अभी-अभी मु शी ने बताया," परन्तु लोगो को अपनी तरफ देखते हुए जानकर रहस्य-भेद के डर से चुप हो गए ।

इसके बाद ब्रजेन्द्रनाथ ने ताराचन्द की ओर मुखातिब होकर कहा—"तो क्या मिण्टो रोड की मार-पीट के मामले मे तुम मुद्दई की तरफ से पेश हो रहे हो ? मुझे अभी-अभी खबर मिली है ।"

ताराचन्द ने स्वीकारोक्ति की और कहा—"क्या करता, मजबूर था । सुना है, तुम भी तो मुद्दालेह की तरफ से खड़े हो रहे हो ।"

"हाँ । सुनो ब्रजेन्द्रनाथ, जीतूँगा तो मै ही । चाहे कितना जोर लगा लो !"

"अरे जाओ । भूल गए उस ताडी वाले मुकदमे की बात ! यहाँ ऐसे-वैसे नही है । कच्ची गोलियाँ नही खेले !" ब्रजेन्द्रनाथ ने मूँछो पर ताव देकर कहा ; और इसके साथ ही उसने पुराने कई मुकद्दमो के

किस्से सुना डाले। ताराचन्द बीच-बीच मे छेड देता तो ब्रजेन्द्रनाथ भड़क उठता। बहुत देर तक यही चलता रहा।

इसी समय महन्त गगागिरि ने जोर से जम्हाई लेकर एक बार 'हरि ओम् परमात्मन्' कहा और चुटकी बजाई।

ब्रजेन्द्रनाथ ने कुछ भी ध्यान न दिया और ताराचन्द से बात करता रहा। राममोहन ने भोजन के लिए दूसरे कमरे मे जाने का आग्रह करते हुए कहा, "एक प्रसूतिगृह की तो सेठजी, नगर में बडी आवश्यकता है। मै बैरिस्टर प्राणनाथ की बात की तरफ आप सब लोगो का ध्यान दिलाना चाहता हूँ।"

हीरालाल बोला, "वैसे तो बरात के लिए भी शादी-घर का होना आवश्यक है। नगर मे जो दो-चार है वे मुहूरत के दिनो मे बिलकुल भर जाते है; लोगो को बडी तकलीफ होती है।"

रामकुमार ने कहा, "सेठ हीरालाल ने शादी-घर की जो बात कही वह ठीक है। पिछले दिनो मेरे भानजे की शादी थी। मैने चौधरी हरभजन से शादी-घर देने को कहा तो बोले, "वह तो उन दिनो एक आदमी को दिया जा चुका है।"

मैने कहा, "लालाजी, भानजे का शादी तो वही होगी, चाहे किसी ने भी लिया हो। रामकुमार की बात झूठ नही हो सकती।"

दूसरे पास बैठे हुए व्यक्ति ने कहा, "शादी-घर तो सेठजी आपने ले ही लिया। लेते क्यो न? रुपया हमारा लगा और दूसरे लोग मौज उडाएँ, यह कैसे हो सकता है! हमने शादी-घर क्या लफचकनो के लिए बनाया है?"

रामकुमार ने कहा, "चपरासी से चाबी लेकर ताला डलवा दिया। कर लो क्या करोगे? अपने-आप दस-पन्द्रह दिन घूम-फिरकर वह आदमी चला गया।" इसी प्रकार की बाते करते हुए सब लोग दूसरे कमरे में चले गए।

भोजन के बाद जब शेफाली शुभदा के साथ चलने लगी तो साधना

ने और ठहरने का आग्रह किया। शुभदा बोली, "इन अजब खोपडा के लोगो की बाते सुनकर मेरा तो सिर चकरा गया। क्या यही आपके यहाँ का भद्र समाज है। जैसे सब स्वार्थी मूर्ख जुड गए हो!"

शेफाली ने योग देते हुए कहा, "जैसे जीवन मे इनके लिए और कोई काम न हो। या तो व्यापार की बाते करेंगे या फिर थोथे धर्म का ढोल पीटेंगे। मै तो कहती हूँ, इसमे इनका दोष भी क्या है, न ऊँची शिक्षा इन्हे मिली है और न इनके सस्कार ही सभ्य समाज के योग्य हैं। प्रत्येक मनुष्य जैसे अपने को 'ज्ञान-वारिधि' समझता है। अब तो हम चलेगे साधना।"

शुभदा बोली, "न जाने किन मूर्खो को तुमने बुला बैठाया। सारा मजा किरकिरा कर दिया। न किसी को बात करने की तमीज, और न किसी बात का सलीका। यह है यहाँ का धनी-वर्ग, जिसमें राममोहन रहते है। इनके सामने एकमात्र उद्देश्य है अपना स्वार्थ सिद्ध करना। आज ताराचन्द और ब्रजेन्द्रनाथ की बाते सुनकर तो मुझे घृणा हो गई।"

राममोहन जो अपने धनी-वर्ग का प्रभाव डालने के लिए सबको विदा करके शेफाली और शुभदा की बाते सुन रहा था, एक दम अभिभूत-सा हो गया। आगे कुछ कहने की उसकी हिम्मत ही नही हुई। शुभदा ने फिर कहा, 'चलो जीजी, देर हो रही है।"

शेफाली का पडोसी जगन्नाथ प्रतिवर्ष नये बच्चे पैदा करके अभाव, अकाल, रोगो की वृद्धि में कुशल होते हुए भी कमाने की कला में उतना ही निकम्मा सिद्ध हुआ। कई जगह जाकर उसने नौकरी की, कई सेठों के द्वार खटखटाने के बाद भी लक्ष्मी का मुख देखने का उसे अवसर न मिला। प्राय. सब जगह से वह अयोग्य ठहराकर निकाला गया। ठीक

सिफारिश न मिलने पर सरकारी नौकरी उसे मिली नही। यद्यपि वह एण्ट्रेन्स पास था, फिर भी उसके भाग्य मे धक्के खाने लिखे थे, या उसने जान-बूझकर पच्चीस रुपये की डाकखाने की क्लर्की ठुकरा दी, यह बात उन दिनो उसने अपनी पत्नी को बताई, जब वह उससे सरकारी नौकरी करने का बराबर आग्रह करती रहती थी। जो आदमी उसे नौकरी दिलाने को तैयार था उसने कहा था, "नौकरी तो मै तुम्हे दिलवा दूँगा, किन्तु दो सौ रुपये रिश्वत देने होगे।" रिश्वत का नाम सुनकर पहले उसने सोचा कि कही से दो सौ रुपये माँगकर नौकरी प्राप्त कर ले। इस काम के लिए वह अपने पुराने हितू के पास गया, जिसने उसे शिक्षा मे सहायता दी थी, उसे सहायता देने का वचन भी दे दिया। पर रास्ते मे आते हुए जगन्नाथ के विवेक ने उसके हृदय को ग्लानि से भर दिया। वह सोचने लगा कि जिस नौकरी का प्रारम्भ इस तरह की रिश्वत से होता है क्या वैसी नौकरी उसे करनी चाहिए ? यही बात वह देर तक सोचता रहा। बाग के एक कोने मे बैठा वह इसी बात पर विचार करता रहा। अन्त मे उसने निश्चय किया कि ऐसी नौकरी वह नही करेगा, नही करेगा। किसी भी और व्यक्ति की नौकरी करके वह निर्वाह कर लेगा, परन्तु ऐसी सरकारी नौकरी करना उसकी शक्ति से बाहर है, जिसमे दो सौ रुपये पहले रिश्वत मे देने हो।

स्कूल की शिक्षा का प्रभाव उसके हृदय पर था, जिसमे अध्यापको ने बताया था—"न्याय की सब जगह विजय होती है।" स्वय कई बार वाद-विवाद में भाग लेकर उसने न्याय और धर्म के महत्त्व को ऊँचा सिद्ध किया था। उसने उन धनिको की अपेक्षा उन गरीबो के चरित्र को ऊँचा बताया था, जो अन्याय से रुपया पैदा करके धनी नही बनते हैं। यही सब सोचकर न तो वह उस व्यक्ति से मिला, जिसने नौकरी दिलाने का वचन दिया था और न वह दो सौ रुपये देने को तैयार अपने हितू के पास ही गया। जब उसने घर आकर अपनी नवोढा पत्नी को यह निश्चय सुनाया तो वह पहले तो झल्लाई परन्तु अन्त मे जगन्नाथ की ज्ञान-भरी

बाते समझ मे न आने पर चुप हो गई।

हीरादेई में पति के नौकरी न मिलने पर भी यौवन की न बुझने वाली प्यास जाग रही थी, जैसी कि प्रत्येक नवयुवती मे होती है। जगन्नाथ अपने विवेक के सहारे बहुत बडे पद पाने की उच्च आशा मे रात को पत्नी की गरम साँसो में शराब के नशे-सी बेसुधी पाकर झूम उठता और लगातार दिन में इधर-उधर घूमकर नौकरी की तलाश में असफल होता हुआ भी सृष्टि-वृद्धि के प्रयत्न मे असफल कभी नही रहा। दो सन्तानो तक तो उनके प्रेम मे कमी न आई। अभाव-पीडित रहते हुए भी वे दोनो रात्रि के अन्धकार मे भविष्य का उज्ज्वल प्रकाश देखा करते, जैसे प्रत्येक बच्चे की पैदाइश के साथ उनका भविष्य मे प्रकाशित हो उठने वाला भाग्य कही दूर प्रतीक्षा कर रहा हो। फिर भी एक बात अच्छी थी कि जो सात-आठ बच्चे हुए, उनमे केवल तीन ही जिन्दा रहे। दो बार तो जुडवाँ बच्चो ने जन्म लेकर हीरादेई को पागल बना डाला था। दिन मे कुतिया की तरह दोनो तरफ दो बच्चो को लिटाकर दूध पिलाती। उस समय एक पैरो की तरफ पडा रहता, बाकी जमीन पर पडे बच्चे चिल्लाते रहते। दिन में काम-काज मे लगी रहने पर भी रात को जगन्नाथ को देखती तो वह भूल जाती कि वह नरक मे पडी है। जगन्नाथ तो एक दम भूल जाता कि उसका ससार मे कोई भी दायित्व है, यद्यपि इसके बाद उसे ग्लानि कम नही होती थी। लुढकते हुए पत्थर की तरह वह कभी एक जगह तो कभी दूसरी जगह नौकरी करता। बराबर न्याय और विवेक के सम्बन्ध मे सोचने या दूसरे के धन के सामने विवश होकर हृदय को सान्त्वना देने के लिए विवेक और न्याय का ढिंढोरा पीटने की हलचल मे उसे उस स्थान से निकल जाना पडता। वह धीरे-धीरे धनिको का शत्रु भी हो चला। प्रत्येक धनी को वह बेईमान समझने लगा और प्रत्येक गरीब को उन्ही के द्वारा पीडित, ईमानदार। परन्तु बात दोनो ओर गलत थी। न तो प्रत्येक धनी बेईमान था और न प्रत्येक गरीब ईमानदार। वह एक प्रणाली थी, जिसमे दोनो ही

पिस रहे थे। नौकरी करते हुए उसने दीवान साहब के यहाँ प्रतिमास किराया उगाहने का काम किया। मकानो के अभाव मे किराये के अलावा पगडी के नाम से जो एक प्रकार की रिश्वत चल रही थी उसके लिए उसे ग्राहको को तैयार करना पडता। जो अधिक देता उसी को दुकान-मकान किराये पर मिलते। दो-दो तीन-तीन हजार पगडी दीवान ले लेते तब मकान या दुकान उन्हे दिये जाते। जगन्नाथ का मन भीतर ही भीतर इस काम का विरोध करता, क्योकि उस रुपये मे से उसे कुछ भी न मिलता था। केवल बडा मुशी भीतर ही भीतर खा जाता या मोटी रकम दीवान के घर जाती। उसे तो केवल गिने-चुने तीस रुपये ही मिलते। घर का खर्च अच्छी तरह न चलने पर भी बेईमानी या तथाकथित पगडी के लिए लोगो को उसे ही तैयार करना पडता। एक-दो बार जो कुछ भेट उसे प्राप्त भी हुई वह भी उसने झुँझलाहट मे आकर छोड दी। एक दिन बडे मुशी के साथ खटपट हो जाने पर उसे निकाल दिया गया। इसके बाद उसने सेठ हीरालाल, सेठ रामकुमार के यहाँ नौकरी की, किन्तु अस्थायित्व तथा दुर्भाग्य के सिवा उसके हाथ कुछ न आया।

अन्त मे एक दिन गृह-कलह तथा बच्चो की भूख से तग आकर उसने आत्महत्या की ठानी। परन्तु उसे जमुना में डूबने के लिए जाते समय एक व्यक्ति मिल गया, जिसने शाहदरे की मैच फैक्टरी में उसे पचास रुपये की क्लर्की देने का विश्वास दिलाया और उस दिन दोपहर को वह पचास रुपये का नौकर हो गया। जगन्नाथ के घर छोडने के बाद हीरादेई स्वय बहुत दुखी हुई, अपने को उसने बुरी तरह कोसा, अपनी जीभ को उसी जीभ से गालियाँ दी। क्रोध में आकर सिर, छाती पीट डाले। बच्चो को बहुत बुरा-भला कहा। उनके पेट को भर-पेट कोसा। जगन्नाथ के न लौटने का ध्यान आते ही बहुत व्यग्र हो उठी। इधर-उधर उसने गली से बाहर निकलकर उसकी तलाश की, परन्तु जगन्नाथ के जमुना में बहने की प्रतिज्ञा करने वाले प्राण उसे बाजार मे कही दिखाई न दिए। उसने पडोसियों के यहाँ, गली के बाहर साइकिल वाले

की दुकान पर जगन्नाथ को ढूँढा। सब जगह से निराश होकर लौटने पर उसे शैफाली ताँगे से उतरती मिली। हीरादेई शेफाली को देखकर चुपचाप पास आकर खडी हो गई। शेफाली ने उसे इस तरह व्यग्र पागल-सी बनी कभी नही देखा था। दवाइयो का बैग हाथ में लिये शेफाली ने प्रश्न-भरी दृष्टि से हीरादेई को देखा। वह कुछ देर खड़ी रहने के बाद 'बहनजी' कहकर रो पडी।

शेफाली ने उसकी अवस्था देख साथ-साथ घर आने को कहा। दोनों मकान के बाहर बरामदे मे आकर खडी हो गई। जगन्नाथ की पत्नी ने बताया—"वह सबेरे ही जमुना मे डूबने की प्रतिज्ञा करके गये है। मैं ढूँढते-ढूँढते पागल हो गई हूँ। हाय बहनजी, अब मै क्या करूँगी ?" इतना कहकर हीरादेई शेफाली के पैरो पर गिर पडी। शेफाली के घर रोगियो की भीड लगी थी। इधर हीरादेई की परिस्थिति ने उसे ठहरने को विवश कर दिया था। उसी समय गिरधर घर मे घुसता दिखाई पडा।

शेफाली गिरधर को बुलाकर हीरादेई की सहायता तथा जगन्नाथ की खोज-खबर लेने की बात कहकर बोली—"गिरधर, अभी ताँगा लेकर जमुना की तरफ जाओ और जगन्नाथ को ढूँढकर मेरे पास ले आओ। ये दस रुपये ले जाओ।" इतना कहकर दस रुपये का एक नोट उसने गिरधर के हाथ मे रख दिया।

गिरधर कालेज जाने की तैयारी में था। शायद शुभदा से कुछ कहने आया था कि उसे शेफाली का यह आदेश मिला। उसने कालेज जाने का विचार छोड़ जमुना की यात्रा की। किन्तु वहाँ कही भी उसे जगन्नाथ का चिह्न तक न मिला। दो-तीन घण्टे इधर-उधर भटककर वह लौट आया। उस दिन शेफाली ने अपने नौकर के द्वारा जगन्नाथ के घर खाना भिजवाया। दोपहर को उसके घर जाकर भी समझा-बुझाकर उसे भी खिलाया। हीरादेई तो उस दिन पागल-सी हो गई। शेफाली रोगियों को न देखने जाकर उस दिन उसी के पास बैठी रही। गिरधर और शुभदा भी हीरादेई के घर पर बैठे उसे समझाते रहे।

गिरधर को शेफाली ने दो-एक बार और भी अपने नौकरो के साथ जगन्नाथ को खोजने भेजा, किन्तु कही भी जगन्नाथ का पता न पाकर वे लोग लौट आये। जमुना पर एक व्यक्ति बराबर उसे ढूँढता रहा। मल्लाहो को भी आस-पास नाव लेकर खोजने भेजा गया था। इसी समय सायकाल के सात बजे जगन्नाथ घर आ गया। शेफाली ने जगन्नाथ को उसकी मूर्खता के लिए डॉटा। परन्तु जगन्नाथ से मैच फैक्टरी मे नौकरी का समाचार पाकर वह चुपचाप लौट आई। जगन्नाथ भी यथानियम रहने लगा।

एक दिन जगन्नाथ की नौकरी फिर छूट गई। यह उस समय मालूम हुआ जब वह फैक्टरी जाने का समय होने पर भी किताब पढता रहा। हीरादेई ने जब दफ्तर जाने की बात चलाई तब जगन्नाथ बोला, "जाऊँ कहॉ, नौकरी तो छूट गई है। अब मै नौकरी नही करूँगा। मैने नौकरी तथा नौकर रखने वालो की जड खोदने का काम ले लिया है।"

हीरादेई कुछ भी न समझ सकी। वही लम्बी आह भरकर दुर्भाग्य को कोसती काम मे लग गई। जगन्नाथ उस दिन बारह बजे दोपहर को गया और रात को नौ बजे के करीब घर लौटा। हीरादेई ने कुछ भी न कहा। इसी तरह दूसरे-तीसरे दिन भी हुआ। अब दोपहर को और कभी सबेरे उसे कुछ आदमी बुलाने आते और वह उनके साथ चला जाता। दूसरे दिन शेफाली रोगियो को देखकर जगन्नाथ के घर आई तो हीरादेई ने बताया कि नौकरी छूट गई है। न जाने अब क्या काम करते है। दस-ग्यारह बजे चले जाते हैं और रात गए लौटते है। कभी बैठे-बैठे किताबे पढते रहते है। कहते कुछ भी नही। शेफाली चुपचाप खडी रही। बच्चे पढने गये थे। गोद के बच्चे का हाल-चाल पूछकर शेफाली लौट आई। अब शेफाली नियमित रूप से बच्चो के पढाने का खर्च देने

लगी थी। कभी-कभी ऊपर का खर्च भी दे देती। शेफाली के पास ही कभी-कभी सरोज रात को रह जाती। इस तरह जगन्नाथ के घर का खर्च चलने लगा।

एक दिन प्रात काल ही शेफाली ने अपने नौकर के द्वारा जगन्नाथ को बुलवाया, किन्तु वह उस समय घर पर नही मिला। शाम को भी वह नही मिला। रात मे सरोज को शेफाली स्वय पढाती। उस रात को शेफाली आराम से बिस्तर पर लेटी हुई सरोज को पढा रही थी कि हीरा-देई आई और बोली—"वे घर आ गए है। मैने उनसे बहुत कहा, परन्तु न जाने क्यो वे आपके सामने आते घबराते है। बहनजी, मै तो इस जीवन से तग आ गई हूँ। ऐसे मालिक से तो मै रॉड होती तो अच्छा था।" कहने को तो हीरादेई ने जोश मे आकर यह बात कह डाली, किन्तु उसे लगा जैसे उसने बडा अपराध कर डाला है। उसकी आँखो में आँसू आ गए।

सरोज गरम चादर ओढे पढ़ रही थी। नलू पास ही बैठा एक तसवीर की किताब देख रहा था। सरोज की अवस्था दस वर्ष और नलू पाँच साल का था। शेफाली कुछ देर सोचकर हीरादेई के साथ चल पडी। जगन्नाथ शेफाली को देखकर घबरा गया।

शेफाली ने एक खाट के पाये पर बैठकर जगन्नाथ से कहना आरम्भ किया—"देखो, मैने तुम्हारी गरीबी देखकर तुम्हे सहायता दी है। यदि तुम नौकरी नही करोगे तो मै तुम्हे किसी प्रकार की सहायता नही दे सकती। तुम जवान आदमी हो तुम्हे काम करना चाहिए। यह क्या बात है कि तुम नौकरी नही कर सकते?" जगन्नाथ चुप रहा। शेफाली जगन्नाथ के उत्तर की प्रतीक्षा में रही। उसने फिर कहा—"बोलो, तुम क्या कहते हो? ऐसे कैसे काम चलेगा? तुम्हारी इतनी गृहस्थी है उसका तुम्हे पालन-पोषण करना चाहिए।"

जगन्नाथ ने कहा, "कहाँ करूँ काम? जहाँ नौकरी करने जाता हूँ वही खटपट हो जाने पर नौकरी छोडनी पडती है। फैक्टरी मे वेतन

बढाने का आन्दोलन चल रहा था, मै भी उसमें शामिल हो गया। मालिक ने कुछ और कार्यकर्त्ताओ के साथ मुझे भी निकाल दिया। मेरा मन मालिको की करतूत देखकर विद्रोह कर उठा है। मै कम्यूनिस्ट हो गया हूँ। अब पार्टी का काम कर रहा हूँ। मजदूरो को मालिको के विरुद्ध तैयार करना मेरा काम है।"

"परन्तु घर का काम कैसे चलेगा, गृहस्थी चलाना भी तो तुम्हारा काम है ?"

"इस को भी तो कुछ काम करना चाहिए। हमारी गृहस्थी उस समय चल सकती है जब यह भी कुछ काम करे," जगन्नाथ ने कहा।

"फिर तुम क्या करोगे ?"

"मै बीस रुपये प्रतिमास इसे घर के लिए दे सकता हूँ, इससे अधिक नही।"

हीरादेई एकदम बोल उठी, "ठीक है, मै काम करूँगी, तो ये भी घर का आधा काम करें। बच्चो को पालना, रोटी, चौका, झाडू-बुहारी कपडे धोना, इतना काम है कि मुझे समय ही नही मिलता। दिन-रात जानवर की तरह पिली रहती हूँ, बहनजी !"

शेफाली ने जगन्नाथ से कहा—"इसका तुम्हारे पास क्या उत्तर है ?"

जगन्नाथ बोला—"डाक्टर साहब, मैं अपने जीवन में सदा ईमानदार रहा हूँ। कभी मैने एक पैसा रिश्वत या अन्याय का नही लिया, बल्कि ऐसी अवस्था आने पर मैने विरोध ही किया है। उसका नतीजा आप देख रही हैं कि मैं कही भी टिककर नौकरी नही कर सकता। अभी फैक्टरी मे सबेरे से शाम तक काम करने वाले मजदूर जब अपने खाने पेट भरने के लिए पैसा माँगते है तो मालिक अधिक से अधिक लाभ उठाकर भी मजदूरो की मजदूरी बढाने को तैयार नही है। उन्होने प्रार्थना करके अपनी माँगें पेश की; जब कुछ न बना तो हडताल की धमकी दी। परन्तु मालिको ने हम लोगो को निकाल दिया। जब हम लोगो के भाग्य मे भूखो मरना ही लिखा है तो क्यो न कुछ काम

करके ही भूखो मरे," जगन्नाथ यह कहकर चुप हो गया।

हीरादेई की समझ मे कोई बात नही आई। शेफाली उसकी बातों से बहुत प्रभावित हुई, किन्तु हडताल द्वारा कार्य-सिद्धि की प्रणाली उसकी समझ मे नही आई। फिर भी वह कुछ देर तक चुप रहकर सोचती रही। किन्तु जगन्नाथ के बच्चो का क्या हो ? वह केवल दयालु होकर उनकी सहायता भर कर सकती है, उसके घर का सारा बोझ तो अपने ऊपर नही ले सकती। थोडी देर चुप रहने के बाद शेफाली बोली, "यह तो ठीक है, परन्तु इससे तुम्हारे परिवार की समस्या तो हल नही हो जाती। हडताल द्वारा न जाने कब सफलता मिले, पर बीवी-बच्चो को खाने को तो हर दिन चाहिए न ! उसका तुमने क्या उपाय सोचा ?"

जगन्नाथ ने तत्क्षण उत्तर दिया, "इन्हे इनकी अवस्था पर आप छोड दीजिए। जहाँ इतने बच्चे भूख और बीमारी से मरते है वहाँ ये भी मर जायँगे। आपने जो इनकी सहायता की, उसके लिए मै आपका कृतज्ञ हूँ।"

शेफाली उठकर चल दी। जगन्नाथ की बातो से उसे धक्का लगा।

रास्ते भर वह तरह-तरह की बातें सोचती रही। अपने कमरे मे जाकर चुपचाप लेट गई। इसी समय गिरधर आ गया वह आ तो पहले ही गया था, किन्तु शेफाली को कमरे में न देखकर शुभदा के पास चला गया था। गिरधर चुपचाप नमस्कार करके बैठ गया। शेफाली ने कुछ भी न कहा। अन्त मे शेफाली की मानसिक चिन्तनधारा को देखकर वह उठने लगा। सरोज पास के कमरे में जाकर सो गई थी। नलू शेफाली के पास ही एक खटोले पर पडा था। इसी समय शेफाली बोली, "गिरधर, तुम्हारी पढाई कैसी चल रही है ?"

गिरधर ने ताली से जमीन पर रेखा खीचते हुए कहा, "ठीक है। कालेज का एक ग्रुप आउटिंग के लिए जा रहा है। इस मास के अन्त तक रवाना हो जायगा।"

"कहाँ-कहाँ जा रहा है ?"

"कई जगहो पर। फिर मद्रास भी जायगा। प्रोफेसर इञ्चार्ज ने सरकार को कोलम्बो के लिए भी लिखा है, परन्तु आशा नही है।"

"फिर ?"

"कुछ नही, पूछ रहा था, क्या मै भी चला जाऊँ ?"

"जाने मे हरज क्या है ! 'देशाटन पण्डितमित्रता च' तुमने सुना ही है। क्या लडकियाँ भी जा रही है ?"

"हाँ, कुछ लडकियाँ तैयार तो हो रही है।"

"क्या शुभदा भी ?"

"शुभदा से मैने पूछा तो था परन्तु शायद वह न जायगी। उसे कोर्स पूरा करना है। मैने भी उससे कहा है कि समय थोडा है, उसे घर ही रहना चाहिए।"

"हूँ," कहकर शेफाली चुप हो गई।

गिरधर बोला—"जगन्नाथ के घर की कैसी अवस्था है, आपका मूड कुछ खराब है।"

शेफाली ने कोई उत्तर नही दिया। "नही ऐसा तो नही है," कहकर बात को टाल गई।

इसी समय शुभदा कमरे में आई। उसने आते ही पूछा, "जीजी, क्या हाल है जगन्नाथ का, क्या उसने फिर काम छोड दिया ? सरोज कह रही थी अब फिर लडाई होने लगी है। इन बच्चो की बडी मुसीबत है।"

शेफाली ने कहा, "वह कम्युनिस्ट हो गया है। जाने क्या धुन सवार हो गई है। कहता है—'जब भूखो ही मरना है तब कुछ काम करके ही क्यों न मरा जाय।' मै कहती हूँ—'क्या मनुष्य शक्ति रहते भूखो मरने आया है।' "

गिरधर ने उत्तर दिया, "निराश मनुष्य विद्रोही बन जाता है। स्वभाव के खरे व्यक्ति के लिए किसी भी जगह निर्वाह करना कठिन हो

जाता है, खास करके जहाँ बहुत से बेईमान आदमियो के नीचे काम करना पड़े।"

शुभदा बोल उठी, "यह एक पागलपन है। मनुष्य को अपनी अवस्था के अनुसार बनना चाहिए, जिसकी जितनी शक्ति हो उसके अनुसार अपने को ढालना चाहिए।"

गिरधर ने कहा, "यह तो दब्बू प्रकृति के लोगो के लिए सभव है। तेज स्वभाव का व्यक्ति तो जहाँ खराबी देखेगा, विद्रोह कर बैठेगा। मै स्वय कभी कम्यूनिज्म मे विश्वास करता था, आज भी करता हूँ। भारतवर्ष का कम्यूनिस्ट जितना रूस के प्रति सच्चा है उतना देश के प्रति नही है। वह अन्न भारत का खाता है, रहता यहाँ है, पानी यहाँ का पीता है और गीत गाता है रूस के। प्रत्येक देश के लिए साम्यवाद का ढाँचा उस देश के वातावरण के अनुसार होना चाहिए।"

शेफाली को इन बातो मे कोई रुचि नही हुई। वह चुपचाप पडी सुनती रही। शुभदा और गिरधर बोलते रहे।

अन्त में गिरधर बोला, "एक काम आप कर सकती हैं, जिससे जगन्नाथ के परिवार की सहायता हो सकती है। वह यह कि आप हीरादेई को रसोई बनाने के लिए रख ले। मै बिना काम किये सहायता देने के पक्ष मे नही हूँ। इस प्रकार की दानवृत्ति से दान लेनेवाले आलसी और निकम्मे हो जाते है।"

शुभदा ने तत्काल गिरधर की हाँ-में-हाँ मिलाकर कहा, "हाँ जीजी, ठीक तो है।"

शेफाली ने कुछ देर चुप रहकर कहा, "रसोई का काम मै हीरादेई से किसी तरह नही ले सकती। उसके छोटे-छोटे बच्चे है। क्या वह सफाई से स्वय भी रह सकती है? मै ऐसी स्त्री के हाथ का खाना नही खा सकती, शुभदा!"

शुभदा ने कहा, "हाँ यह बात भी ठीक है, बच्चो की वजह से वह खाना भी तो ठीक तरह से नही बना सकती। बिना सफाई के उसके

हाथ का खाना ही कौन खायेगा ।"

"तो और कोई काम लीजिए पर मुफ्त मे सहायता का कोई महत्त्व नही है," गिरधर ने दूसरी युक्ति दी । शुभदा ने भी गिरधर की बात का समर्थन किया ।

शेफाली ने कहा, "तो कल को तुम कहोगे कि इन बच्चो से भी मै कोई काम लूँ । क्या यह उचित है ?"

गिरधर ने एक दार्शनिक की तरह उत्तर दिया, "बच्चो का बोझ उनके माँ-बाप पर है। यदि वे कोई काम करके बच्चो का पेट पालते हैं तब उन्हे आपसे सहायता लेने का पूर्ण अधिकार है । वे तो बच्चे है । यदि उनमे अपने पैरो पर खडे होने की सामर्थ्य होती तो वे भी इस तरह का धन लेने पर आक्षेप से मुक्त नही हो सकते थे ।"

शुभदा ने बात को पूरा करते हुए कहा, "यदि उनमे काम करने की क्षमता होती तो उन्हे कोई बच्चा ही क्यो कहता ।"

अन्त मे शेफाली ने कहा, "मेरा कर्त्तव्य सहायता करना है, करूँगी। देखा जायगा । परन्तु गिरधर, तुम्हारी कविता का क्या हुआ ?"

शुभदा ने कहा, "गिरधर ने बडे सुन्दर गीत लिखे है, जीजी !"

गिरधर कवि है और शुभदा सगीतप्रिया । दोनो कलाकार है । उस दिन कालेज मे सगीत तथा कविता-प्रतियोगिता मे दोनो के प्रथम आने पर उनका परिचय बढा । दोनो एक-दूसरे को विशुद्ध भाव से प्रेम करने लगे । कभी-कभी शुभदा गिरधर के बनाए गीत गाती । गिरधर भी शुभदा के सगीत पर मुग्ध था । जब उसके स्वर में करुणा का स्रोत बह उठता है तब वह सगीत में मग्न हो जाती है । जब एक रात गिरधर का बनाया हुआ गीत शुभदा गा रही थी उस समय शेफाली उसी के पास बैठी चित्र पर कूँची फेर रही थी । शेफाली ने उसका सगीत सुनकर ब्रुश रख दिया और मुग्ध होकर गाना सुनने लगी । पूछने पर शुभदा ने बताया कि यह गीत उसके कालेज के एक कवि गिरधर का है । शेफाली ने दूसरे दिन चाय के लिए गिरधर को बुला लाने के लिए शुभदा से

कहा । यही से गिरधर की इस घर के प्रति परिचय की भावना में वृद्धि हुई थी ।

गिरधर बहुत देर तक बैठा रहा; फिर उठकर उसने दोनो को हाथ जोडे और चुपके से नीचे उतर गया । शुभदा अपने कमरे मे चली गई । शेफाली कोई किताब उठाकर पढने लगी । किताब मे उसका जी न लगा तो उसने किताब उठाकर एक तरफ रख दी, चुपचाप बिजली के प्रकाश की ओर देखने लगी । वह एक ही गति से जल रहा था । एक ही प्रकार के प्रकाश से सारे कमरे को आलोकित कर रहा था । वे गरमी के दिन तो थे नही, किन्तु सरदी भी न थी । इसलिए कभी-कभी भुनगे आकर बल्ब के चारो ओर चक्कर लगाते और नीचे गिर पडते, किन्तु प्रकाश की धारा मे कोई घटाव-बढाव नही हो रहा था । पास के कमरे में बच्चे सो रहे थे । उनके करवट बदलने या तेज साँस लेने की आवाज सुनाई दे रही थी । कमरे की एक-एक चीज पर ध्यान देने के बाद वह उठी और बच्चो के कमरे मे चली गई ।

सरोज एक छोटी खाट पर पड़ी थी, नलू वही पैरो की तरफ पड़ा था । सरोज का एक पैर नलू की छाती पर था । दोनो नीद मे बेसुध सो रहे थे । शेफाली बहुत देर तक उन दोनो बच्चो का सोना देखती रही । इसके बाद उसने नलू को अपने पास खाट पर सुला लिया । शेफाली का ध्यान नलू की ओर गया । वह अपने आसन पर लेटी-लेटी उस लडके को देखती रही । नीद में मस्त वह लडका कभी-कभी मुस्करा उठता, जैसे कोई स्वप्न देख रहा हो । शेफाली के हृदय में नलू को बराबर देखते रहने पर मातृत्व की भावना जागृत हो उठी । उसने पैर पसारकर नलू को अपनी छाती से चिपटा लिया तथा उसके मुख का एक चुम्बन लिया । जैसे ही वह उसे अपनी छाती से चिपटाती वैसे ही उसके शरीर में फुरफुरी तथा उद्दाम गति से वात्सल्य-प्रेम की भावना उठने लगती । उसने रह-रहकर उसका मुँह चूमना प्रारम्भ किया । बिजली उसने बुझा दी । थोडी देर बाद फिर बिजली जलाकर

नलू का मुँह देखने लगी। इस तरह करते-करते उसके शरीर मे एक प्रकार का अनन्त वेग भरने लगा। नलू ने बार-बार मुँह चूमे जाने पर घबराकर करवट बदल ली। शेफाली थोडी देर तक उसके शरीर पर हाथ फेरती रही। वह सोचती जा रही थी, "सब-कुछ होते हुए भी जैसे मै एक बडे सुख से वञ्चित हूँ।" जैसे यह जीवन का बडा सुख है। उसे याद आया कि कैसे ब्याह के समय वह दुलहिन बनी थी। उस समय नासमझ बालिका होते हुए भी पति को देखने की उसके हृदय में कितनी उत्कट इच्छा थी। उन दिनो पति के रेख भी नही फूटी थी। साँवला चेहरा होते हुए भी उसमें एक अजीब आकर्षण था। बडी-बडी आँखे, लम्बा और चमकदार मुख, घुँघराले, कढे हुए बाल, उसने कितनी बार छिप-छिपकर उसे देखा था! ब्याह की रात को वह उसके पीछे-पीछे चली गई थी। उसे उस समय और कुछ न मालूम होते हुए भी इतना मालूम था कि सदा से लडकी का ब्याह होता आया है, इसलिए उसका भी हो रहा है। जब प्रत्येक ब्याही हुई लडकी ठठोली मे एक-दूसरे के पति की तारीफ करती तब शेफाली के हृदय मे उस नवागन्तुक युवक के लिए स्थान बन रहा था। उसके पति ने कितना यत्न किया कि एक बार वह उसे देखे, किन्तु उसने प्रत्येक बार साडी मे मुँह छिपाकर अपने को ढाँप लिया। और दूसरे दिन तो वह हो गया, जिसकी कल्पना भी नही की जा सकती थी। उसके पिता को पुलिसवाले पकड ले गये। इस अपमान से क्रुद्ध होकर पति के पिता बरात लौटा लाये। फिर आगे की बाते वह सोचने लगी। माँ ने कुछ दिन रोने-धोने के बाद अपनी बचपन की सखी लेडी डाक्टर से परामर्श करके उसे मेडीकल कालेज मे दाखिल करा दिया। इससे पूर्व उसने इण्टर की परीक्षा तो पास कर ही ली थी। पढते हुए उसके हृदय में मनुष्यो के प्रति घृणा के जो भाव उत्पन्न हुए उसी कारण वह क्लास के किसी लडके के प्रति अनुरक्त न हो सकी, यद्यपि उसकी क्लास मे प्रेम-प्रपञ्च चलते रहते थे। उसे याद आया किस प्रकार उसकी श्रेणी का

एक युवक उससे प्रेम करने लगा था, किन्तु उसने न तो उधर ध्यान ही दिया और न प्रतिज्ञा की भावना से पीछे हटी। एक बार एकान्त में इस प्रकार का प्रसग आने पर उसने कह भी दिया था कि उसे पुरुष-मात्र से घृणा है, वह कभी किसी से प्रेम नही कर सकती। इस बात को सोचते-सोचते उसे फिर पूर्व-चेतना ने आकर दबा लिया और उसे नलू के चुम्बन तथा अपने ऊपर ग्लानि हुई। इसी उधेड-बुन मे वह पडी रही।

जगन्नाथ की गतिविधि दिन-प्रतिदन विचित्र होती जा रही थी। वह सुबह होते ही घर से निकल जाता और काफी रात गये घर लौटता। कभी-कभी रात भी बाहर बिता देता। एक दिन उसके एक साथी ने आकर घर मे दाल, चावल तथा अन्य जरूरी सामान डलवा दिया। इसके साथ ही उसने पचास रुपये जगन्नाथ की स्त्री को देते हुए कहा, "ये कामरेड जगन्नाथ ने भेजे है। शायद वे दस-पन्द्रह दिनो तक घर न आ सकेंगे। आप चिन्ता न कीजिए।" इतना कहकर वह चला गया।

जगन्नाथ की पत्नी हीरादेई पहले तो चौंकी। वह उस समय बच्चो के कपडो मे साबुन लगा रही थी। उसने इस व्यक्ति को देखा तब तक दो मजदूरो ने कोठरी के सामने सामान लाकर रख दिया। वह भौचक्की-सी देखती रही। उस व्यक्ति के इतना सन्देश देने पर जब वह कुछ कहने को तैयार हुई तब तक वह आदमी सीढियाँ पार कर चुका था। ऊपर से झाँककर देखने पर उसे मालूम हुआ जगन्नाथ और वह दोनो गली से बाजार की तरफ मुड रहे थे। वह बहुत देर तक साबुन लगे हाथो वैसी ही खडी रही। उसे पति की निष्ठुरता और उपेक्षा बहुत खटक रही थी। उसकी आँखो में आँसू आ गए। वह फूटकर रोने लगी।

उसे रोता देखकर सरोज पास आ गई और माँ के कन्धे से कन्धा लगाकर खडी हो गई। चुपचाप माँ के आँसू पोछती हुई वह भी रोने लगी।

माँ के आने और कुछ दिन रहकर चले जाने के बाद साधना के चरित्र मे कई परिवर्तन हुए। उसे जहाँ एक तरफ माँ के प्रति किया गया राममोहन का व्यवहार, उसकी उपेक्षा जब-तब खलने लगती, वहाँ उसने यह भी पाया कि राममोहन प्रेम से भी ऊँचा पैसे को समझता है। यही नही, रुपये के लिए आवश्यकता पडने पर वह शायद उसे भी त्याग दे सकता है। बीमारी के दिनो मे ही जब वह दर्द से बेचैन हो उठती था उन दिनो भी वह बाजार के भाव-ताव किया करता और बुलाने पर ही आता या आकर मुँह पोछता जल्दी ही लौट जाता। डा० शेफाली के यहाँ खुद न जाकर उसने अपने मुनीम को ही भेजा, क्योकि उस वक्त वह सट्टे के उतार-चढाव मे ऐसा लीन था कि उसे साधना की बीमारी की याद ही नही रही थी या जान-बूझकर उसने उपेक्षा कर दी थी।

इधर साधना, जो राममोहन के वैभव से प्रेम करके उसकी पत्नी बनी थी, धीरे-धीरे महसूस करने लगी कि राममोहन के पास पैसा तो है, पर वह हृदय नही है, जो रुपये के साथ वह पाना चाहती थी। उसने धीरे-धीरे देखा कि राममोहन साधना को कपडों, गहनो और सभी ऐश-आराम के सामान से लादकर भी वह चीज नही दे पा रहा है, जो साधना चाहती है।

एक दिन ही नही, अक्सर ऐसा होता कि राममोहन भूखे की तरह उससे मिलता और बाद मे न तो वहाँ बैठता न बातचीत ही करता। रात के दो-दो बजे तक वह मुनीमो के पास बैठकर दुकान का काम-

के स्त्री-पुरुषो से वह मिलती। उच्च-वर्ग की 'इण्टेलिजेन्शिया' जिसमें राजनीति, धर्म, समाज की चर्चाएँ केवल जबान को पैना करने के लिए होती है, जहा नशे में डूबकर कुटिल राजनीतिज्ञो को निर्दोष साबित किया जाता है, धर्म में भरी हुई मूर्खताम्रो का विवेचन होता है, और उसे ढकोसला बताया जाता है, आराम से कुरसी पर बैठकर 'सिप' करते हुए जहाँ मजदूरो की हिफाजत की दुहाई की जाती है या सारी दुनिया के समझदारो को नासमझ करार दिया जाता है, वहाँ साधना भी डूब गई और उसने पाया कि इस दुनिया में सबसे ज्यादा सफल वह है जो बेईमानी को ईमान, झूठ को सच और रुपये को दुनिया का सबसे बडा अस्त्र मानता है , जो लोगो को चकमा दे सकता है, बात को बदल सकता है, जो बिना भूगोल जाने अमरीका का नक्शा बना सकता है, बिना इतिहास का एक पन्ना पलटे वेदो से लेकर आज तक की घटनाओं पर बोल सकता है ; जो दूसरे की खूबसूरत औरत को हथियाने के लिए अपनी को दूसरे को सौप दे सकता है।

ऐसे मनुष्यो की गोष्ठी मे साधना को नई खुराक मिली, नया ज्ञान मिला, नया जोश मिला। वह भूल गई अपने को। राममोहन भी कभी-कभी वहाँ जाता, पर उसका मतलब था अफसरो से जान-पहचान करना और समाज मे अपटूडेट बनना। हर तरह के लोगो से मिलते-जुलते रहने पर भी पुराने सस्कारो के कारण या न जाने क्यो साधना ने कोयले की उस खान में अपने को बचाने और राममोहन के प्रति वफादार रहने की काफी कोशिश की।

इस दुनिया मे कुछ लोग ऐसे भी है जो खूबसूरत औरतो से ब्याह इसलिए करते है कि उनके द्वारा वे समाज में सफलता पा सकें और मुट्ठी में न समा सकने वाले आदमियो को काबू में कर सकें। यह नहा कहा जा सकता कि राममोहन उन लोगो में से था या नही और वैसा मौका आता तो क्या करता। फिर भी उसने साधना को सबसे मिलने की खुली छूट दे रखी थी। वही उसे क्लब मे भी ले गया था। साधना

रात को देर तक क्लब मे बैठी ब्रिज खेला करती और राममोहन परमिटों के गु ताडें में लगा रहता। उसने क्लब से वह फायदा उठाया जिसकी आशा मे वह गया था। यह सब उस समय तक चलता रहा, जब तक साधना गर्भ-भार से विवश न हो गई। इसी बीच मे राममोहन ने कई लाख रुपये इधर-उधर कर दिए। इन्ही दिनो प्राणनाथ बैरिस्टर होकर विलायत से लौटा था। प्राणनाथ में रूप, सौन्दर्य, वाचालता, वाक्‌पटुता आदि सभी गुण थे। जब वह बोलता तो लगता जैसे वाणी का झरना बह रहा है। उसकी लच्छेदार बाते, विलायत के नये अनुभव, कहने की शैली, सभी अद्‌भुत थे। साधना उधर झुकी। उसने क्लब मे एकान्त में स्निग्ध शराब से रँगी हुई प्राणनाथ की आँखो में झाँकने की कोशिश की। प्राणनाथ ने भी छवि-मण्डित साधना की नशीली आँखो में उभरते नये स्वप्न देखे। एक बार उसके जी मे आया कि साधना को आलिंगन-पाश मे बद्ध कर ले, पर राममोहन की मित्रता का खयाल करके वह उस पथ से हट गया। उसने कहा, "साधना, मेरा और तुम्हारा सम्बन्ध देवर-भाभी का है।"

"यह कौनसा नया सम्बन्ध है प्राणनाथ बाबू," नशे में झूमती साधना ने पूछा।

"विलायत मे न होने पर भी हमारे देश मे इसका महत्त्व है भाभी! आज से तुम मेरी भाभी हो बस!"

साधना को जैसे धक्का लगा। वह सँभल गई और उस दिन के बाद दोनो एक-दूसरे से स्नेह करते हुए भी अलग हो गए। प्राणनाथ ने क्लब मे जाना छोड दिया। साधना भी अन्तर्मुखी हो गई। उसमे एक नई प्रतिक्रिया जाग पड़ी। उसे लगा कि राममोहन के इस वैभव में वह नही है न राममोहन मे ही वह है जिसकी अभिलाषा मे वह अब तक डूबी रही है। वैराग्य उसे नही हुआ पर बढिया ईरानी कालीन, मखमली सोफा-सैट और बिजलियो से झिलमिल बडी शानदार कोठियो मे, रोल्स रायस की नई माडेल मे बैठकर सैर करने पर भी जैसे वह प्यासी

रहती। जैसे ये सब चीजे उसे टोचती। उसके भीतर की प्यास जैसे अनबुझा रहती। उसे हर जगह अपने पास राममोहन का साँवला शरीर—जिसमे पैसे की दुनिया बहती रहती है—अतृप्तिकर, अरुचिकर महसूस होता। राममोहन धन को धर्म मानता था, जबकि वह उसे दास या इशारे पर नाचने वाला कुत्ता समझती। वह धन से सुख लूटना चाहती थी, पर वही उसे नही मिलता था। कभी-कभी वह मन मे भुनभुनाती, 'इससे तो गरीबी ही अच्छा थी। प्राणनाथ गरीब है तो क्या, कितना सुन्दर हे वह।' कभी-कभी काउच पर अधलेटी कुशन मे मुँह ढककर उसकी कल्पनामूर्ति चित्रित करती। उसे सभी अमीर बदशक्ल लगने लगे और सभी गरीब अच्छे। कभी उसे अपनी माँ के यहाँ दूध दुहने आने वाला ग्वाले का नौजवान अधनगा युवक याद आता। 'अब वह कैसा होगा ? क्या होगा ? कैसा हाथी के बच्चे-सा शरीर ! चेहरे पर कितनी लाली, जैसे खून से रग दिया हो और इधर इन मालदार आदमियो की गुलगुली देह जिसमे चमक नाम को भी नही है। जिनका पराक्रम छल-छिद्र है और विनोद बनावटी हँसी। इस राममोहन की देह मे सौन्दर्य जैसे भदभदा-सा उभर रहा हो। जो न यौवन का रस ही जानता है न सौन्दर्य से आप्लावित ही होता है।' उसके भीतर जो यौवन की भूख जाग रही थी वह जैसे भडक-भडक उठती। जितनी ही राममोहन से वितृष्णा होती उतनी ही वह अनग की पीडा से आबद्ध अपने भीतर जीवन की कटुता, नीरसता, विवशता का अनुभव करती। वह चाहने लगी अब जैसा है उसी मे मन को रमाना चाहिए। आखिर सबको सब-कुछ कहाँ मिलता है ! पर उसकी यौवन-अतृप्ति, हजारो मे उभरती एक छवि-विद्रोह करने को उभरती। जब वह आदमकद शीशे के सामने खडी होकर बिखर बाल, उभरी छाती, अनिन्द्य सुन्दर शरीर को निहारती तो उसे लगता यह सब व्यर्थ हुआ जा रहा है। कैसी विडम्बना है जीवन की !

एक बार जब वह अपने शृगार-गृह मे प्रसाधन लीन थी उसी समय

पीछे से आकर राममोहन ने उसकी आँखे बन्द कर ली। वह फीकी हँसी हँसी, मुस्काई भी, परन्तु भीतर ही भीतर उसे लगा जैसे उसकी साफ देह पर मैला कपडा किसी ने रगड दिया हो। राममोहन दो-एक बातें करके चला गया। साधना वही बैठ गई। आँखे बन्द किये बैठी रही। दो बूँदे उसकी आँखो से ढुलक पडी। साधना अपने को बहुत सुन्दर मानती थी। बचपन से ही उसे अपने रूप पर गर्व था। बडी होने पर भी अपनी दरिद्रता को दूर करने का साधन सौन्दर्य ही एकमात्र उपाय उसने माना।

हाँ, तो अब राममोहन रुपयो से खेल रहा था। एक दिन साधना ने सुना कि वह डा० शेफाली के लिए एक प्रसूति-गृह खोलने जा रहा है ; जमीन खरीद रहा है। यह सब समाचार उसने प्राणनाथ से सुने तो पूछ बैठी, "तुम आदमियो को प्रसूति-गृह की क्या जरूरत है। यह तो हम औरतो का काम है न।"

"नही भाभी, राममोहन को स्त्रियो की चिन्ता अधिक रहती है। वैसे भी शहर मे एक प्रसूति-गृह की आवश्यकता का सभी अनुभव कर रहे है।" "और तुम ?"

प्राणनाथ ने दाँत निपोर दिये। बोला—"आखिर मुझे भी तो कभी-न कभी इसकी जरूरत पड सकती है ? मेरा मतलब···"

साधना सँभल गई। वह आगे नही बढना चाहती थी, बोली—

"सरकारी हस्पताल से क्या काम नही चलता ?"

"वह काफी नही है शायद।"

"हो सकता है कोई और भी भेद हो। डाक्टर शेफाली भी तो बुरी नही है।"

"बुरा कौन कहता है, वह तो लाखो में एक है।"

"ब्याह क्यो नही कर लेते प्राणनाथ बाबू ? जोडी अच्छी रहेगी।"

"मेरा ऐसा भाग कहाँ भाभी ?"

"तो मै कोशिश करूँ ?"

"क्या तुम उससे कह भी सकोगी ?"

साधना थोडी देर के लिए चुप हो गई। फिर बोली, "ग्रौर तुम्हारे भाई साहब ?"

"क्यो, क्या तुम उन्हे भी ग्राज्ञा दोगी ?"

साधना को एक धक्का-सा लगा। वह चुप हो गई। उसे ग्रनुभव हुग्रा जैसे ये दोनो एक ग्रबला को फँसाना चाहते है। राममोहन भी इस भावना से मुक्त नही है।

वह दिन-भर पडी सोचती रही—ऊबी-ऊबी सी जीवन से। सारा चित्र उसकी ग्राँखो के सामने झूमता रहा। उसे लगा राममोहन डाक्टर शेफाली के प्रति ग्रनुरक्त है। तो क्या ये दोनो उन दोनो को फँसाना चाहते है ? शाम को राममोहन ग्राया तो साडी के किनारे बटती हुई नीची निगाह किये साधना ने तिक्त होकर पूछा, "क्या प्रसूति-गृह में रुपया बरबाद करने की बहुत जरूरत है ?"

राममोहन घबरा-सा गया। उसे कोई जवाब न सूझा। वह न जाने किस ध्यान मे था। बोला—

"बरबाद ?"

"हाँ, ग्रौर क्या ?"

वह स्वस्थ-सा हुग्रा। "नही साधना, इसकी जरूरत है। मैने इतना रुपया कमाया है। सोचा, थोडा पुण्य क्यों न लूट लूँ। नाम भी होगा।"

"ग्रौर डाक्टर शेफाली जैसी एक खूबसूरत ग्रौरत भी मिलेगी ?"

"नही नही, तुम्हे फिजूल का शक है।"

"बुराई ही क्या है। ग्रमीर ग्रादमी जैसे ग्रपना पुराना मकान गिराकर नया बनवाता है, पुरानी मोटर बेचकर नई खरीदता है, यह भी सही ?"

राममोहन एकदम घबरा गया। वह पास ग्राकर साधना का हाथ ग्रपने हाथ में लेकर बोला, "क्या तुम सचमुच मजाक नही कर रही हो

साधना ? मै तुम्हारा हूँ, तुम्हारा ही रहूँगा।" इतना कहकर राममोहन ने साधना के गले मे हाथ डाल दिया। थोडी देर इधर-उधर की बातें करके चला गया। साधना वैसी ही बैठी रही। उसे न राममोहन की बातो पर विश्वास हो रहा था न अपने पर। शेफाली के प्रति फिर भी उसमे एक प्रकार की श्रद्धा थी। वह सोचने लगी वह यहाँ से कही भाग जाय, चली जाय, जहाँ उसे यह सब कुछ भी न सुनाई दे। वह उठी और शेफाली के घर चली गई।

जगन्नाथ अपने साथियो के साथ कम्यून के दफ्तर मे रहता और शाहदरे की मिल के मजदूरो मे काम करता, उन्हे पार्टी के उद्देश्य समझाता और सगठन के काम मे उन्हे एकदम हडताल के लिए तैयार रहने को कहता। मजदूरो मे अधिकतर लोग बहुत गरीब थे। नित्य कमाना और नित्य खाना उनका काम था। उसके साथियो मे कई आदमी थे, किन्तु शाहदरे की मिलो में जिनको काम का भार सौपा गया था, वे थे रामसहाय, जगजीतसिंह और शमशेर—एकदम धुन के पक्के। रामसहाय इससे पूर्व एक बैंक मे काम करता था। काम मे पहली बार असावधानी करने के कारण मैनेजर ने उसे डॉटा, किन्तु कई बार वैसी असावधानी करने के कारण उसे निकाल दिया गया। बेकार घूमने पर धीरे-धीरे उसे कम्यूनिस्ट पार्टी के एक सदस्य ने कम्यूनिस्ट बना लिया। घर में उसकी एक मॉ थी। वह स्कूल मे तीसरी श्रेणी की लडकियो को पढाया करती थी उसी से घर का काम चलता था। बैंक में अनमने भाव से नौकरी करते हुए मॉ ने उसका विवाह कर देने का एक-दो बार प्रयत्न किया, परन्तु फक्कड रामसहाय को यह बात पसन्द न आई। उसने माँ का घोर विरोध किया। जब काफी दिनो तक समझाने के बाद भी वह तैयार न हुआ तो अपना दुर्भाग्य समझकर माँ ने बेटे के

विवाह का विचार छोड दिया । वह पढा-लिखा तो था किन्तु तबियत का फक्कड और रूखी-सूखी रोटी खाकर मस्त रहने वाला व्यक्ति था। मनोनुकूल पार्टी का काम वह जोरो से करता था । जो काम उसे सौपा जाता उसमे तन-मन से लग जाता । चरित्र का भी वह शुद्ध था ।

जगजीतसिंह सिक्ख लडका था । समझ मे कम होते हुए भी वह दृढ विचार का व्यक्ति था । वह मानता था सिख धर्म और कम्यूनिज्म के अलावा ससार मे सब ढकोसला है । सारे धर्म भूल से भरे है । गुरु गोविन्दसिह ने जो पाठ पढाया है, जो धर्म की शिक्षा दी है वही एक मात्र धर्म है तथा कम्यूनिस्ट ससार मे राजनीति का सबसे सुन्दर मार्ग है । वह कम्यूनिस्ट इसलिए बना था कि उसका बडा भाई कम्यूनिस्ट था। पिछली गरमियो मे टाईफाइड से उसका देहान्त हो गया था । वह अपने भाई को दिन-रात काम करते देखता और देखता कि सरजीतसिह माँ-बाप के विरोध को सहकर भी बराबर काम कर रहा है, कभी कष्ट की परवाह नही करता । सरजीतसिह के इस चरित्र का प्रभाव नये पुट्ठो के बली उसके छोटे भाई पर पडा । उसने नवी श्रेणी मे तीन बार फेल होकर पढना छोड दिया । बाप चाहता था कि जगजीत को फौज में या पुलिस मे भर्ती करा दे । पर मरते हुए भाई के काम को पूरा करने की उसने प्रतिज्ञा कर ली और वह उसी काम मे पूरी तरह लग गया । वह बराबर काम करता रहा । एक दिन तग आकर बाप ने उसे घर से निकाल दिया ।

शमशेर स्कूल में आवारा लडको का सरदार था । रात को ग्यारह-बारह बजे तक आवारा घूमना और लोगो को तग करना उसका काम था। वह रुपया न रहने पर रात मे घूमता हुआ इक्के-दुक्के व्यक्ति पर हमला कर बैठता, जो कुछ मिल जाता वही साथियो के साथ ले भागता। इतने पर भी चोरी या डाके में वह कभी नही पकडा गया । स्त्रियों से उसे खास घृणा थी । जब वह किसी स्त्री को बनाव-शृगार करके साइ-किल पर घूमते या पैदल चलते देखता, उसके हृदय मे आग लग जाती।

इच्छा होती कि उसके सब गहने लूट ले। वह कहा करता कि इन औरतो ने पुरुषो को बदचलन बनाया है। व्यभिचार बढने का एकमात्र कारण इन स्त्रियो का बनाव-शृंगार करके बाहर निकलना है। ऐसी स्त्रियो का अपमान करना 'उसकी पार्टी' का ध्येय था। वह रात में अकेली या पति के साथ जाती हुई स्त्री पर हमला कर बैठता और उनके गहने-रुपये छीन लेता। फिर सब लोग किसी होटल या और जगह बैठकर खाते-पीते। वह अपने साथियो का ध्यान भी खूब रखता। स्वय कष्ट सहकर भी उनकी सहायता करता। एक बार उसका एक साथी बीमार पड गया तो आठ दिन तक वह उसकी खाट के पास से नही हिला। जिस घटना ने उसे कम्यूनिस्ट बना दिया वह इस प्रकार थी—

एक बार शमशेर अपनी पार्टी के लोगो के साथ जमुना की तरफ घूम रहा था कि वही घूमते-घूमते रात हो गई। रात मे घूमना तो उनका काम ही था। कोई साढे नौ बजे का समय था, सरदी के दिन थे। उस समय तीमारपुर की सडके सुनसान पडी थी। दूर तक कोई आता-जाता दिखाई नही दे रहा था कि इसी समय एक लडकी साइकिल पर बडी तेजी से आती दिखाई दी। शमशेर ने प्रकाश मे उसे आते हुए देखा। वह सबको वही छोडकर जरा आगे वृक्ष की ओट में जा खडा हुआ। जैसे ही वह लडकी पास से निकली वैसे ही आगे बढ़कर शमशेर ने उसे रोक लिया और कहा, "क्या है तुम्हारे पास ?"

लडकी सहमकर साइकिल से गिर पडी। वह चुपचाप उठकर खडी हो गई और बोली, "तुम मुझसे क्या चाहते हो ?"

शमशेर मुँह बिचकाकर बोला, "रुपया।"

"मेरे पास रुपया है, पर मेरा नही है।"

"किसी का हो, हमें तो रुपये से मतलब है, निकालो।"

"पर यह मेरा नही है, मै भूखे-नगो के लिए रुपया इकट्ठा कर रही हूँ। क्या तुम नही देखते कि ऐसी रात मे भी अकेली इसी काम के लिए घूम रही हूँ ?" उसने शमशेर को देखकर ये वाक्य इतने दर्द-भरे

स्वर में कहे कि शमशेर की स्त्रियो के प्रति स्वाभाविक घृणा में एक धक्का-सा लगा। वह थोडी देर के लिए सिहर-सा उठा। इसी समय उसके साथियो मे से एक बोला, "निकाल जल्दी से, नही तो नगी कर दूँगा।"

शमशेर ने अपने साथियो से कहा, "ठहरो !"

फिर वह युवती की तरफ मुडकर बोला, "किस काम के लिए यह रुपया इकट्ठा किया है ?"

युवती ने देखा कि इस व्यक्ति के ऊपर उसकी बात का प्रभाव पड रहा है। वह स्वस्थ होकर बोली, "हम लोग मजदूरो के लिए यह रुपया इकट्ठा कर रहे है। वे लोग दस दिनो से मिल मे हडताल किये हुए है। उनके पास खाने को नही है। ये रुपया उन्ही के काम आयेगा। यदि तुम चाहो तो तुम भी कुछ सहायता कर सकते हो।"

इस पर साथियो ने ठहाका मारकर कहा, "फरेबिन है, शमशेर, इसकी बातो मे न आना।"

शमशेर थोडी देर तक चुप रहकर बोला, "तुम क्या करती हो ?"

"मै मजदूरो, गरीबो की सेवा करती हूँ। ससार से धनियो को मिटाने का यत्न करती हूँ, जिससे सब गरीब सुखी रह सकें।"

"तुम जरा-सी औरत इतना बडा काम कैसे कर सकती हो ?"

साथी बोल पडे, "झूठ है।"

शमशेर चुप रहा। युवती ने शमशेर को ध्यान से देखकर कहा, "जाऊँ, या रुपया निकालूँ ?"

शमशेर के मुँह से निकल गया, "जा सकती हो।"

साथियो ने गुर्राकर कहा, "शमशेर !"

शमशेर ने उसी तरह कहा, "जाने दो।"

युवती चली गई। शमशेर बहुत देर तक गुम-सुम रहा। साथियो ने उसका काफी मजाक उडाया, फिर भी वह कुछ न बोला।

दूसरे दिन दोपहर को अकेला उठकर उसी जगह के आस-पास

घूमता रहा । इसी तरह तीन-चार दिनो तक बराबर घूमते रहने पर एक दिन फिर उसी लडकी को साइकिल पर उसने देखा । वह दौडकर उसके सामने जा खडा हुआ । यह देखकर वह युवती साइकिल से उतर पडी । उसने हँसकर कहा, "आज तो मेरे पास कुछ भी नही है ।"

शमशेर ने गम्भीर होकर उत्तर दिया, "मै बहुत लज्जित हूँ ।" युवती सडक से एक तरफ हटकर खडी हो गई । वह बहुत देर तक शमशेर को देखती रही और शमशेर उसे ।

तारा ने कहा, "क्या देखते हो, सब प्रकार की बुराई की जड गरीबी है । गरीबी को दूर करना ही हमारा काम है । हम गरीब-अमीर को एक कर देना चाहते है ।" इसके साथ ही सडक पर खडी तारा ने शमशेर को साम्यवाद की बातें समझाई ।

शमशेर ने प्रभावित होकर कहा, "मै भी यह काम करना चाहता हूँ । मेरे आगे-पीछे कोई नही है ।"

तारा ने नवागन्तुक को तीक्ष्ण दृष्टि से देखकर उत्तर दिया, "हमारे पास रुपया नही है, काम है, सेवा है ; यदि तुम काम करो तो पार्टी तुम्हे रोटी देगी ।"

शमशेर तैयार हो गया । उस दिन के अवशेष भाग मे तारा उसे पार्टी के दफ्तर ले गई । अब शमशेर कट्टर साम्यवादी हो गया ।

जगन्नाथ उसी पार्टी मे था । सब लोग उसी के कहने पर चलते, क्योकि कुछ दिनो तक उसने इस फैक्टरी में काम किया था । वह सबको जानता था । रात को मजदूरो की सभा में सबने लोगो को समझाया, किन्तु एक प्रश्न का उत्तर वे न दे सके कि हडताल के दिनो मे मजदूर खाएँगे कहाँ से । यदि हडताल लम्बी हो गई तब तो सबके प्राण ही निकल जायँगे । मजदूरी सब बढवाना चाहते थे, परन्तु मजदूरी बढवाने में जिन कष्टो का सामना करना पडेगा वह कौन झेलेगा ? जगन्नाथ, शमशेर, रामसहाय इसका एक ही उपाय जानते थे कि चन्दा करके कुछ रुपया इकट्ठा किया जाय, जिससे मजदूरो को उस

समय कुछ सहारा मिले। परन्तु रुपया कहाँ से आवे ? सोचते-सोचते जगन्नाथ को शेफाली का ध्यान आया।

दूसरे दिन दोपहर को चारो शेफाली के पास गये और उसके सामने अपनी परिस्थिति रखी। शेफाली ने पहले तो कुछ उत्तर न दिया, फिर बोली, "जगन्नाथ, तुम जानते हो मै बहुत मालदार नही हूँ। मै स्वय सेवा-कार्य मे लगी हुई हूँ। यदि मैने कुछ सहायता की तो क्या इतने से तुम्हारा काम चल जायगा ?" इतना कहकर उसने सौ रुपये का नोट जगन्नाथ को दिया।

जगन्नाथ और उसके साथी रुपये पाकर लौट आये। दूसरे दिन हडताल प्रारम्भ हुई। दूसरे जानेवालो को भी रोक लिया गया। इस तरह तीन दिन हडताल रही। चौथे दिन लोग जगन्नाथ के पास आकर अपनी भूख की कहानी सुनाने लगे। जगन्नाथ ने वे सौ रुपये लोगो में बाँट दिए। इधर रामसहाय अपने बैंक के कर्मचारियो से बीस-पच्चीस रुपये माँग लाया था। वे भी उन्ही में बाँट दिये। कुछ मजदूर, जिनको पैसा दिया गया था, सीधे शराबखाने पहुँचे और शराब पी आये, कुछ ने घर का काम चलाया। इधर चार दिनो तक मिल-मालिको ने कोई ध्यान न दिया। पाँचवे दिन उन्होने लोगो को फुसलाना प्रारम्भ किया। कुछ को रिश्वत दी, कुछ को डरा-धमकाकर काबू मे किया। बडे-बडे चौधरियों में दो को थाने भिजवा दिया। वहाँ उन पर मार भी पडी। परिणाम यह हुआ कि उन्होने माफी माँग ली। इस तरह सातवे दिन हडताल खुल गई—असफलता के विषाद का काला वाता-वरण लेकर। चारो नेताओं ने जब यह देखा तो वे सीधे पार्टी के दफ्तर में पहुँचे। वहाँ तारा को अपना हाल सुनाया। वही उस समय वहाँ काम पर थी। उसने उन्हे आश्वासन दिया तथा बराबर उनमें काम करते रहने की प्रेरणा देती रही।

रामसहाय फिर निराश हो गया। उसने समझा कि रुपये का काम तो रुपये से ही हो सकता है। जब रुपया ही नही है तब यह काम भी

कैसे हो सकता है ! किन्तु जगन्नाथ, शमशेर और जगजीत तीनों काम करते रहे। रामसहाय को उसके बाद किसी ने पार्टी के दफ्तर में नही देखा। इधर जगन्नाथ जब-तब घर जाता, परन्तु उसने सहायता के नाम से एक पैसा भी नही दिया। हीरादेई शेफाली के घर झाडू-बुहारी और देख-रेख का काम करती। नौकर न रहने पर कभी-कभी रसोई मे भी हाथ लगाने लगी। शेफाली ने नीचे एक कमरा दे दिया था, उसी में वह रहने लगी। इस समय वह अपेक्षाकृत प्रसन्न थी। बच्चे यथानियम पढने जाने लगे। प्रारम्भ में हीरादेई शुभदा को आदर की दृष्टि से देखती थी। उसे लेडी डाक्टर की बहन समझकर ही वह उसका आदर करती। परन्तु एक दिन जब शुभदा ने स्वय ही करुणार्द्र होकर उसे अपनी कहानी सुनाई, तब उस समय तो नही, उसके दूसरे दिन से ही आदर-भाव का दृष्टिकोण बदल गया। हीरादेई उसके प्रति विरक्त एव उदासीन हो गई। अब यथानियम कालेज से लौटने पर न तो उसके सामने आकर खड़ी होती और न जल-पान के लिए ही उससे पूछती।

एक दिन कालेज से हडबडाती आई शुभदा ने किताबे मेज पर पटककर हीरादेई से कहलवाया कि वह जल्दी ही कालेज लौट जायगी, उसे कालेज के पारितोषिक-वितरणोत्सव में भाग लेना है। हीरादेई उस समय अपने कमरे मे अकेली बैठी थी, शायद घर का काम समाप्त करके लेटी थी, फिर भी वह ऊपर न आई, न उसने उत्तर ही दिया। पाँच-सात मिनट प्रतीक्षा करने के बाद शुभदा ने फिर आवाज लगाई तो हीरादेई ने अपनी कोठरी से ही उत्तर दिया, "उसे फुरसत नही है" और चुप हो रही। शुभदा चाहती थी कि कुछ जल-पान कर ले। अन्त में वह स्वयं हीरादेई की कोठरी के द्वार पर खडी होकर पुकारने लगी। उसने देखा कि हीरादेई पडी है।

शुभदा बोली—"कब से तुमको पुकार रही हूँ हीरादेई, मुझे कुछ जल-पान करा दो, अभी फिर कालेज जाना है, उठो !"

हीरादेई ने लेटे ही लेटे कहा, "मैने घर-भर के लोगो की सेवा का ठेका नही लिया है। तुम जाओ, मेरी तबियत ठीक नही है।" इतना कहकर वह करवट बदलकर सो गई।

शुभदा इस उत्तर के लिए तैयार न थी। वह एकदम सन्नाटे में आ गई। उसे यह विश्वास भी न था कि कल तक मनोयोग से सेवा करने वाली हीरादेई एकदम इतनी बदल भी सकती है। वह चुपचाप कमरे में लौट आई और खाट पर पड रही। न उसने खाना खाया, न वह कालेज ही गई। उसे सोचते-सोचते ज्ञात हुआ कि हीरादेई मेरी वास्तविक स्थिति को जान गई है, इसी से उसके व्यवहार मे यह फर्क आ गया है। उसे अपनी अवस्था पर ग्लानि भी हुई। उसने अनुभव किया कि शेफाली के अन्न पर आखिर वह कब तक पलती रहेगी। हीरादेई ने उसके स्वामित्व पर आघात किया है। उसे क्रोध आया वह उसे पीस डालेगी; शेफाली से कहकर उसे निकलवा देगी, किन्तु यह भावना देर तक न रही। उसने माना कि क्या वह भी बिलकुल हीरादेई की तरह नही है। आखिर उसमें और हीरादेई में भेद ही क्या है? केवल इतना ही अन्तर है कि वह पढती है और ठीक ढग से रहती है। तकिए मे मुँह छिपाकर वह सुबुक-सुबुककर रोने लगी। रोती रही। इसी समय उसे पैरो की आहट सुनाई दी। फिर भी उसने मुँह न हटाया, सोचा शायद हीरादेई पश्चात्ताप करने आई होगी। अब वह उसी समय उत्तर देगी जब हीरादेई पश्चात्ताप करके उसे मनाएगी। किन्तु कुछ भी आगे न हुआ। उसने मुँह हटाकर देखा तो गिरधर को पाया। गिरधर शुभदा के इस व्यवहार से आश्चर्य मे भर रहा था।

शुभदा के सिर हटाते ही उसने पूछा, "क्या बात है शुभदा, सिर में दर्द है क्या?"

"हाँ, कुछ ऐसा ही है।"

"तो कोई दवा खानी चाहिए थी, लाओ कोई बाम लगा दूँ।"

"नही, उसकी कोई आवश्यकता नही है, ठीक हो जायगा। आप

आराम से बैठिए।" इतना कहकर वह उठकर बैठ गई। आँसू पोछ डाले।

गिरधर कहने लगा, "तुम्हे कोई और दर्द है क्या शुभदा ? क्या ही अच्छा हो कि मै तुम्हारी सहायता कर सकूँ !" इतना कहकर वह शुभदा के और पास सरक गया।

शुभदा उठकर सामने पडी कुरसी पर बैठते हुई बोली, "नही, ऐसी कोई बात नही है। आपको भ्रम हुआ है, गिरधर बाबू !"

गिरधर अप्रतिभ हो गया। वह ढीठ की तरह मुँह निपोरकर फिर बोलने लगा, "दर्द की दवा करके बीमारी को दूर करना ही एक उपाय है। फिर भी इतना मानना पडेगा कि तुम्हे दर्द से ही पीडा हो रही है, और वैसे भी हर प्रकार का कष्ट एक दर्द है। वही तुम्हे हो रहा होगा।" इतना कहकर वह हँसने लगा। फिर चुप होकर बोला, "शेफालीजी क्या अभी नही आई ?"

वे अभी बीमारो को देखकर ही नही लौटी है। तीन बज रहे है। न खाने का अवकाश है, न आराम की जरूरत।"

"आराम उन्हे चाहिए जिन्हे अपनी चिन्ता हो। शेफालीजी प्राण, मन, कर्म से रोगियो की हो चुकी है। वह तुम्हारे यहाँ की कम्यूनिस्ट कहाँ है ?"

"नीचे कमरे में आराम कर रही है," शुभदा ने व्यग्य से कहा।

गिरधर ठहाका मारकर हँसा और बोला, "ठीक है, इधर तुम्हे आराम चाहिए, उधर उसे ; जिसे आराम नही चाहिए वह काम कर रही है। क्या मै जान सकता हूँ शुभदा, तुम्हारा कितना कोर्स बाकी है ?"

शुभदा ने हाथ की दोनो मुट्ठियो को मलते हुए कहा, "आपका मतलब ?"

गिरधर ने तत्काल उत्तर दिया, "तुमने सुना नही, मै उन आदमियों मे से हूँ जो इस बात की खबर रखते है कि कहाँ और कब भोज है।"

शुभदा ने मुस्कराते हुए कहा, "मै नही समझी।"

गिरधर बोला, "पढने के बाद लडकियाँ क्या चाहती है, क्या यह

भी तुम्हे बताने की आवश्यकता है शुभदा ? किसी भाग्यवान् के हर्ष को चौगुना बढाना, अपनी एक सरस दृष्टि से नरक को स्वर्ग बना देना, बस ।"

इसी समय हीरादेई आ गई । शुभदा ने उसे देखते ही मुँह फेर लिया । वह गिरधर से बाते करती रही । एक बार उसने डाक्टर के सम्बन्ध में पूछा भी, पर शुभदा कुछ भी न बोली ।

गिरधर ने उसे देखते ही पूछा, "डाक्टर कब तक आ रही है ?"

"आज तो देर हो गई, न जाने अभी तक क्यो नही आई ?" इतना कहकर वह चली गई ।

शुभदा ने कहा, "गिरधर, तुम्हें कोई काम नही है ?" गिरधर चुप हो गया । शुभदा को लगा जैसे उसने गिरधर का अपमान कर दिया है । उसने पूछा—"शरबत पीजिएगा ?"

"नही, रहने दो । मै जाता हूँ ।"

"ठहरो, चाय पीकर जाना ।" शुभदा चली गई । गिरधर कमरे की तस्वीरें देखता रहा । थोडी देर मे जैसे ही शुभदा चाय लेकर आई वैसे ही शेफाली ने कमरे में प्रवेश किया ।

शुभदा को चाय लाते देखकर शेफाली एक बार तो चौकी, पर उसने कहा कुछ भी नही । बोली, "हाँ शुभदा, एक प्याला मेरे लिए भी । बहुत थक गई हूँ । आज एक बीमार ने तो मेरे कपडे ही खराब कर दिये । मैं जरा असावधान होती तो···खैर, जाने दो, बडा घृणित प्रसंग है ।"

इसी समय प्राणनाथ ने प्रवेश किया । बोला, "फिर भी चाहे जो कुछ कहिए, डाक्टर का काम है बडे सयम-धैर्य का ।"

"निश्चय ही, जरा-सी असावधानी से रोगी के प्राण जा सकते है । आज जिस केस को मैने देखा उस पर चार-चार डाक्टर थे । सचमुच हमारे नगर के लिए प्रसूति-गृह की आवश्यकता है ।"

शुभदा ने चाय तैयार की और चारो बैठकर पीने लगे । चाय पीते-

पीते शेफाली ने पूछा, "हीरादेई क्या हुई ?"

"उनकी तबियत ठीक नही है, शायद वह सो रही है," प्राणनाथ ने कहा, "प्रसूति-गृह की आवश्यकता सभी अनुभव कर रहे है। किन्तु जो लोग रुपया दे सकते है वे मन्दिर बनवाकर धर्म लूट रहे हैं।"

शुभदा ने व्यंग्य करते हुए कह दिया, "प्राणनाथ बाबू, प्रसूति-गृह की आवश्यकता का अनुभव आप किस रूप मे कर रहे है ?"

प्राणनाथ ने तत्काल उत्तर दिया, "केवल परोपकार की दृष्टि से; अपने लिए नही।"

"क्या वकील भी परोपकारी दृष्टि रखता है ?" शुभदा ने फिर एक व्यंग्य किया।

"वकील भी तो मनुष्य है, समाज में रहता है। क्या आप उसे एकदम अमानुषिक समझती है, शुभदा देवी ?"

"देवी का प्रयोग व्यर्थ है। केवल नाम लेने से काम चल सकता है।"

"लेकिन जब मुझे लोग प्राणनाथ बाबू कहकर पुकारते है तो मेरा हृदय भले ही गद्गद् न हो उठता हो, किन्तु आदर की अपेक्षा तो करता ही है। इसके अतिरिक्त मै समझता हूँ और कुछ न सही तो वकील को कुछ न कुछ समाज-सेवा मे भाग लेते रहना चाहिए।"

"ताकि उसे लोग अधिक से अधिक सख्या में जान जायँ और उस की प्रेक्टिस चलती रहे।"

"निश्चय ही, यदि ऐसा दूरदर्शी किसी वकील का साथी हो तो उसकी वकालत चलने मे कठिनाई नही हो सकती," प्राणनाथ बोल उठा। शुभदा चुप हो गई। शेफाली ने चाय का प्याला समाप्त ही किया था कि नौकर ने आकर खबर दी, "एक स्त्री आपसे मिलने आई है।"

"अभी तक आपने भोजन नही किया है।" शुभदा बोली।

प्राणनाथ उठते-उठते कहने लगा, "शेफालीजी का जीवन रोगियो की सेवा से प्राण पाता है। उनका अपना कुछ भी नही है।"

इसी समय साधना ने कमरे में प्रवेश किया। साधना एकदम नये

रेशमी कपडो और शृगार से लक-दक होकर आई थी। शुभदा और शेफाली ने उसका सत्कार किया। प्राणनाथ और गिरधर नमस्कार करके चले गए। यद्यपि प्राणनाथ साधना से भी दो-दो बाते करना चाहता था, फिर भी जाते-जाते उसने 'भाभी नमस्कार' कहकर जो वक्रगति से हाथ जोडे, उसे देखकर साधना जैसे एकदम भौचक्की-सी रह गई और हँसकर उसने प्रति-नमस्कार कर दिया। साधना कुछ ताने के तौर पर कहना चाहती हुई भी कुछ न कह सकी। वह उसे देखकर सकपका गई थी। इसी समय शेफाली ने उसका हाथ पकडकर अपने पास बिठा लिया। शुभदा भी उसके साथ ही बैठ गई।

शुभदा को देखते ही उसने कहा, "क्या आप कालेज के पारितोषिक वितरण-उत्सव मे भाग नही ले रही है, शुभदा बहन ?"

शुभदा ने उत्तर दिया, "कुछ तबियत ठीक नहीं है।"

"मै तो यही सोचकर आई थी कि तुम्हारे साथ चलूँगी और भला जीजी को तो फुरसत ही क्या होगी ?"

"हाँ, मै अभी रोगियो को देखकर लौट रही हूँ।"

"अभी तो इन्होने दोपहर का खाना भी नही खाया है। मै यही कहती रहती हूँ कि आपको अपने खाने, स्वास्थ्य का ध्यान रखना चाहिए। पर बीमारो से फुरसत मिले तब न ?" इसी समय हीरादेई सामने आकर खडी हो गई। शुभदा ने शेफाली से खाना खाने का आग्रह किया। "तुम शुभदा के पास बैठो, मै अभी निश्चिन्त होकर आई," कह कर शेफाली कमरे से बाहर निकल गई।

साधना ने सरलता से कहा, "हाँ, हाँ, आप जाइए। मै बैठी हूँ। मैं शुभदा बहन से बाते करूँगी।"

साधना शेफाली के घर दूसरी बार आई था, परन्तु दोनो बार वह शेफाली के घर की सादगी देखकर हैरान-सी हो रही थी। जबकि साधना का घर सुन्दरता और वैभव का भण्डार था, शेफाली के घर में आवश्यक वस्तुओ के अतिरिक्त न तो कोई सजावट थी, न विलास का सामान।

वह सोचने लगी—यह नगर की इतनी प्रतिष्ठित लेडी डाक्टर होती हुई भी इतनी सरलता-सादगी से कैसे रहती है! इस बैठक मे जहाँ यह सब लोगो से मिलती है न तो किसी प्रकार की दिखावट और न कोई सजावट। शेफाली के अपने सोने के कमरे मे भी एक महापुरुष के चित्र के अतिरिक्त और कुछ नही है। जो चित्र उसने स्वय बनाये थे वे भी कागजो में लिपटे एक तरफ कोने मे रखे थे। गिरधर के बार-बार आग्रह करने पर भी उसने कमरे मे नही लगाये। जिस महापुरुष का चित्र दीवार पर लटक रहा है वह बुद्ध का है। वही शेफाली को विशेष प्रिय है। केवल उस चित्र के अलावा और कोई सजावट वहाँ नही है। हाँ, शुभदा के कमरे में अवश्य शेफाली के बनाये चित्र, सितार, तानपूरा, एक तबले की जोडी यह सब एक तरफ कोने में रखे हुए थे। शुभदा के कमरे को देखकर मालूम होता था इस कमरे का मालिक अवश्य रसिक प्रकृति का व्यक्ति होगा। शुभदा साधना को अपने कमरे में ले गई। वही चटाई पर नीचे बैठकर साधना से बाते करने लगी।

"अरे, तो क्या तुम खाट पर भी नही सोती ?"

"नही, जीजी सदा जमीन पर सोती है, मैने भी उनकी देखा-देखी जमीन पर ही सोना शुरू कर दिया है। बहन रात को या तो डाक्टरी की किताबे पढती है, जो शायद बहुत कम। प्रायः वे गीता, उपनिषद् या ऐसी ही कोई पुस्तक पढकर सोती है। सबेरे भी वे हम सबसे पहले नहा-धोकर दवाखाने मे जा बैठती है। मेरे उठते-उठते तो वे रोगियो को देखने बाहर निकल जाती है।

"बिना खाये-पिये ?"

"नही, अपने कमरे में ही स्टोव पर पहले दूध गरम कर लेती थी, अब हीरादेई उन्हे दूध दे देती है।"

"तब तो कहना चाहिए वे तपस्विनी है।"

"चाहे तो ऐसा भी कह सकते है। सरदा हो या गरमी, उनके नियमित प्रोग्राम मे कभी रुकावट नही पडता।"

"मुझे तो तुम लोगो का घर देखकर हैरानी होती है, जैसे किसी साधु का घर हो।"

"जीजी कहती है, जिसके जीवन का उद्देश्य सेवा करना है उसे बाहरी सुख नही चाहिएँ। यद्यपि मेरी प्रकृति इस मामले में उनसे भिन्न है फिर भी उनका आदर्श मुझे बुरा नही लगता। जहाँ तक बनता है, मै मानती हूँ। वैसे मै अपनी प्रकृति के अनुसार रहने को स्वतन्त्र हूँ। सच-मुच जीजी का जीवन तो तपस्या का जीवन है।"

शेफाली के सम्बन्ध में शुभदा ने और भी बहुत-कुछ कहा। उसने बताया—"ऐसे पचास प्रतिशत रोगी आते है जिनसे वे फीस नही लेती और उनके घर मुफ्त देखने जाती है। कभी-कभी अपने पास से दवा के दाम भी दे आती है। इसी हीरादेई के सारे परिवार का पालन वे स्वय करती है और भी कई ऐसे लोग है जो उनसे नियमित सहायता पाते हैं।" इसके साथ ही शेफाली का वर्णन करते-करते शुभदा की आँखें डबडबा आई।

साधना शेफाली के चरित्र से बडी प्रभावित हुई। वह अब तक शेफाली को शुद्ध रूप में डाक्टर ही समझती थी। रोगियो की लगन के साथ सेवा को ही उसका परम रूप मानती थी। इन बातो ने उसे चौका दिया और वह शेफाली को बहुत ऊँचा उठा हुआ व्यक्ति मानने लगी। जैसे वह स्त्री कोई असाधारण हो, जो एक परम पुनीत कर्तव्य-कर्म लेकर संसार में अवतीर्ण हुई हो। साधना का जीवन पहले गरीबी का था, किन्तु उसमें त्याग नहीं अभाव था। जैसे ही उसने वैभव से खेलने का अवसर पाया तो उसमें रम गई। वह नही जानती थी कि जीवन का यह भी रूप है ; उसका यह भी चमकता पहलू है। उसे अपने सारे वैभव का, शृगार का, यह रूप फीका लगने लगा। वह जैसे उसके घर आकर अपने रूप और सौन्दर्य का हल्कापन अनुभव करने लगी हो; अब उसे शेफाली के सामने अपने इस रूप में शरम आती हो और यही वास्तविक ढग से मनुष्य का शुद्ध रूप हो। यही सब वह बैठी-बैठी सोचने लगी।

इसी समय शेफाली आकर उसके पास जमीन पर बैठ गई और बोली, "तुमको बैठने मे कष्ट हो रहा होगा। मै शुभदा से कई बार कह चुकी हूँ, अपने कमरे को सजाकर रखा करो। आवश्यक सामान ले आओ।"

शुभदा चुप रही। साधना बोली, "आप महान् है जीजी। हम लोग आपके सामने तुच्छातितुच्छ है, केवल शरीर विलासी।" इतना कहकर साधना ने शेफाली के पैर पकडने को हाथ बढाए।

शेफाली ने उन्हे बीच ही मे रोककर कहा, "इस पगली शुभदा ने न जाने तुमसे क्या-क्या कह दिया होगा। तुम इसकी बातो मे न आना। हॉ, कहो क्या बात है?" इसके साथ ही उसने हाथ की घडी देखकर कहा, "मुझे अभी दस मिनट मे फिर बाहर चले जाना होगा।"

साधना क्या कहती, वह तो केवल शेफाली से मिलने आई थी। शुभदा के सम्बन्ध मे उसने बहुत कुछ सुन रखा था। उसकी सगीत-विशेषज्ञता तथा लोकप्रियता ने उसे उससे मिलने तथा परिचय बढाने के लिए प्रेरित किया था। शुभदा के सरल और मोहक स्वभाव ने उसके हृदय पर अच्छा प्रभाव डाला। दोनो ने जी खोलकर बाते की। पढने-लिखने से लेकर कालेज, सगीत, पढ़ाई का उद्देश्य और अन्त मे शेफाली के स्वभाव, उसकी निस्पृहता आदि सब विषयो पर खुलकर बातें हुई। शुभदा के स्वभाव में उसे लगा कि यह लडकी बातूनी होते हुए भी भद्र एव शिष्ट है। सभ्यता उसकी बात-बात में टपक रही थी। किसी के प्रति उसके हृदय का दुर्भाव प्रकट नही हो रहा था, जब कि साधना ने स्वय अपनी बात में रुचि-अरुचि का प्रश्न खडा करके किसी की निन्दा और किसी की स्तुति की थी। वस्तुत शुभदा ने शेफाली के पास रहकर एक ही बात सीखी कि अप्रिय लगने पर भी निन्दा किसी की भी न की जाय। उस अप्रिय व्यक्ति के सम्बन्ध मे चुप रहने पर वक्ता के चरित्र की विशेषता प्रकट होती है। स्वय शेफाली इसका आदर्श थी। शुभदा को यह ढग बहुत ही पसन्द आया और उसने चरित्र की ऊँचाई के लिए या कुलीनता की दृष्टि से इसे स्वीकार भी किया। शुभदा चाहे अब

जिस अवस्था में हो, वह यह बात कभी नही भूलती कि वह मधुसूदन वसाक की लडकी है—एक धनी परिवार की कन्या, जिसके महत्त्व को उजडने से पहले सभी लोग स्वीकार करते रहे है। मधुसूदन वसाक ने खूब रुपया कमाया। इसके पूर्व भी उनके पास बाप-दादो के पास सम्पत्ति थी। उस सम्पत्ति मे बढती करते हुए वह एक बात कभी नही भूले कि उनका वश नीच वर्ग के कायस्थो मे भी सम्पन्न है। शादी ब्याह के मामले मे ही धन की ऊँचाई प्रकट होती है। शुभदा ने भी इस सस्कार को अपने वश से पाया था। सम्पत्ति के अभिमान के कारण उसने हीरादेई को तुच्छ समझा। शेफाली से आग्रह किया कि उसे कोई छोटा-मोटा काम देकर ही उसका पालन-पोषण किया जाय। यद्यपि अपने सम्बन्ध मे उसने यह पद्धति लागू नही की। यही कारण है कि उसे कभी-कभी अपनी वर्तमान अवस्था के प्रति विरक्ति होती, किन्तु शेफाली के निश्छल प्रेम ने उसे अभिभूत कर लिया था।

शेफाली ने उससे कभी किसी प्रकार का दुराव नही किया था। अधिकतर रुपया-पैसा शुभदा के पास ही रहता था। शेफाली जो भी फीस लाती, वह प्राय शुभदा को ही देती थी। वही उसको बैंक मे जमा करने भेजती थी। यही नही, शेफाली के कपडे आदि का ध्यान भी शुभदा ही रखती थी। एक तरह शेफाली शुभदा जैसी बहन पाकर घर की चिन्ता से मुक्त थी। एक बार शेफाली ने हीरादेई को घर मे रखते हुए उसे ही खर्च चलाने का भार देने की सोची थी, किन्तु न जाने क्या सोचकर वह रह गई। फिर भी रसोईघर का सारा भार शुभदा के कहने से ही उसे दिया गया था। वस्तुत शेफाली शुद्ध और निष्कपट हृदय की स्त्री थी। यही कारण है जो कोई भी उसके परिचय मे आया उसे शेफाली के द्वारा कोई कष्ट नही हुआ। शुभदा का भी यही हाल था। उसे शेफाली से नि:सीम प्रेम ही नही पूर्ण अधिकार भी मिला था। कभी कोई बात शेफाली ने शुभदा के मन के प्रतिकूल नही की। इसी तरह शुभदा भी बहन की निष्ठा, उसके विचारो का आदर करना

अपना कर्तव्य समझती थी। एक तरह से शुभदा और शेफाली को एक ही समझा जा सकता था। इसीलिए साधना के सामने शेफाली ने शुभदा की बात पर ध्यान न देकर उसके द्वारा की गई प्रशसा को अतिरेक बताया। फिर भी शेफाली की निष्कपट भाव-भगी, कर्तव्यनिष्ठा के प्रति साधना पहले से ही प्रभावित थी।

शुभदा ने हँसते हुए साधना से कहा, "तुमने जीजी के सोने का कमरा नही देखा है। मालूम होता है किसी सन्यासी का कमरा है। घोर सरदी के दिनो मे भी यह रजाई नही ओढती, केवल कम्बल से काम चलाती है। सबेरे छ. बजे नहा-धोकर रोगियो को देखने के लिए तैयार हो जाती है।"

"क्या करूँ, सरदी ही नही लगती, तो क्या जबरदस्ती कपड़े लादूँ? फिर शुभदा तो अभी बच्ची है।"

"हाँ, आप बूढी हो गई है जीजी," शुभदा ने उत्तर दिया।

"तो क्या तू मेरा मुकाबला करेगी री! मै कहती हूँ आज ही नये फर्नीचर के लिए आर्डर दे आ। एक अच्छा-सा ड्रेसिंग टेबल कुछ सोफा सेट आदि इस कमरे मे होने जरूरी है।"

"जिस दिन आप सन्यास छोड देगी उसी दिन देखेगी मै कैसे घर सजाती हूँ।"

"हाँ-हाँ, मेरे ऊपर ही शुभदा को रोष है साधना, क्या करूँ? मै सोचती हूँ क्या इसी तरह नही रहा जा सकता?"

"तो आप इतना बडा तप किस लिए कर रही है जीजी? मुझे तो ऐसा लग रहा है कि मै भी आज से नीचे सोया करूँ और अपने कमरे का सारा सामान निकालकर बाहर फेक दूँ," साधना ने गम्भीर होकर कहा।

"ऐसा कही सोचते है? राममोहन बाबू क्या कहेगे? मै किसी रोज जाकर उनसे कह दूँगी कि कृपा करके साधना का मेरे घर आना रोक दीजिए। अच्छा, तुम लोग बैठो। शुभदा! साधना बहन को

जल-पान कराओ न ; मै चली । न जाने मेरी उस रोगिणी का क्या हाल होगा ?"

"कौन रोगिणी है वह ?" साधना ने पूछा ।

"एक चमार के लडके की बहू ! उसके पेट मे रह-रहकर दर्द उठता है । बडा गरीब है बिचारा, जाऊँगी कल ।"

इसी समय नौकर ने आकर खबर दी कि रामकुमार सेठ की मोटर आ गई है ।

शेफाली चल दी । उसने जाते-जाते हीरादेई को बुलाकर शुभदा की सहायता करने को कहा और बैग उठाकर चली गई ।

अनमने भाव से हीरादेई चाय बनाकर ले आई और दोनो बैठकर चाय पीने लगी ।

जगन्नाथ का पिछले कई दिनो से कोई पता नही था । वह अपने कम्यूनिस्ट साथियो के साथ कहाँ चला गया, इसका हीरादेई को कोई ज्ञान न था । और स्पष्ट तो यह है हीरादेई ने ऐसा सुअवसर पाकर उसकी परवाह करना भी छोड दिया था । थोडे दिनो तक तो वह बडी प्रसन्न रही । शेफाली और शुभदा की समान भाव से सेवा करती रही, किन्तु इधर पिछले कुछ दिनो से उसका रूप बदल गया था । शुभदा के प्रति हीरादेई की भावना का ज्ञान शेफाली को नही था । शुभदा ने भी उस सम्बन्ध मे उससे कुछ नही कहा था । उसके बच्चे अब पहले से अच्छे रहते थे । यथासमय पढ़ने जाते । इधर एक घटना ने हीरादेई में एक नवीन परिवर्तन कर डाला ।

गिरधर प्रायः शुभदा के पास आता और घण्टो उसके पास बैठा रहता । हीरादेई पहले तो उत्सुकतावश दोनो को छिप-छिपकर देखती

रही, फिर उसे गिरधर के प्रति आकर्षण हुआ। वह खूबसूरत जवान और कोमल प्रकृति का युवक था, जब कि उसका पति जगन्नाथ एकदम उजड्ड और उच्छृखल था। वह जगन्नाथ के अभाव में गिरधर के सम्बन्ध मे सोचती रहती, किन्तु गिरधर ने कभी उसकी तरफ देखा भी नही। हीरादेई ने कई बार उसके आने पर मुस्कराकर उसका सत्कार किया, उसके स्वागत के लिए स्वय शुभदा के बिना कहे चाय-मिठाई ले आई, उससे बात करने उसके पास बैठने की चेष्टा की, किन्तु प्रसग किसी तरह भी आगे नही बढा। गिरधर निर्लिप्त भाव से यथानियम आता और सीधा शुभदा के कमरे मे चला जाता। वही हास-परिहास, सगीत-कविता का प्रवाह चलता रहता। कभी-कभी हीरादेई भी उनके पास आकर बैठ जाती और बडे मनोयोग से उनकी बातचीत चुपचाप सुनती रहती। गिरधर कविता सुनाता, गीत गाता और शुभदा कभी-कभी तानपूरा लेकर उसी के गीत स्वर से गाती। हीरादेई इन सभी गुणो से वचित थी। न तो वह पढी-लिखी थी, न उसे गाना ही आता था। इसी से प्रेरित होकर उसने सरोज की सहायता से पढना भी शुरू कर दिया था, किन्तु वह काम किसी तरह ठीक-ठीक नही चल सका। एक दिन शेफाली ने अचानक उसे पढते देखा तो प्रेम से कहा—"हाँ, हीरादेई, खाली समय मे अवश्य पढा करो। यह अच्छा है।" परन्तु हीरादेई ने अपने-आप थोडे दिनो बाद किताबें उठाकर रख दी।

अब वह गिरधर को प्रसन्न करने के लिए शृगार करके उसकी प्रतीक्षा मे बाहर खड़ी हो जाती। शुभदा का कमरा ऊपर था, जहाँ शेफाली रहती थी। हीरादेई नीचे की एक कोठरी मे रहती। फिर भी गिरधर का उधर ध्यान न गया। जितनी ही गिरधर की ओर से निरपेक्षता बढ़ती जाती उतनी ही तेजी से वह उसकी ओर आकृष्ट हो रही थी। उसे निश्चय हो गया था कि शुभदा का गिरधर के साथ अनुचित सम्बन्ध है तभी तो वह उसके पास आता है। ये पढी-लिखी लडकियाँ इसी तरह लडको को फाँसती है। कभी-कभी हीरादेई को लगता, शुभदा

अवश्य गिरधर के साथ शादी कर लेगी । जब पिछले दिनो से प्राणनाथ ने उस घर में प्रवेश किया तब उसे लगा, वह लड़की अब प्राणनाथ के प्रति आकृष्ट हो रही है । उससे हँसकर बाते करती है । तो क्या यह प्राणनाथ बैरिस्टर से शादी करना चाहती है ? फिर तो गिरधर उसका ही होगा । यह देखकर वह भीतर ही भीतर एक बार प्रसन्न हो उठी ।

हीरादेई की अवस्था लगभग अट्ठाईस साल की थी—रग गोरा, छरहरा बदन, विलासिता से पूर्ण मादक और सुन्दर आँखे, देखने मे आकर्षक । इसी बीच मे एक दिन उसने ऊपर शुभदा के कमरे मे जाते हुए गिरधर से कह ही तो दिया—

"गिरधर बाबू, लक्षण अच्छे नही है, प्राणनाथ इधर बहुत आने लगे है ।" इसके साथ ही उसने गिरधर के ऊपर अपनी रसीली आँखो से एक कटाक्ष किया ।

गिरधर कुछ देर के लिए सिहरा, लेकिन उसकी समझ मे कुछ भी नही आया । वह बोला—

"मै समझा नही ।"

"इसमे ऐसी समझ में न आने वाली बात ही क्या है ?" हीरादेई ने तत्काल सामने आकर कहा ।

गिरधर की समझ मे फिर भी कुछ नही आ रहा था । वह अपनी एक कविता के ध्यान मे चला आ रहा था कि अचानक हीरादेई ने यह वाक्य कह डाला । इसके साथ ही बिना कुछ उत्तर दिये वह ऊपर चला गया । उसी समय उसने देखा प्राणनाथ बैठक मे बैठा शुभदा से बाते कर रहा है । वह भी चुपचाप जा बैठा । प्राणनाथ उस समय मनुष्य के चरित्र पर अनथक व्याख्यान झाड रहा था । बीच-बीच मे अपने विलायत के अनुभव भी सुना रहा था । शुभदा कुछ दूर पर बैठी मनो-योग से उसकी बाते सुन रही थी । इसी समय गिरधर को हीरादेई की बात की सचाई का कुछ आभास हुआ और उसे लगा कि हीरादेई क्या

कहना चाहती थी गिरधर चुप बैठा रहा। शुभदा ने पहले की तरह न तो उसका स्वागत किया और न बोली ही। वह प्राणनाथ की बातें सुनती रही। प्राणनाथ थोडी देर बाद जब उठकर चलने लगा तो शुभदा उसे जीने तक पहुँचाने गई। फिर न जाने क्या सोचकर वह डिस्पैन्सरी की तरफ चली गई। जब लौटकर आई तो देखा गिरधर नही है, वह चला गया है।

उधर गिरधर को जीना उतरते हुए हीरादेई ने देखा था। वह फिर उसके सामने आकर खडी हो गई। उसने कहा, "गिरधर बाबू, क्या इधर नही आओगे ?"

गिरधर पहले तो हिचकिचाया, फिर उसके कमरे में चला गया। जाकर खाट के कोने पर बैठ गया।

"कहिए, जगन्नाथजी आजकल कहाँ है ?"

"न जाने किस चक्कर मे पडे है। पिछले दिनो आध घण्टे के लिए आए थे, फिर चले गए। अब उनका कुछ भी पता नही है।"

"वैसे आप ठीक तो हैं ?"

"हाँ, आपकी दया है..."

"अच्छा चलूँ, मुझे कई जरूरी काम है," इतना कहकर बिना हीरादेई की तरफ देखे गिरधर गुम-सुम निकल गया।

जब दूसरे दिन कॉलेज मे शुभदा ने गिरधर को देखा तो उसने पूछा, "कल क्या कुछ जल्दी थी जो बिना सूचना दिये ही चले गए। मुझे पीछे ध्यान आया, उस समय प्राणनाथ की बातो मे मै ऐसी मोह गई कि तुम्हारे आने का ध्यान ही न रहा। सचमुच वह आदमी बडा विद्वान् है। तुम चुप क्यो हो ? क्या कल का कुछ बुरा लग गया ?" वह बात पूरी कर भी न पाई थी कि घण्टा बज गया और वह अपनी क्लास में चली गई।

शुभदा को गिरधर के रुख में कुछ अजीब-सा लगा जैसे वह उससे रूठ गया हो, या कोई और बात हो गई हो। उस घण्टे में उसका पढने

में मन लगा ही नही और वह बाहर आकर फिर गिरधर की तलाश करने लगी किन्तु वह मिला नही। शुभदा चुपचाप कॉलेज से लौटकर घर आ गई और अपने बिस्तर मे लेट रही।

जिस दिन हीरादेई ने शुभदा को जवाब दिया था उसी दिन से शुभदा ने हीरादेई से किसी भी काम के लिए कहना छोड दिया था। वह नौकर को बुलाकर सीधे उसी से बात करती। अचानक एक दिन शेफाली ने शुभदा के कमरे में घुसते ही देखा कि शुभदा स्टोव जलाकर चाय बना रही है।

वह शुभदा के बिस्तर पर लेटकर बोली, "मै बहुत थक गई हूँ आज तो।"

"तो मै एक प्याला तुम्हारे लिए भी रखे देती हूँ, जीजी !"

"हाँ, बना दो भाई," इतना कहकर शेफाली शुभदा की खुली किताब पर अचेतन नजर डालती हुई बोली, "हीरादेई को बुला लिया होता, वह चाय बनाकर पिला देती। तुम्हे तो आजकल खूब मन लगा कर पढना चाहिए, शुभदा !"

"मैने कहा, बात ही कितनी-सी है। फिर हर समय हीरादेई को बुलाकर चाय बनाने के लिए कहना क्या ठीक है ? इधर पढ़ते-पढते थकावट मालूम हुई थी।"

"ऐसी अवस्था में उसे और भी तुम्हारा ध्यान रखना चाहिए।" इतना कहते-कहते शेफाली झपकी लेने लगी। शेफाली को रोगियो की देखभाल से लौटा जानकर हीरादेई शुभदा के कमरे में आई, किन्तु शेफाली को सोया जान और शुभदा को स्टोव जलाते देखकर ठिठकी खडी रह गई। इसी समय शुभदा ने चाय का प्याला बढाते हुए शेफाली को उठाया।

उसने चाय पीते हुए हीरादेई से कहा, "हीरादेई, शुभदा के खाने-पीने का विशेष ध्यान रखा करो। आजकल वह पढ रही है। तुम आज-कल क्या करती रहती हो ?"

हीरादेई ने समझा अवश्य शुभदा ने मेरी शिकायत की है, यही कारण है, तभी तो शेफाली ने यह कहा है, यह बडी दुष्ट है, मुझे डाक्टर की नजरो मे गिराना चाहती है। मै इतनी गिरी तो हूँ नही। मै भला इससे किस बात में कम हूँ ? यह अनाथ लडकी ! पढती है तो मेरे ऊपर कोई अहसान है ? मै इसके नाज-नखरे क्यो बरदाश्त करूँ ? इन्ही विचारो मे भुनभुनाती हीरादेई चुपचाप खडी रही।

हीरादेई को चुप देखकर शेफाली कुछ चौकी, फिर बोली, "क्या बात है यहाँ बैठ जाओ न ?"

हीरादेई फिर भी खडी रही। थोडी देर बाद शेफाली ने देखा कि हीरादेई की आँखो में आँसू उभर रहे है। वह एकदम घबरा गई और उसके पास जाकर उसके सिर पर हाथ फेरती हुई बोली, "क्या बात है, कोई दुःख है क्या ?"

हीरादेई की आँखो से अविरल अश्रुधारा बह चली। शुभदा जो अब तक किताब लेकर पढने जा रही थी रुक गई और हीरादेई की तरफ देखने लगी। वह जानती थी, हीरादेई मेरा काम नही करती, बल्कि काम के लिए पुकारने पर दरगुजर कर जाती है। फिर भी उसने कभी कुछ नही कहा। शेफाली से कोई शिकायत नही की।

हीरादेई शेफाली की किसी बात का जवाब न देकर रोती हुई कमरे से बाहर चली गई। दोनो ही हैरान थी। शेफाली ने रसोइये को बुला-कर पूछा। उसने भी अपना अज्ञान ही प्रकट किया।

"तुमने तो कभी इसे कुछ नही कहा, शुभदा ?"

"नही, मुझसे तो यह बोलती भी नही है।"

"क्यो ?"

"न जाने। मै यदि किसी काम को कहती हूँ तो टाल देती है, इसी से मैने किसी काम के लिए कहना ही छोड दिया है।"

"क्या बात हुई ?"

"मै नही जानती।"

शेफाली उठकर हीरादेई के कमरे में गई। वहाँ उससे जो बातें हुईं, उसका साराश यह है कि हीरादेई शेफाली का अनुग्रह मान सकती है शुभदा को वह स्वामिनी नही मान सकती। वह तो और भी उससे गई-बीती अनाथ लडकी है, आदि-आदि।

शेफाली दुखी होकर अपने कमरे मे लौट आई। उसके घर मे यह प्रकरण बिलकुल नया था। उसे लगा कि हीरादेई ही दोषी है। शुभदा ने आज तक उसके सम्बन्ध में कुछ भी नही कहा। हीरादेई को शुभदा से ईर्ष्या है कि क्यो उसके साथ वैसा व्यवहार होता है ? यही इस जलन का कारण है। किन्तु यह तो हीरादेई का शेफाली के ऊपर भी अनुचित दबाव है। उसे क्या अधिकार है कि वह जबर्दस्ती शेफाली से शुभदा के समान स्नेह का दावा करे। मैने तो उसे दया करके ही यहाँ रहने और सहायता देने का काम किया है। वह शुभदा के समान कैसे हो सकती है ? यह नही हो सकता। मैं आज उससे साफ कह दूँगी। फिर शेफाली सोचने लगी। क्या हीरादेई का ऐसा सोचना स्वाभाविक नही है ? उसकी दृष्टि मे तो शुभदा और हीरादेई दोनो ही समान स्नेह की अधिकारिणी है। वह भी तो सहज स्वभाव से मुझे अपना मानती है। यही बाते वह पडी-पडी तब तक सोचती रही जब तक हीरादेई ने स्वयं आकर उसे खाना तैयार होने की सूचना नही दी। शुभदा अपने कमरे मे पढ रही थी। उसने शुभदा को भी खाना खाने के लिए तैयार होने को कहा और आप उठकर स्नानागार मे चली गई।

वस्तुत हीरादेई ऊपर का काम करती थी, रसोई तो नौकर बनाता था। हीरादेई ऊपर के साधारण काम के अलावा सिर्फ अपने बच्चो की देखभाल करती या आवश्यकता पडने पर रसोई का काम देखती, किन्तु खाना कभी नही बनाती थी। रसोइया दोनो समय का भोजन बनाकर रात को चला जाता था। यह सब शेफाली ने हीरादेई के आने पर किया था। इससे पहले रसोइया उसी कोठरी मे रहता था, जिसमे अब हीरादेई रहती थी। हीरादेई की जीवन से एक-दो बार खटपट भी हो

चुकी थी, किन्तु शुभदा से सम्बन्ध बिगड़ें जाने पर उसने जीवन से मेल कर लिया था। इसीलिए वह कभी-कभी रात गये भी हीरादेई के कमरे मे बैठा रहता। अब वह ऊपर की देखभाल तथा डिस्पैन्सरी मे कम्पाउण्डर की सहायता करता था, जो घर के बाहर बाजार की तरफ थी। बूढा मोहन रात को डिस्पैन्सरी मे ही सोता था। जीवन अधेड उम्र का व्यक्ति था। हीरादेई जीवन से कभी-कभी जगन्नाथ की बातें कहकर अपने भाग्य को कोसती या गिरधर, प्राणनाथ और शुभदा की बाते करती।

शुभदा को भला-बुरा कहने मे वह कभी न चूकती। उसी ने शुभदा की पूर्वकथा की बात भी फैला दी थी, किन्तु जीवन परिवार वाला आदमी था; उसे नौकरी करनी थी। वह क्यो शुभदा को बुरा-भला कहकर अपनी नौकरी खोता! वह जानता था कि शेफाली और शुभदा दो नही है। उसी के हाथ मे सारी बागडोर है। वह चाहने पर उसे निकाल भी सकती है। यही बात उसने एकाध बार हीरादेई से भी कही थी, किन्तु उसकी समझ मे यह बात किसी तरह नही आई। खाना खाते समय शेफाली ने हीरादेई से कहा कि वह खाना खाकर ऊपर कमरे मे मिले।

रात को सबके सो जाने पर हीरादेई शेफाली के पास आई। वह उस समय लेटी-लेटी कोई किताब पढ रही थी। वह हीरादेई को देखते ही उठकर बैठ गई और उसे अपने पास ही बिस्तर पर बिठाकर कहने लगी—

"देखो हीरादेई, हम लोग यहाँ एक परिवार की तरह रहते है। सब समान है, न कोई छोटा है, न बडा। और मैने जो तुमको यहाँ बुलाया है तो नौकर समझकर नही, घर के एक आदमी की तरह। इसलिए आपस मे वैर-भाव रखना अनुचित है, फिर यदि शुभदा ने कभी कुछ अनुचित कहा हो तो तुम मुझसे कह सकती हो। हीरादेई, तुम उम्र में शुभदा से बडी हो, बच्चा समझकर उसे माफ भी कर सकती हो।

इस प्रकार का ईर्ष्या-द्वेष तुम्हे अच्छा नही लगता। यदि आज वह अनाथ है तो कल वह एक धनी घर की लडकी भी तो थी।" इतना कहकर शेफाली हीरादेई की तरफ देखने लगी। उसने फिर कहना आरम्भ किया, "तुम्हे मालूम है कि मै तुम्हे कितने चाव से यहाँ लाई हूँ। फिर मै जानती हूँ कि तुम पर मेरा कोई अधिकार नही है। इच्छा होने पर तुम मुझे छोडकर जा सकती हो। तुम्हारे बच्चे मुझे भूल जा सकते है। जगन्नाथ भी यदि चाहे तो तुम्हे किसी समय ले जा सकते है। किन्तु शुभदा' "

शुभदा का नाम आते ही शेफाली चुप हो गई। हीरादेई ने नीची निगाह किये यह सब सुना और बोली, "मै आपका अहसान मानती हूँ, बहन जी ! आपने हमे बचा लिया, नही तो न जाने हमारी क्या दशा होती।" इतना कहकर हीरादेई शेफाली के पैरो पर गिर पडी।

"ऐसा न कहो; वैसे तो कोई भी सम्बन्ध स्थायी नही है, मानने का ही सम्बन्ध है। मै तुम पर विश्वास करती हूँ, तुम मुझे अपना मानती हो, बस यही मुझे सन्तोष देने के लिए काफी है।"

इसके बाद उसने हीरादेई को बिदा किया, जैसे उसके हृदय का एक बोझ हल्का हो गया हो ! वह प्रसन्नता का अनुभव करने लगी। उसे लगा मनुष्य के स्वभाव में जो द्वेष छल-कपट के रूप में पाये जाते हैं, वे भी एक प्रकार से मानसिक रोग है। उसे अनुभव हुआ जैसे उसने एक रोगी को अच्छा कर दिया। किताब उसने बन्द कर दी और शुभदा के कमरे की ओर गई। शुभदा उस समय पढते-पढते किताब पर सिर रखे सो रही थी। बिजली की बत्ती उसी तेजी से जल रही थी। लगातार एक ही रूप में शुभदा के मुख पर शैशव और यौवन की सन्धि शान्त भाव से खेल रही थी। एक का उतार था और दूसरे का चढ़ाव, किन्तु उतरते-उतरते भी शैशव जैसे अपने भोलेपन का प्रभाव छोडे जा रहा था। किशोरावस्था भी एक सौन्दर्य है, जो मनुष्य की निश्छल प्रकृति पर नाचता रहता है। उसमें न किसी प्रकार का कपट होता

है, न द्वेष; बल्कि अपने जीवन का प्रकृत रूप। उसके सिर के बाल लहरिया बनकर जो इधर-उधर हवा मे उड रहे थे, उनमें शुभदा के मुख का निश्छल सौन्दर्य द्विगुणित हो उठा था। बहुत देर तक वह उसे देखती रही, जैसे भोलेपन का रस-पान कर रही हो। उसने उसके बालो को हटाया, जो एकान्त पाकर चुपचाप मुख-छवि का रस-पान कर रहे थे और धीरे-धीरे पास बैठकर उसके मुख पर हाथ फेरने लगी। उसने उसके खुले अगो पर चादर डाल दी और सोचने लगी कि आज शुभदा उसी की है, जैसे काल की लहर मे बहते हुए दो तिनको की तरह दो प्राणी एक जगह आकर इकट्ठे हो गए हो। फिर भी जैसे शरीर और प्राण से उसने शेफाली के लिए समर्पण कर दिया हो और सोते-सोते शेफाली को आत्मदान करके वह अपने प्रति निश्चिन्त हो गई हो। वह निश्चिन्तता ही मानो उसकी वह सुख-निद्रा है। जैसे वह एक प्रकार की निश्चिन्तता में डूब गई है। कितनी तल्लीनता है यह इसकी ! नीद का भी अपना एक सौन्दर्य है। वही मनुष्य के निश्छल रूप की सत्य प्रकृति है जिसमे न चिन्ता है, न किसी प्रकार का सोच। आगत-अनागत दोनो की निर्द्वन्द्वता का यह भाव ही उसे शुभदा की नीद मे दिखाई देने लगा। उसने धीरे से किताबो पर से उसका सिर उठाकर तकिये के सहारे कर दिया, किताबे उठाकर एक ओर रख दी। उसे सुलाने के बाद जैसे ही वह चली कि शुभदा जाग पडी। शेफाली को देखते ही मुस्कराकर बोली, "पढते-पढते नीद आ गई थी जीजी।"

"तो सो जा न। मै तो यही देखने आई थी।"

"नही, अभी तो मै पढूँगी। समय भी तो कुछ नही हुआ है।"

इतना कहकर वह फिर किताब उठाकर पढने लगी। यह शुभदा के बी० ए० का फाइनल इयर है। इसीलिए वह दिन-रात किताबो मे जुटी रहती है। शेफाली के बार-बार कहने पर भी शुभदा सोई नही, किताब खोलकर पढने लगी। शेफाली चुपचाप उठकर चली गई और अपने बिस्तर पर लेट रही। उसका यह नियम था कि वह रात को गीता या

उपनिषद् पढने के बाद नलू को, जो उसके पास के कमरे में सोता था, एक बार देखती फिर सो जाती थी। इधर कुछ दिनो से रात को नलू जाग पडता और हीरादेई के लिए चिल्लाता, तब से हीरादेई उसे अपने पास सुलाने लगी थी।

शेफाली का जीवन इसी प्रकार चल रहा था। कभी-कभी वह सोचती—क्या वह इसी तरह रहेगी, इसी तरह रोगियो की सेवा करते उसका जीवन बीत जायेगा, क्या यौवन का यही उपयोग है या कुछ और भी ? कभी उसे एक प्रकार की उद्विग्नता होती, जैसे वह अपना कोई नया मार्ग भी निश्चित कर लेना चाहती हो। निश्चय ही आज यदि राममोहन को यह ज्ञात हो जाय कि वह उसकी पहली पत्नी है तो वह उसे सहर्ष स्वीकार कर लेगा। पर क्या यह सब करने के लिए ही उसने पढा है, रोगियो की सेवा का प्रण किया है ? नही, वह ऐसा कदापि न करेगी। वह उसका मरण-दिवस होगा, उसकी प्रतिज्ञा का तिरस्कार, उसके अभिमान का पतन ! और फिर साधना, जिसे उसने प्राणदान दिया···तो क्या शादी ऐसी ही है, यह आग के सामने भाँवरें डाल लेना ही क्या शादी है ? इसका ज्ञान न राममोहन को है न पूरा-पूरा उसे। वह चाहे तो और शादी कर सकती है। कोई भी व्यक्ति · यह प्राणनाथ बुरा तो नही है—विद्वान्, एकदम व्यावहारिक। यही सब वह सोचती रही। उसने सोचा, ऐसे कई लोग है जो उसके सकेत पर विवाह करने को तैयार हो सकते है, जो उसके सौन्दर्य पर, उसकी सेवा-वृत्ति से अत्यन्त प्रभावित है।

शेफाली की वैसे उम्र ही क्या थी ! वह बीस और तीस के उद्दाम झूले पर झूल रही थी। यौवन का प्रखर वेग उसके अग-अग से टपक रहा था, किन्तु शिक्षा और संस्कार, शील और विवेक की लगाम में कसे हुए यौवन के घोडे इधर-उधर नही हो पाते थे। वैसे जब वह किसी रोगिणी के पति या भाई से बात करती और उसकी निस्पृह बडी-बडी आँखे उनके सामने होती तो कदाचित् ही कोई ऐसा व्यक्ति होगा जो

उन मादक और शरीर के जोड-जोड को हिला देने वाली आँखो से प्रभावित न होता हो ! फिर भी उनमें इतना तेज था कि साधारण क्या असाधारण व्यक्ति भी उसे देखकर सिहर उठता था। बस यही चीज थी जो शेफाली की रक्षा करती थी। लोगो को उसका सौन्दर्य जहाँ बहका देता था, हृदय को विकसित कर देता था, वहाँ उसकी प्रकृति की निस्पृहता, बेलौसपन, पुरुषो को आगे बढने से रोक देते थे। फिर भी परोक्ष रूप से वह नगर के युवको की चर्चा का विषय थी। स्वय प्राणनाथ बैरिस्टर शेफाली के प्रति आसक्त होते हुए भी उससे भीतर ही भीतर एक प्रकार से डरता भी था। उसके शरीर और हृदय का सारा सौन्दर्य रोगियो की निस्पृह सेवा की ओर मुड जाने के कारण जहाँ आकर्षणमय था, वहाँ उसके प्रति लोगो के हृदय मे एक श्रद्धा का बीज भी बो चुका था। इसीलिए उसके सौन्दर्य के प्रति आकृष्ट होते हुए भी कोई अधिक निकट आने का साहस नही कर सकता था। नगर की जनता अधिकतर एक देवी के रूप में उसे पूजती थी और स्त्रियाँ तो बीमार होने के बाद किसी और से इलाज कराना ही पसन्द नही करती थी। उसकी मीठी वाणी, सान्त्वना और सद्भावना से उनकी आधी बीमारी दूर हो जाती थी। राममोहन और उसकी पत्नी साधना ने तो शेफाली को इतना प्रसिद्ध कर दिया कि व्यापारी-वर्ग उसके अतिरिक्त और किसी को बुलाता ही न था। जैसे वह अमीरो के यहाँ जाती वैसे ही गरीबो के यहाँ भी जाती थी। जो फीस के रूप मे अमीरों से मिलता, उसका अधिक भाग गरीबो को वह दे देती। फिर कई बार उसे पैदल चलते देखकर लोग अपनी मोटर-ताँगा खडा कर लेते और उससे बैठने का आग्रह करते, किन्तु न तो वह किसी की मोटर मे बठती, न ताँगे मे, मुस्कराकर धन्यवाद देती और अपने रास्ते चली जाती। इसीलिए ऊँचे से ऊँचे शिक्षित-वर्ग से लेकर गरीबो तक की जबान पर वह एक देवी की तरह आदर का पात्र बन गई थी।

यही सब जानकर एक दिन प्राणनाथ ने आकर हँसते-हँसते कहा,

"यदि कुछ दिन और ऐसा ही रहा तो लोग आपकी मूर्ति बनाकर पूजने लगेंगे, सुनती है आप ?"

शेफाली उस समय एक भयकर रोगी को देखकर लौट रही थी। रोगी की परिचर्या में उसके कपडे भी खराब हो गए थे और स्नान करने जा रही थी ताकि कपडे बदलकर ठीक हो जाय।

शेफाली उसी मन्द मुस्कराहट से बोली, "तो क्या करूँ प्राणनाथ बाबू ? यह असम्भव है कि कोई बीमार मुझे बुलावे और मै न जाऊँ। मुझे तो ऐसा लगता है, जैसे वह रोगी मुझे सेवा करने का अवसर देने के लिए ही बीमार पड गया हो। वह एक जलोदर की रोगिणी थी, जिसके पेट मे बेहद पानी भरा हुआ था। उसी की देखभाल में कपडे खराब हो गए। रात का समय था, ताँगा भी नही था और उसकी गरीबी देखकर दया आती थी। बच्चे भूख से रो रहे थे। मैने दस रुपये का नोट देकर उन्हे शान्त किया और रोगी की सेवा में लग गई। वही से आ रही हूँ।"

शुभदा उसी समय अपने कमरे में आई और बोली, "जीजी की आधी से अधिक आमदनी रोगियो की दवा-दारू में खर्च हो जाती है। उसमे से आधा वह गरीबो मे बाँट देती है और बाकी मे हम लोग गुजर करते हैं।"

हीरादेई जो पास ही खड़ी शेफाली के कपडे लिये जा रही थी बोल पडी, "वह शेष भी हम लोगो के लिए है, बहनजी का तो उसमें भी कुछ भाग नही है।"

प्राणनाथ जो कभी अपनी महत्ता को धक्का लगते देखकर बौखला उठता था और अब भी जिसने हँसी में ऊपर के वाक्य कहे थे, भीतर ही भीतर चौक-सा उठा, जैसे उसे लज्जा का अनुभव हुआ हो। थोडी देर के लिए वह चुप हो गया। वह शेफाली के सामने अपने को बिलकुल हल्का और तुच्छ समझने लगा। उसे प्रतीत हुआ एक यह नारी है, जिसका अपना कुछ भी नही है और एक मै हूँ जिसे अपने स्वार्थ के

अतिरिक्त और कुछ नही सूझता। कितनी महान् है यह। सरदी के दिन थे। रात का समय और शेफाली भीगती हुई बाहर से आई और स्नानागार में चली गई। प्राणनाथ, जो केवल मनोरजन के लिए वहाँ आया था, शेफाली का यह रूप देखकर अपने हृदय में भीतर ही भीतर उसके प्रति श्रद्धा से भर उठा।

हीरादेई ने शेफाली को स्नान मे सहायता दी। शुभदा ने दौडकर उसके लिए गरम चाय का प्याला तैयार किया। प्राणनाथ यह सब देखता रहा, देखता ही रहा। इसी समय शेफाली ने सरदी से कांपते हुए चादर ओढे प्रवेश किया। हीरादेई ने दौड़कर अँगीठी तैयार की और शेफाली के सामने लाकर रख दी। प्राणनाथ ने लक्ष्य किया कि वही उज्ज्वल भव्याकृति, जिसमें किसी प्रकार की बनावट नही, चुपचाप आकर बैठ गई है। उसी समय नौकर ने आकर खबर दी कि एक व्यक्ति बाहर खडा मिलना चाहता है।

शुभदा ने तुनककर कहा, "जाओ कह दो, डाक्टर साहब इस समय नही मिल सकती। जाओ।"

किन्तु शेफाली न मानी और नौकर के साथ चली गई। थोडी देर बाद आकर बोली, "अभी नही जाना होगा शुभदा, सबेरे देखूँगी जाकर।"

शुभदा ने व्यग से कहा, "वही नही ले गया होगा, वरना आप तो पीछे हटने वाली है नही। प्राणनाथ बाबू, जीजी को आप देखते है, दिन-रात काम करके इन्होने अपने को कितना कमजोर कर लिया है। चाहे जितना कहो, मानती ही नही।" इसके साथ ही शुभदा रोने लगी।

"अरी पगली, तो अब मै कहाँ जाती हूँ? कभी-कभी कोई पुकारता है तो..."

"हाँ, शायद ही कोई अभागी रात होगी जब आपकी दो-तीन विजिट न होती हो। ठीक वक्त पर खाना नही खायँगी, सोएँगी नही। देखने को आँखे तरसती रहती है, बात करना मुश्किल है, लेकिन मजाल है जो जरा भी हम लोग रोक सके।" इतना कहकर फिर शुभदा

सुबकने लगी ।

शेफाली ने शुभदा की आँखे पोछते हुए प्यार का हाथ फेरा और चुप कराया । परन्तु शुभदा तो रोती ही जा रही थी । आखिर शेफाली ने कहा, "मै अपनी रात की विज़िट कम कर दूँगी । चलो हीरादेई, खाने मे क्या देर-दार है ? आज तो प्राणनाथ बाबू भी यही खाना खाएँगे ।"

हीरादेई ने शुभदा का यह रूप देखा और माना कि सचमुच मुझ में और शुभदा मे कितना अन्तर है। उसे लगा जैसे उसने शुभदा का मुका-बला करके शेफाली की नजरो मे अपने को कितना हल्का कर लिया । उसने खुद आगे बढकर शुभदा को चुप कराते हुए कहा, "शुभदा बहन, चलो उठो, अब बहनजी बाहर जाने वाली नही है ।"

प्राणनाथ, जो दोनो बहनो के निष्कपट प्रेम मे डूबा मग्न था चौक-सा पडा और बोला, "खाना तो मै खाकर ही चला आ रहा हूँ । आप क्या समझती है यह ग्यारह बजे रात में खाने का समय है ? यह तो सचमुच आप अपने पर अत्याचार कर रही है ।"

शेफाली ने आँख के इशारे से प्राणनाथ को इस तरह की बातें करने से रोक दिया, फिर भी शुभदा ने ताड ही तो लिया और बोली, "जीजी आपको रोक रही है, प्राणनाथ बाबू, ऐसा मत कहिए ।" इतना कहकर वह हँस पडी ।

शेफाली ने प्रेम-विभोर होकर कहा, "देखा तुमने, कितनी चालाक है यह मेरी शुभदा । भला मैंने क्या इशारा किया था ?"

सबने साथ-साथ खाना खाया । शुभदा अपने कमरे की ओर चली गई । प्राणनाथ बैठा रहा । शेफाली एक गरम चादर लेकर प्राणनाथ के पास आकर बैठ गई । थोडी देर दोनो चुप रहे । इसी बीच मे शेफाली ने कहा, "आखिर मनुष्य के जीवन की क्या उपयोगिता है, यही मै कभी-कभी सोचा करती हूँ । कभी-कभी तो मुझे ऐसा लगता है, यह सब व्यर्थ है। क्या इससे अच्छा जीवन का और उपयोग नही हो

चलता है। यह सब क्या है, क्या यह जीवन है ?" वह इसी तरह बहुत देर तक बोलती रही।

प्राणनाथ चुपचाप सुनता रहा। प्राणनाथ को कुछ विशेष रस तो उसमें नहीं मिल रहा था किन्तु वह शेफाली की चिन्ताधारा को भीतर से परखना चाहता था। वह जानना चाहता था कि आखिर इस रमणी के भीतर है क्या ? कौनसी प्रवृत्ति काम कर रही है ? उसने देखा जैसे सैक्स तो उसके भीतर रह ही नही गया है। इतनी सुन्दर रमणी के हृदय मे मौन वेगो की उत्क्रान्ति मानवता के धरातल से दब गई है। वह जानना चाहता था क्या कोई भी स्फुलिग ऐसा नहीं निकलता, जिसे पकडकर वह उसके सामने अपना हृदय खोल सके। वस्तुतः प्राणनाथ शुभदा की अपेक्षा शेफाली के प्रति अधिक अनुरक्त था। शेफाली के प्रति स्वत. हार्दिक आकर्षण के अलावा व्यावहारिक रूप से उसका एक स्वार्थ भी था। वह चाहता था कि यदि शेफाली उसे अपना सके तो उसका अर्थ-सकट भी सरल हो सकता था। असल मे प्रेक्टिस उसकी कुछ चल नही पा रही थी। जितना वह इस ओर प्रयत्न करता उतनी सफलता उसे नही मिलती थी। जो दो-एक केस मिल जाते थे, इनसे उसका गुजारा नहीं होता था। इसके अलावा स्वतन्त्र प्रकृति ने माता-पिता से उसको एक तरह से अलग कर दिया था। पिता ने साफ कह दिया था कि जितना वह उसे दे सकता था उतना उसने बैरिस्टर बनाने में खर्च कर दिया, अब उसके पास एक पैसा भी नही है।

प्राणनाथ बोला, "जहाँ तक मैं समझता हूँ मनुष्य के जीवन को समरस और जागरूक बनाने के लिए ससार मे एक ही वस्तु है प्रेम। इसी के आधार पर संसार मे रहकर भी वह ससार और अपने जीवन से नही ऊबता। क्या कारण है कि एक घोर बीमार आदमी भी जीना चाहता है, क्यो नही मरना पसन्द करता ? स्पष्ट है कि उसका ध्येय जीकर उस सुख को उठाना है जो वह प्राप्त करता रहा है या वह जो उसे अप्राप्य रहा है, जिससे उसकी तृप्ति नही हुई। जीवन एक

चिपचिपा लेसदार रस है, जो बराबर मनुष्य को अपने उस रस की ओर खीचता रहता है। जिसमे उस रस की जितनी कमी होती है उतना ही उसे मानसिक दुःख होता है और उतना ही वह जिन्दगी से ऊबता है। मुझे क्षमा करे शेफाली देवी!" इतना कहकर वह रुक गया।

शेफाली ने कहा, "हाँ, कहिए रुक क्यो गए? आपकी बाते मेरी समझ मे आ रही है।"

प्राणनाथ शेफाली से उत्साह पाकर फिर कहने लगा, "बात यह है कि आपके जीवन में सन्तुलन नही रहा है। आपके पेशे और स्वच्छन्द प्रकृति ने एक अन्त प्रसरित रस की धारा को दबा दिया है। वह कभी फूट उठती है, इसी से आपको कभी-कभी व्यग्रता का अनुभव होता है।"

प्राणनाथ कहने को तो कह गया, परन्तु उसे भय हुआ कि उसने शेफाली के निर्मल हृदय को ठेस तो नही पहुँचाई। वह चुप हो गया और शेफाली के मुख की ओर तीक्ष्ण दृष्टि डालकर देखने लगा। बाहर से कुछ व्यग्रता भी थी। इन दोनो भावो ने उसकी मुखाकृति को अजीब-सा बना दिया था। फिर भी शेफाली को ऐसा लगा कि जैसे वह उसके हृदय को पढ रहा हो।

वह कुछ देर के लिए अन्तःस्थ हो गई। उसके बाद उसने कहना शुरू किया, "हो सकता है आपकी बात ही ठीक हो, यद्यपि मै मानती हूँ कि मुझे अपने पेशे से काफी सुख मिलता है और मै उसे रुपया कमाने का या यश पाने का साधन नही मानती। फिर वह आधार केवल सेक्स ही तो नही है, व्यावहारिक रूप में वह किसी भी बात से हो सकता है, किसी भी रूप मे फूट पड सकता है।"

उत्साह पाकर प्राणनाथ ने अपनी बात और आगे बढाई और कहने लगा, "यह तो मानता हूँ कि आपको अपने पेशे में काफी सुख मिलता है और आप रोगियो की सेवा दत्तचित एव सुख पाने के लिए ही करती है, किन्तु क्या आप यह नही मानती है कि मनुष्य के हृदय का एक स्वाभाविक वेग भी है? उसके भीतर का सेक्स उसे कभी-कभी

उद्वेलित भी करता रहता है। इसके अतिरिक्त स्वभावजन्य उसकी चेतना ग्रन्थियो मे जो रस प्रवाहित होता रहता है वह अत्यन्त दब जाने पर भी कभी-कभी भडक उठता है वह मरता नही है। कोई भी वैसा प्रसग आने पर स्रोत की तरह फूट उठता है। आखिर आप प्रतिदिन ही तो गर्भिणी स्त्रियों को देखती है और यह देखती है कि एक नारी प्रसव-काल के समय का कष्ट केवल सन्तानोत्पत्ति के सुख की प्रतीक्षा मे भूल जाती है। हो सकता है, उसका ही अज्ञात प्रभाव आपके ज्ञान-तन्तुओ पर पडता हो और आप कभी यह सोचने लगती हो क्या मेरे जीवन में यह अभाव नही है।" प्राणनाथ ने मनोविज्ञान-शास्त्रो की तरह यह बात कही।

यह बात सुनकर शेफाली के हृदय में एक प्रकाश-सा हुआ। उसे अनुभव हुआ सचमुच यह बैरिस्टर बहुत अनुभवी है। न जाने इसने कितने स्त्री-चरित्रो का गम्भीर अध्ययन किया है। शेफाली ने जैसे उसे पूर्ण मनोयोग से सुना। उसे समझ पडा, सचमुच यही कारण है कि उसके मन में कभी-कभी ऐसी बात उठती रहती है।

किन्तु इतनी जल्दी वह आत्मसमर्पण की स्वीकृति नही देना चाहती थी। उसने तत्काल उत्तर दिया, "प्राणनाथ बाबू, मै उस समय लेडी डाक्टर होती हूँ, और कुछ नही। डाक्टर के शास्त्र मे प्रेम और सेक्स जैसी कोई चीज नही होती।"

प्राणनाथ झट बोल उठा, "डाक्टर के शास्त्र में भले ही प्रेम जैसी वस्तु न हो, वह उसमे विश्वास भले ही न करे, किन्तु सन्तान-सुख से प्रमुदित नारी को देखकर एक डाक्टर भी उसकी उपेक्षा नही कर सकती। तो क्या आप मानती है कि डाक्टर होते हुए आप प्रेमहीन या यौन-भावना से हीन है? जब आप यह समझती है कि आप स्त्री है तब यह अभावना कैसे सम्भव है।"

शेफाली बोली, "आपकी बात स्वाभाविक होते हुए भी डाक्टर के लिए यथार्थ नही है। एक बार की बात है और पुरानी भी। मेरे

प्रिन्सिपल ने जो पुरुष थे एक नारी के स्तनो का ऑपरेशन किया। वह नवयुवती थी। उसके स्तनो के उभार के सम्बन्ध में कुछ भी कहने की आवश्यक्ता नही है, किन्तु डाक्टर ने चीरकर पस निकालते हुए एक स्तन को खूब दबाया, फिर भी जब पस रह गया तो उसका ऑपरेशन किया गया, किन्तु मैने देखा कि वह वैसे ही शान्त भाव से चीर-फाड करते रहे। न उनमे कोई विकार ही उत्पन्न हुआ, न हाथो में कँपकँपी ही। यद्यपि वह भी प्रौढ और अविवाहित थे। इसके बाद उन्होने वह केस मेरे सुपुर्द कर दिया। यदि उनमे कुछ भी सेक्स-भाव होता तो वह चेष्टा करते कि उस केस को आगे भी अपने हाथ मे रखे। खैर, जाने दीजिए फिर भी आपकी बात मे साधारण लोगो के लिए सार है। हम डाक्टर लोग शरीर को उस रूप मे नही देखते, जिस रूप में साधारण लोग देखते है। हमारे लिए तो रोग-दृष्टि प्रधान है।"

"तब तो डाक्टरो को शादी भी नही करनी चाहिए। उनके सन्तान ही उत्पन्न नही होनी चाहिए।"

शेफाली ने तत्काल कहा, "सन्तान की चाह होते हुए भी दार्शनिक यौन-भावना से मुक्त होते है। हमारा आदर्श भी यही रहा है। और आदर्श न भी हो तो भी यह एक सही और यथार्थ दृष्टि है।

"वह एक जडवाद है या उसे आदर्शवाद कहे तो भी वह पगु है।"

बात बढती जा रही थी। शेफाली चुप हो गई, जैसे वह ऊब-सी गई हो। प्राणनाथ कुर्सी से उठ बैठा और नमस्कार करके चला गया। शेफाली अपने कमरे मे जाकर लेट रही और उन बातो को सोचने लगी। उसने मन मे कहा—'प्राणनाथ ने ठीक ही कहा है, नही तो क्यों मै नलू को अपने कमरे मे सुलाना चाहती हूँ, क्यो उसे सोते देखकर भी तृप्त नही होती। क्या कभी-कभी प्राणनाथ से बात करके सुख का अनुभव नही करती हूँ, क्या यह सेक्स नही है, जो मुझे उत्साहित करता है ? फिर क्या मेरे हृदय मे ऐसी भावना नही उठती, क्या उसे छिपाकर एक प्रकार का आडम्बर मै नही करती; फिर यही मै कब भूलती हूँ

कि मै स्त्री हूँ ? क्या मुझ में इस प्रकार का साहस है कि किसी के सामने मै अपना गुप्त अग दिखा सकूँ, क्या मै इच्छा होने पर एक बच्चे की तरह किसी पुरुष का चुम्बन ले सकती हूँ ? मालूम होता है कि हमारे सारे समाज के व्यवहार सेक्स को ध्यान मे रखकर ही बने है। सेक्स-वृत्ति स्त्रीत्व और पुरुषत्व के रहते जा ही नही सकती। जिन महापुरुषो, साधु-सन्तो को हम इस भाव से ऊपर पाते है वे नि स्पृह वीतराग होते है। वे समाज में नही रहते, किन्तु कौन कह सकता है कि उन्हे सेक्स कभी सताता ही नही है।' यही सब शेफाली पडी-पडी सोचती रही। वह कब सो गई, उसे याद नही।

दूसरे दिन से शेफाली की प्रकृति मे एक परिवर्तन दिखाई दिया। वह पहले की अपेक्षा शरीर का अधिक ध्यान रखने लगी। स्नान तथा शरीर प्रसाधन मे उसकी रुचि होने लगी। केवल खादी की साडी की जगह उसने दो एक रेशमी साडी खरीदने का शुभदा को आर्डर दिया। शुभदा यह जानकर बहुत प्रसन्न हुई कि जीजी रेशमी साडी के लिए कह रही है, नही तो उसने इससे पूर्व कई बार शेफाली से मँहगे कपडे पहनने और सुव्यवस्थित ढग से रहने का आग्रह किया था।

शुभदा खादी-भण्डार मे गई और अच्छी से अच्छी साडियाँ खरीद लाई। इसके साथ ही फेस-पाउडर, सुगन्धित तेल तथा क्रीम भी खरीद लाई। उसने स्वय शेफाली से उनके प्रयोग का आग्रह किया। उस दिन वह सवेरे ही रोगियो को देखने न जा सकी। जरा देर हो गई। इसी बीच रोगियो की ओर से बुलाहट भी हुई और उसके घर से निकलते-निकलते काफी सख्या में लोग आ जुटे। यह देखकर फिर एक प्रतिक्रिया हुई और उसे एक प्रकार से अपने ऊपर खेद हुआ। रास्ते-भर वह इस सम्बन्ध में सोचती रही। रोगियो के अभिभावको में से कुछ को आश्चर्य भी हुआ किन्तु कहने का साहस किसी को न हुआ। मार्ग में ताँगे पर जाते हुए राममोहन ने देखा तो हाथ जोड़कर नमस्कार किया। शेफाली ने ताँगा रोककर साधना की कुशल पूछी और चल दी। राममोहन,

जो शेफाली से काफी प्रभावित था, उसे इस रूप में देखकर आश्चर्य करने लगा। उसने कहा तो कुछ भी नही, फिर भी वह एकटक शेफाली की गतिविधि को देर तक देखता रहा। शेफाली ने उसकी भाव-भगी को लक्ष्य किया किन्तु बाहर से लापरवाही-सी दिखाती हुई वह चली गई। उसे लगा जैसे यह वेश उसके काम के बिलकुल उपयुक्त नही है। यह बात नही है कि उसका वेश अनुचित था, ऐसी बहुत सी नगर में लेडी डाक्टर थी जो बनी-ठनी रहती थी, उनके सम्बन्ध मे कोई भी कुछ नही कहता था। वह उनका स्वभाव तथा उनकी वेश-भूषा दैनिक-चर्या बन गई थी। उसने इन्ही सब बातो के द्वारा मन को बहलाया और यथासाध्य अपने वेश को तर्कसिद्ध करने की चेष्टा की।

घर आकर वह सीधी शुभदा के कमरे मे बडे शीशे के सामने जा खडी हुई। सचमुच उसे अपने रूप पर गर्व भी हुआ। उसने अनुभव किया कि वह रूप में बहुतो से अच्छी है। उसमे अभी तक स्त्री के नाम से यौवन का चरम उत्कर्ष वर्तमान है। अभी तक उसके अग-प्रत्यग में रूप का निखार, यौवन का उभार है। बहुत देर तक वह अपने को शीशे के सामने खडी देखती रही।

इसी समय हीरादेई ने आकर कहा, "खाना तैयार है।"

"आती हूँ चलो!" इसके साथ ही वह हीरादेई के आश्चर्य पर पर्दा डालने के लिए बोली, "देख रही थी, यह नई साडी बुरी तो नही लगती।"

"ऐसा कौनसा कपडा है जो आप पर नही फबता। आप तो लाखों में एक है।"

हीरादेई ने कहने को कह डाला किन्तु उसे पीछे भय हुआ कि शेफाली कही इसका दूसरा अर्थ न लगा ले, इसीलिए उसने बात को बदलते हुए कहा, "और आपको तो बीमारो को देखने, उन्हे सुख देने के सिवा और कोई सुख ही नही है।"

फिर भी लाखो मे एक वाला वाक्य शेफाली के कानो में गूँजने लगा। अपने को बचाते हुए उसने हीरादेई को आँखो की भृकुटि से डाँटते हुए कहा, "हीरादेई ! अरे, मै क्या हूँ। क्या सचमुच यह साड़ी मुझे अच्छी लगती है ?"

"हीरादेई ने सम्हलकर उत्तर दिया, "आप तो राजकुमारी लगती है।"

"चल हट तुझे भी हीरादेई न जाने क्या-क्या सूझता है ?" इतना कहकर शेफाली हीरादेई की पीठ थपथपाकर बाहर चली गई और जाकर भोजन करने लगी।

उस दिन हीरादेई ने देखा कि जैसे-तैसे भोजन से सन्तुष्ट रहने वाली शेफाली भोजन और रुचि पर भी बराबर बोले जा रही है। और रुचि को सर्वोपरि मानकर रसोइये को भी हल्की डाँट लगा रही है।

हीरादेई ने यह सब देखा और सुना तो समझ न सकी कि एकदम अन्तःस्थ रहने वाली इस नारी मे आज यह क्या हो गया है। इससे पूर्व वह न तो कभी खाने मे नुक्ताचीनी करती थी न कुछ कहती थी। शेफाली भोजन के बाद डिस्पैन्सरी की ओर चली गई और वहाँ जाकर कम्पाउण्डर का हिसाब तथा बिक्री के सम्बन्ध में बाते करने लगी।

उस सारे दिन शेफाली अपने सम्बन्ध में सोचती रही। उसे लगा कि जैसे वह एक नये जीवन में प्रवेश कर रही है। रोगियो के घर जाकर वह उनके घर की स्त्रियो की वेश-भूषा पर छिपी-छिपी दृष्टि डालती। बाहर चलते हुए वह नारियो के वेश-शृंगार को ध्यान से देखती और अन्य स्त्रियो से अपने रूप का मिलान करती; गृहस्थ के बच्चो तथा सुख से अपनी तुलना करती। रात के समय रोगियो को देखकर लौटते हुए उसके मन मे काफी उथल-पुथल होने लगी। वह सोचने लगी जैसे अब तक का उसका जीवन एकदम क्रियाशून्य रहा है, वह जीवन के प्रति अब तक जो लापरवाह रही है, उससे उसने बहुत-कुछ खो दिया है; बहुत-कुछ उसकी शक्ति के बाहर चला गया है, जो लौट नही सकता ; उसने दूसरो की सेवा करके अपने यौवन, अपने

रूप, अपनी अवस्था के प्रति अन्याय किया है। अपने अतीत पर पश्चात्ताप करते हुए भी भविष्य जैसे उसके सामने अनिश्चित था।

रात को राममोहन आया। बैठा रहा। वह शेफाली के रूप पर मुग्ध था। उसकी कीर्ति ने राममोहन को उसका एकान्त-सेवी बना दिया था। साधना से प्रेम करते हुए भी वह जैसे शेफाली को एकमात्र सुन्दरी मानता था। उसके भीतर स्नेह-तन्तु साधना के रूप-यौवन और नारीत्व के छोर को पकडकर भी ढीले हो गए है और एक डोर बिना दूसरे किनारे तक गये हुए भी शेफाली की ओर लटक रही है। उसे मालूम है कि शेफाली उसकी पकड के बाहर है। वह उसके पास तक भी नही पहुँच सकता। जैसे एक बौना ऊपर बेल में लटकते हुए अगूरो के गुच्छे पकडना चाहता हो जहाँ वह किसी तरह भी नही पहुँच सकता। वह मन में शेफाली की कल्पना मूर्ति बनाए डोलता। उसे हृदय के नेत्रों में छिपाकर साधना से मिलता, उससे बाते करता और एकान्त में बैठकर अपनी प्रियतमा के चित्र का निर्माण करके उससे खेलता, बाते करता और उसका आलिगन तथा चुम्बन करता। उसी पुलक में वह सो जाता। इतना होते हुए भी वह शेफाली के पास आने का साहस नही कर पाता था; फिर आज जो वह साहस करके आया उसका कारण उसे देखकर शेफाली का आते हुए अपना ताँगा रोक लेना था; उसकी ओर मुस्कराकर देखना था, मानो उसी मुस्कराहट को पाकर वह कृतार्थ हो गया हो। जिस समय राममोहन आया, शेफाली सामने खडे रोगियों के अभिभावको को नुस्खा लिखकर समझा रही थी। शेफाली ने मुस्कराहट से उसका स्वागत किया और कुरसी की ओर सकेत किया।

लगभग पन्द्रह-बीस मिनट बाद फुरसत मिलने पर शेफाली बोली, "चलिए न, भीतर चलकर बैठा जाय।"

राममोहन शेफाली के पीछे बैठक मे चला आया। इसी समय शुभदा आ गई। शुभदा को राममोहन के पास बैठने का आदेश देकर शेफाली स्नान करने चली गई। इन दिनो पढने में व्यस्त रहने के कारण

शुभदा बहुत कम शेफाली के पास आती थी। आज राममोहन को आया जान थकावट उतारने को आ बैठी। आते ही बोली, "कहिए राममोहन बाबू, साधना बहन कैसी है ?"

"हम लोगो के जीवन में अर्थ के सिवा और है ही क्या शुभदा ! जैसे हमारा ध्येय धन कमाने के अलावा और कुछ नही है। हम मनुष्य को उसके अर्थ की दृष्टि से नापते है। ससार मे जो उथल-पुथल होती है, समाज मे जो ऊँच-नीच है उसे हम आर्थिक दृष्टिकोण से अपने हानि-लाभ के रूप मे देखते है। हमारी दृष्टि मे मनुष्य के ऊपर-नीचे भीतर-बाहर उसका एक ही रूप है रुपया। मै वही देखता हूँ।"

शुभदा राममोहन की ओर अपनी सरल आँखें फाडकर देखती रही। बात उसकी समझ मे कुछ भी नही आई। उसे लगा जैसे यह आदमी आदमी न होकर रुपये का एक ढेर हो गया है।

"तो क्या आप रुपये के अलावा अपने को और कुछ नही मान पाते ?"

"हाँ, व्यापारी तो और कुछ सोच नही सकता। इधर मै एक मामले मे फँस गया। मैने चोर-बाजारी मे रुपया कमाया। मुझ पर मुकदमा चला। आज उसका फैसला हुआ है, मै जीत गया हूँ।"

शुभदा ने आँख फाडकर उसके भीतर को पढने की चेष्टा करते हुए पूछा, "तो इसकी भी आपको कम खुशी नही हो रही होगी।"

"हाँ, मनुष्य को चालाकी, धूर्तता और झूठ को सत्य सिद्ध करने का जो परम्परा-प्राप्त अवसर मिला है मैंने उसमे काफी वृद्धि की है, यह मै आज जानने लगा हूँ। और मुझे मालूम हुआ है कोई भी पाप पाप नही रह सकता, यदि मनुष्य उसको पुण्य सिद्ध करना चाहे। चोर भी शाह बन सकता है, इसी से मुझे लगता है तर्क धूर्तता ही आज के युग के ईश्वर हैं। मै समझता था मुझे सजा होगी; मेरी प्रतिष्ठा धूल में मिल जायेगी। शायद इसी बीच में मेरा घरबार, धन-दौलत भी समाप्त हो जाय, लेकिन मैने नौ लाख रुपया चोर-बाजार से कमाकर

सरकार को जो धोखा दिया है, उन रुपयो ने मेरी रक्षा की और आज कानून ने मुझे बेदाग सिद्ध कर दिया। अब मै और कमाऊँगा, चोरी करूँगा, बेईमानी करूँगा और समाज मे प्रतिष्ठित बनूँगा। यदि मैं इस धन से सरकार की सहायता करूँगा तो वह मुझे लोकसभा में ऊँचे स्थान के लिए चुन लेगी। मै लीडर भी हो जाऊँगा, मेरी बेईमानी जितनी गहरी होती जायेगी मै उतना ही सरकार और जनता की निगाह में ऊँचा उठता जाऊँगा।"

शुभदा ने लक्ष्य किया, जैसे राममोहन पागल हो गया है। वह चुप रही। बोली कुछ भी नही। इसी समय शेफाली आ गई।

राममोहन कहने लगा, "आज मै मुकदमा जीत गया हूँ। जो नौ लाख रुपया मैने चोर-बाजार से कमाया था, वह कमाई सरकार की नजरो में सत्य सिद्ध हो गई, डाक्टर साहब! अब मै और अधिक बेईमानी करने जा रहा हूँ। मै एक प्रसूति-गृह भी खोलूँगा।"

"प्रसूति-गृह!"

"हाँ, प्रसूति-गृह! मै दो लाख रुपया उसमे लगाऊँगा और आपको उसका चीफ डाक्टर बनाऊँगा।"

"बेईमानी और प्रसूति-गृह, मैं समझी नही!"

"क्यो इसमे क्या दोष है? मैं आपसे ही पूछता हूँ, आपने ईमानदारी से सेवा करते हुए कितना कमा लिया? यदि मै ठीक कहता हूँ तो आपके पास इतना पैसा भी नही है कि आप सिर ढकने के लिए अपना मकान ही बना सकें। आपका मेडिकल-हॉल बहुत छोटा है। मै जानता हूँ कि चाहने पर भी आप और कोई बडा मकान या कोठी नही ले सकती। आप ताँगे में या पैदल चलती है, किन्तु मोटर नही ले सकती।"

राममोहन के बोलने की प्रखरता ने सबको चौका दिया। शेफाली भी चुप थी। वह जानती थी कि राममोहन बहुत बोलने वाला आदमी नही है, फिर आज का उसका रूप देखकर शुभदा और शेफाली दोनो ही

हैरान रह गई। उसकी विवेचना-शक्ति तीव्र हो गई। उसकी वाणी में चापल्य आ गया। बात करते हुए ऐसा लग रहा था, जैसे यह व्यक्ति बहुत बडा ज्ञान-विशारद हो। जिस आदमी के मुँह से कभी बोल नहीं निकलता था उसकी वाणी पर जैसे रिकार्ड लग गया हो। दोनों चुप बैठी राममोहन के उत्फुल्ल मुख की ओर देखती रही।

राममोहन फिर अपनी बात पूरी करने के स्वर मे बोला, "तो मै कह रहा हूँ कि कोई भी आदमी बिना ऊँच-नीच किये रुपया नही कमा सकता। जितने दानी आज आपको दिखाई देते है, जिन्होने मन्दिर, मस्जिद, गिरजाघर बनवाये हैं, जिन्होने धर्मशालाएँ, कूप, तालाब, बावडियाँ बनवाए, हस्पताल खोले है, वे सब बेशुमार रुपया इकट्ठा करने के लिए इन्ही रास्तो मे होकर चले है। इसी तरह उन्होने रुपया कमाया है।" राममोहन क्षणिक आवेग में बात करते-करते रुक गया और शेफाली की ओर गर्व की दृष्टि से देखने लगा। शेफाली फिर भी न बोली। उसने देखा राममोहन आज आपे में नही है। वह मुकदमा जीतने की खुशी मे हर्षोन्मत्त हो उठा है। "मै सोचता हूँ यदि आप स्वीकार करे तो कल ही नगर के बाहर २०-२५ बीघे जमीन का सौदा करके खरीद लूँ। हस्पताल का डिज़ाइन किसी इन्जीनियर से बनवा लूँगा, बाकी सब सामान आप अपने ढग से खरीद लीजिएगा। बस, आपकी आज्ञा की देर है।"

शेफाली ने बडी गम्भीरता से उत्तर दिया, "मै इतना भार उठाने में असमर्थ हुँ, राममोहन बाबू! फिर जब आपको प्रसूति-गृह बनवाना ही है तो और भी बहुत सी डाक्टर सेवा को तैयार हो जायँगी।"

शुभदा ने बात को दबाने की इच्छा रखते हुए भी बहन का सहारा पाकर कह ही तो डाला, "बहन तो, राममोहन बाबू, आपके इस हस्पताल से फायदा उठाने से रही। उन्हे तो इस गरीबी मे ही सुख है।"

"तो क्या आप समझती हैं, मेरा धन अस्पृश्य है? आखिर मै तो उसे नेक काम में ही लगा रहा हूँ। बुरी चीज भी तो अच्छे काम में

लगकर अच्छी हो जाती है ।"

शुभदा बोली, "किन्तु आपकी बात से यह सिद्ध नही होता कि आपकी कमाई का यह रुपया गरीबों का खून चूसकर नही इकट्ठा किया गया है और मन्दिर, मस्जिद, धर्मशालाओ के मालिक उन्हे बनवाकर पाप के भागी नही रहे। फिर जो काम सरकार का है वह आप क्यो करे।"

राममोहन हतवाक् हो गया। उसे आशा नही थी कि शेफाली इस तरह उसके परम पुण्य प्रस्ताव को ठुकरा देगी। पिछले दिनो जो दो-एक बार प्रसूति-गृह की चर्चा हुई, उस समय शेफाली ने उसका कोई विरोध नही किया, बल्कि मौन रहकर उसने अपनी स्वीकृति ही दी थी। उसे लगा, अपनी नासमझी से चोर-बाजार के द्वारा इतना रुपया कमाने की बात कहकर उसने अपने को हीन बना लिया। उसे शेफाली के सामने यह सब नही कहना चाहिए था। वह अपने मे मूक हो गया। फिर उसके गर्व ने एक और रूप ग्रहण किया। उसे लगा जैसे इस साधारण स्त्री डाक्टर ने उसका अपमान किया, उसके धनी होने के पौरुष की उपेक्षा की। वह आज क्या नही कर सकता। वह चाहे तो सरकार में प्रतिष्ठा पा सकता है, अपने यश के लिए बडे-बडे लेखको को खरीदकर उनसे अपने ऊपर लिखा सकता है। अखबार वाले सम्पादको की कलम की नोक को अपनी ओर घुमा सकता है और अपने खर्चे से प्रसूति-गृह बनवाकर एक से एक अच्छी लेडी डाक्टर रख सकता है। ये सब बातें इसी समय उसके दिमाग मे चक्कर काटने लगी। उसने कुछ रुककर कहा, "तो आप शायद अब किसी धनी के घर बीमार देखने भी नही जाना चाहेगी क्योकि जो रुपया वह आपको फीस मे देगा वह भी वैसा ही है।"

शुभदा ने कहा, "वह तो हमारी कमाई का पैसा है, हमको उसे लेने मे आपत्ति क्यो होनी चाहिए ?"

"प्रसूति-गृह मे भी तो आप अपनी कमाई का पैसा ही लेगी।"

शेफाली ने बात को टालते हुए कहा, "राममोहन बाबू, आप इसकी

बातो पर न जाइए । मैं तो आपसे कुछ नही कह रही ।"

"तो आप स्वीकार करती है, बस यही मै चाहता हूँ ।"

"मै सोचकर उत्तर दूँगी । आप मुकदमा जीत गए, इसकी बधाई ।"

इसी समय हीरादेई ने आकर भोजन की सूचना दी । राममोहन उठकर खडा हो गया । शेफाली ने राममोहन से भी भोजन का आग्रह किया, किन्तु वह क्षमा माँगकर चला गया ।

उठते हुए शेफाली ने शुभदा से कहा, "किसी वाद-विवाद में पडने की आवश्यकता नही है; देखा जायेगा ।"

"तो आप इस बेईमानी की कमाई के रुपये से खुलनेवाले हस्पताल को अच्छा समझती है, जीजी ?"

"बेईमानी कहाँ नही है ? मै जो बीमार को देखकर पाँच रुपया फीस गरीब की जेब से ऐंठ लेती हूँ, यह बेईमानी नही है ? आठ आने की दवा के दो रुपये वसूल करती हूँ, यह बेईमानी नही है ?"

"तो आप इतना क्यो लेती है, कम लीजिए ?"

"फिर मेरी मार्केट वैल्यू गिर जायेगी । मेरे पास एक भी अच्छा मरीज नही आयगा । तू जानती है कनाटप्लेस मे सौदा खरीदने वाले लोगो और पुरानी दिल्ली से सौदा खरीदने वाले लोगों में क्या अन्तर होता है ?"

"किन्तु यह तो झूठी मर्यादा है ।"

"वह मर्यादा किसकी है, समाज की ही तो ।"

"हमे समाज को सुधारना होगा । हमें झूठी मर्यादा को दूर फेक देना होगा । आपने देखा है, गाधीजी को ?"

उसी गम्भीरता से शेफाली ने उत्तर दिया, "ऐसे लोग एबनार्मल होते है, जो समाज से ऊपर उठकर समाज का सुधार करते हैं । समाज में रहने वाले यदि एबनार्मल हो, तो लोग उन्हे पागल समझते हैं । यदि मै किसी से कुछ न लेकर मुफ्त में या बहुत थोडा लेकर बहुत सादा

रहकर काम करूँ तो मुझे कोई कौडी को भी नही पूछेगा। फिर यदि सभी गाधीजी बन जायँ तो गाधीजी की आवश्यकता ही क्या रही ?"

"परन्तु मै तो मानती हूँ अपनी दिशा मे आपकी सेवाएँ भी कम नही है।"

"ठीक है, परन्तु इतना उग्र बनने की आवश्यकता नही है। हम लोग उस श्रेणी के है, जो समाज मे रहकर उसका सुधार करते है। गाधीजी की श्रेणी दूसरी है।"

इसके बाद दोनो चुपचाप भोजन करने चली गई।

उत्तर न होते हुए भी तर्क से न तो शुभदा ही सन्तुष्ट हुई और न शेफाली को ही अपनी बात मे कोई वजन दिखाई दिया। फिर भी दोनों ने समझा—हाँ, हम लोग बहुत दूर तक नही जा सकते। समाज से विद्रोह करके समाज में नही रह सकते।

शेफाली भोजन करके यथानियम गीता पढने लगी, किन्तु उसका मन नही लगा। उसने किताब उठाकर रख दी। रात काफी हो गई थी। शुभदा भी बत्ती बुझाकर सो गई थी। शेफाली राममोहन के सम्बन्ध में सोचती रही।

पुरुष और स्त्री की भावनाओ मे वैसे तो साम्य और वैषम्य दोनो ही प्रकृति ने दिये हैं, किन्तु यौन-समस्या के अलावा स्त्री में मातृत्व की भूख प्रधान रूप से काम करती है। शायद सृजन उसमे दैवी प्रेरणा है या एक इन्स्टिक्ट है, जो नारी मे रह-रहकर उठा करता है। यौन-वृत्ति मे निहित मातृत्व की भावना इसलिए उसके जीवन का अग बन गई है। आदिकाल से पुरुष अपनी वासना-तृप्ति को अपना चरम लक्ष्य मानता रहा है, जबकि नारी इससे भी आगे बढकर सृजन की आकाक्षा करती है। वह चाहती है कि उसकी गोद मे पुरुष और उसका अपना दोनो की वासना का प्रतिबिम्ब भी खेले जो केवल उसके द्वारा पोषित हो; उसके प्रकृतिदत्त स्तन्य से फले-फूले।

शेफाली के मन में भी उस दिन की प्राणनाथ की बातो से भीतर

ही भीतर इसी प्रकार का एक अकुर प्रस्फुटित हुआ। वह निरन्तर यही सोचने लगी। उसने अपने भीतर जीवन की सार्थकता का यह बीज भी अकुरित होता पाया। उसे लगा कि रोगी-सेवा उसका वास्तविक सुख नही है। वह आरोपित सतोष है, जो उसने अपने ऊपर घटने वाली यथार्थता की प्रतिक्रिया के रूप मे हृदय के भीतर पाला है। इसके द्वारा उसने एक अवास्तविक सुख की खोज मे बहुत-सा जीवन का भाग बिता दिया है। न वह सत्य है और न तथ्य—जैसे कोई भूखा अन्न के बजाय पानी पीकर पेट भर जाने की कल्पना करता हो, या गरमी मे ठण्डे मकान में बैठकर दोपहरी बिताने के बजाय किसी पेड की छाया में बैठ जाता हो, जहाँ लू के थपेडे बार-बार उसके मुँह पर लग रहे हो।

वह यही सोचने लगी जो नित्य है वह नैमित्तिक नही हो सकता। जीवन का लक्ष्य है यथार्थता। कल्पना अवास्तविक है। उसने सोचते-सोचते वासना और प्रेम का विश्लेषण करते हुए जाना कि वासना सत्य है। कला वासना को अपने सौन्दर्य में रँगकर उसे उज्ज्वल भव्य बना देती है। दो स्त्री-पुरुषो में पहले-पहल वासना होती है। सभ्य समाज उसे वासना न कहकर 'प्रेम' कहता है। वासना की तृप्ति के बाद शुद्ध प्रेम की बारी आती है, पहले नही। वह एक से नही बहुतो से होता है। विरोधी सेक्स में तो वासना ही होती है। यह प्राणनाथ क्या मुझसे प्रेम करता है ? नही, यदि इसे अवसर मिले और मै चाहूँ तो क्या हम दोनों बिना सेक्स की तृप्ति के रह सकते हैं ? फिर क्या यह 'प्रेम' कहा जायेगा ?...उसे अनुभव हुआ कि जीवन में सेक्स के अलावा और कुछ नही है। एक बार तो उसे लगा जैसे अब तक का उसका सारा जीवन व्यर्थ था। वह कभी राममोहन और कभी प्राणनाथ के सम्बन्ध मे सोचती। राममोहन की अपेक्षा प्राणनाथ उसे रुचता। उसके शरीर की बनावट, उसका व्यवहार, उसकी विद्वत्ता, प्रगलभता उसके देश-विदेश के अनुभव—सबने मिलकर उसे राममोहन से श्रेष्ठ सिद्ध कर दिया था। यदि किसी वजह से राममोहन की मूर्ति उसके हृदय में उभरती तो

प्राणनाथ के सामने वह गायब हो जाती । पिछले दिनो कई बार प्राण-नाथ से बातचीत मे जीवन और सेक्स की गहराई तक पहुँचते-पहुँचते उन दोनो की हृदय-तरगे एक ही जगह जा मिली थी । कई बार उन दोनो को मालूम हुआ कि जैसे वे पति-पत्नी की तरह अपनी समस्याओ का हल करने जा रहे हो ।

जो हाल शेफाली का था वैसा ही उधर प्राणनाथ भी अनुभव करता रहता । कचहरी के बाद वह बिलकुल स्वतन्त्र था। सो कभी राममोहन के यहाँ और कभी शेफाली के घर आ जाता; वह भी रात को, जब शेफाली बीमारो से छुट्टी पाकर आराम करती; तभी प्राय शेफाली से हर प्रकार की चर्चा होती । एक बार तो कुछ लोगो को ऐसा लगा कि शेफाली प्राणनाथ के साथ बहुत जल्दी ही एक होने जा रही है, परन्तु बात बीच की बीच मे ही रह गई है । शेफाली ने न तो अपनी तरफ से कोई उत्साह दिखाया, न आगे बढी ।

उन्ही दिनो जब वह इस तरह की बातो मे उलझी थी, एक बात हो गई । शेफाली उन दिनो एक धनी रामकुमार की पत्नी का इलाज कर रही थी। रह-रहकर उसके पेट मे दर्द का दौरा उठता था । इसका इलाज कई डाक्टरो ने किया, परन्तु लाभ कुछ नही हुआ । शेफाली के इलाज मे फायदा तो बहुत नही था, परन्तु दर्द के दौरे कम जरूर थे । बार-बार आने की वजह से रामकुमार की नजर उस पर पडी । पहली नजर मे ही रामकुमार जैसे सुध-बुध भूल बैठा। जो आदमी पहले अपनी स्त्री अजना को कभी-कभी देखने जाता था वह अब शेफाली के आने से पहले अजना के कमरे मे मिलता, अजना के बारे मे शेफाली से बात करता, बाहर निकलने पर उसकी बीमारी के बारे में पूछता रहता प्रयत्न करता कि वह उसे अपनी मोटर मे घर छोड आए। परन्तु शेफाली सदा टाल जाती और मतलब की बातचीत के बाद एकदम चली जाती । रामकुमार जैसे लुटे आदमी की तरह हाथ फैलाए आँख फाड़े उसे देखता रहता । फिर मुट्ठी भीचकर कुसमुसाता रह जाता ।

एक दिन मौका पाकर वह बोला. "डाक्टर शेफाली, यह ससार कितना क्रूर है। आप दिन-भर रोगियो की सेवा करती है, धूप, वर्षा सर्दी में बाहर जाती है। यदि आप चाहे तो मै अपनी मोटर आपको अर्पित कर दूँ।"

शेफाली स्वाभाविक ढग से उत्तर देकर आगे बढने का उपक्रम करती हुई बोली, "मुझे तो यह जरा भी बुरा नही मालूम देता। मोटर की मुझे जरा भी जरूरत नही लगती। फिर आपकी मोटर क्यो ?"

सेठ ने जरा आगे बढकर साथ-साथ चलते हुए कहा, "आपने मेरे ऊपर बडा उपकार किया है, कर भी रही है।"

"तो ठीक है, मै फीस भी तो लेती हूँ।" इतना कहकर शेफाली धडधडाती नीचे उतर गई और रामकुमार के देखते-देखते ताँगे मे बैठ गई और मुँह फेर लिया।

अचानक एक रात अजना की तबियत बहुत खराब हो गई। दर्द इतना बढ गया जैसे उसके प्राण निकले जा रहे हो। रामकुमार अपनी मोटर लेकर स्वय शेफाली के घर पहुँचा। उस समय शेफाली सोने जा रही थी। सेठ को आया जानकर बाहर आ गई।

"अजना दर्द के मारे छटपटा रही है, डाक्टर! कृपा करके उसे देख लीजिए।"

शेफाली ने कमरे मे जाकर कपडे बदले और आवश्यक सामान लेकर चल दी। सचमुच अजना का बुरा हाल था। रात के सुनसान मे दूर-दूर तक उसके चिल्लाने-डकराने की आवाज फूटी पड रही थी। मकान के आस-पास के वातावरण मे उसके क्रन्दन की ध्वनि एक भयकरता पैदा कर रही थी। शेफाली चुपचाप मोटर से उतरी और अजना के कमरे में चली गई। रामकुमार भी पीछे-पीछे हो लिया। उसने जाते ही अजना के दो इजेक्शन लगाए और पास ही उसकी खाट पर बैठ गई। थोडी देर में अजना को झपकी आ गई, उसका दर्द कम हो गया।

जब शेफाली चलने लगी तो सेठ निहोरे के स्वर मे बोला, "यदि

अधिक कष्ट न हो तो आप थोडी देर और ठहरने की कृपा करे डाक्टर शेफाली ! कही फिर दौरा उठा तो बडा कष्ट होगा। बस, जरा पूरी तरह नीद आ जाने दीजिए।" इतना कहकर वह चला गया।

इसके साथ ही नीद से भरी रामकुमार की माँ ने हाँ मे हाँ मिलाई और बोली, "मै यही दूसरे कमरे में खाट बिछवाए देती हूँ, डाक्टर सा'ब।" और इसके साथ ही उसने नौकर को आर्डर भी दे दिया।

शेफाली ने अनिच्छा प्रकट की और जल्दी जाना चाहा, पर ड्राइवर के न होने और रामकुमार के मोटर लेकर बाहर चले जाने के कारण उसे रुकना पडा। वह दूसरे कमरे मे एक आराम कुर्सी पर जा बैठी। अजना सो रही थी, सोती रही। धीरे-धीरे और स्त्रियाँ इधर-उधर हो गई।

जिस समय रामकुमार आया उस समय शेफाली आरामकुर्सी पर नीद ले रही थी। रामकुमार चुपचाप खडा होकर आदमकद शीशे के सामने प्रतिच्छायित शेफाली की ओर देखता रहा। उसके मुख पर एक विराट् शोभा लहरा रही थी। बडी-बडी आँखो को ढके पलके ऐसी लग रही थी, जैसे अनन्त मद की स्रोतस्विनी बडी-बडी घास के भीतर बह रही हो या कमलिनी की पखुडियो ने बीच के कुन्द को ढक लिया हो। नीद जहाँ चचलता-वाचालता को हटाकर मनुष्य के वास्तविक रूप को फैला देती है, वहाँ वह छवि को दुगुना भी कर देती है। सफेद रेशमी साडी से ढके और बाहर निकले अगो की शोभा जैसे फूटी पड रही हो। जैसे स्निग्धता, कोमलता, सुचिक्कणता-सौन्दर्य आकर्षण से लिपटकर रामकुमार के हृदय को मथ डालने के लिए सदल बाहर निकल आये हो। वह देर तक उसे देखता रहा, देखता ही रहा, जैसे एक सौन्दर्य की प्रतिमा किसी चित्रकार की साँसे पीकर उसके हृदय का सारा आसव लेकर जाग जाने को हो। पहले उसे सकोच हुआ, डर भी लगा पर वह किसी तरह भी वहाँ से हट नही सका। अजना अभी तक सो रही थी। उसकी इच्छा हुई कि बिजली बुझाकर इस कल्पना-मूर्ति के चरणो पर

गिरकर हृदय के स्रोत से प्रतिक्षण प्रस्रवित प्रेम की भीख माँगे और उसके सामने अपने सम्पूर्ण वैभव को उसके चरणो मे अर्पित कर दे। उसके शरीर मे रोमाच हो आया, उसकी आँखो में मद छा गया। उसके अगो मे शिथिलता भरने लगी। वह अपने को विवश, निढाल-सा अनुभव करने लगा। उसे लगा, वह दौडकर शेफाली को अपने अगो मे भर ले, पर वह ऐसा कर न सका। फिर उसके शरीर में एक वेग उठा, जैसे कोई दौरा रह-रहकर उठ रहा हो। वह तनिक आगे बढा और ठीक शेफाली के सामने आ गया। जैसे ही वह बिलकुल सामने हुआ उसने देखा कि शेफाली ने उसी समय आँखे खोली है। रामकुमार पीछे हटा और इसके साथ शेफाली भी उठ खडी हुई। रामकुमार के ऊपर घडो पानी पड गया हो, इस प्रकार उसे अनुभव हुआ। उसे लगा कि शेफाली ने उसे देख लिया। पर शेफाली की आँखे तो उसी समय खुली थी।

"हाँ, तो चलिए मुझे पहुँचा दीजिए, मि० रामकुमार!"

रामकुमार शान्त हुआ। फिर भी उद्वेग उसमें भर रहा था। उसके मुँह से निकला, "जी, आपको बड़ा कष्ट हुआ, चलिए।"

दोनो निकलकर पोर्टिको मे आये तो शेफाली मोटर मे पीछे की सीट पर बैठ गई। रामकुमार ने चाहा कि वह शेफाली से साथ की सीट पर बैठने को कहे, पर वह तो बैठ गई थी। रामकुमार ने मोटर स्टार्ट की। अब शेफाली को ध्यान आया, न जाने कब से यह सेठ उस कमरे में था और क्या कर रहा था। वह तो सो रही थी। क्या इसे इस तरह कमरे मे बिना आवाज दिये आना चाहिए था? फिर भी उसे मालूम हो रहा था कि सेठ की निगाह मे कुछ विचित्र-सा हो रहा है। कही ऐसा न हो······यही वह सोचती जा रही थी कि उसे फिर झपकी लग गई। जब आँख खुली तो उसने जमुना के तट पर अपने को पाया। उस भरी-पूरी चाँदनी रात में बालू-रेत पर मोटर खडी है। सेठ जैसे उसके जागने की प्रतीक्षा में वही बैठा उसके मुँह की ओर देख रहा है।

शेफाली भय-विचिकित्सा से भर उठी। उसके अग काँप उठे। उसे परिस्थिति को समझते देर न लगी।

वह कुछ कहने जा रही थी कि सेठ बोल उठा, "कितनी सुन्दर चाँदनी रात है, डाक्टर शेफाली! मुझसे रहा न गया······।" इतना कहकर वह दरवाजे के पास आ खडा हुआ और उसने दरवाजा खोल दिया।

शेफाली सेठ से पहले ही शकित थी और उसके इस काम ने तो शेफाली के सरल-शान्त मानस मे उथल-पुथल मचा दी। उसे कभी भी इतना उत्तेजित होने का अवसर नही मिला था, फिर भी जैसे उसके शरीर मे आग लग गई। वह एक-दम क्रोध से काँपने लगी। उसे लगा कि इजेक्शन के बाक्स में से छुरी निकालकर इस सेठ के पेट मे भोक दे।

उसने यह सब न करके गम्भीरता से कहा, "मि० रामकुमार, क्या यही तुम्हारा एक भद्र महिला के साथ व्यवहार का ढग है, जो इस तरह तुम उसे बहकाकर यहाँ ले आये?"

उसने देखा रामकुमार पागलो की तरह बेशर्मी से उसके सामने हँस रहा है, और उसके मुँह से शराब की दुर्गन्ध उठ रही है।

रामकुमार ने कहा, "डाक्टर, यह लो दस हजार का चेक है। सब-कुछ तुम्हारे लिए है, सब-कुछ, आओ!"

इतना कहकर उसने शेफाली को पकडने के लिए हाथ फैलाया। शेफाली दूसरे दरवाजे की तरफ खिसक गई। जब तक वह दूसरे दरवाजे की तरफ आया तब तक वह मोटर से निकलकर बाहर आ गई।

रामकुमार नशे मे बेसुध अनाप-शनाप बक रहा था। कभी वह खुशामन्द करता, कभी डाँटता। दस-बारह मिनट तक वह शेफाली को पाने की चेष्टा करता रहा। शेफाली मोटर का चक्कर लगाने लगी। एक बार पकडाई में आने पर उसने पूरे बल से रामकुमार को पीछे धकेल दिया और इसके साथ ही अपना बॉक्स उठाकर उसके मुँह पर दे मारा। रामकुमार इसके बाद उठ ही रहा था कि उसने उसके मुँह पर

पस भरकर बालू-रेत उलीचना शुरू कर दिया। रामकुमार के लिए आँखों में धूल भर जाने पर पीछा करना कठिन हो गया। वह शेफाली को बुरा-भला कहने लगा। इसी बीच मे मौका पाकर शेफाली वहाँ से खिसक गई और माल रोड के पास खडे एक ताँगे मे बैठकर ढाई बजे रात को घर लौटी। शुभदा, हीरादेई और मोहन उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। मोहन रामकुमार की कोठी पर साइकिल से हो भी आया था, परन्तु वहाँ कुछ भी पता न लगा। जिस समय शेफाली लौटी तब तीनो डिस्पैन्सरी के दरवाजे पर खडे थे। शुभदा रोई-रोई-सी हो रही थी। हीरादेई गुमसुम खडी थी।

शेफाली का ताँगा मकान के सामने रुकते ही शुभदा दौडकर शेफाली से लिपट गई और बोली, "कहाँ गई थी जीजी आप ?"

शेफाली गुमसुम ताँगे से उतरकर ऊपर चली गई। शुभदा से उसने इशारे से कहा कि ताँगे वाले को किराया दे दे। जब हीरादेई उसके पीछे-पीछे चली तो शेफाली ने कहा, "मै एक बीमार को देखने चली गई, इसी से देर हो गई। तुम लोग जाओ, सोओ !"

यही उसने शुभदा से भी कहा। शुभदा पहले तो बहुत बोलती रही, फिर चली गई।

शेफाली ने कपडे बदलकर लेटते हुए सारी परिस्थिति पर विचार करना आरम्भ किया। यह पहला ही अवसर था कि उसके साथ एक व्यक्ति ने इस प्रकार का व्यवहार किया। उसका हृदय अब भी उस समय का विचार करके कभी-कभी धडक उठता था। सबसे पहला प्रश्न उसके सामने यह था कि किसके सामने वह इस दुर्घटना का जिक्र करे। जो भी सुनेगा वह उसकी ठीक बात का विश्वास न करके उल्टे उसे ही पतित और गिरी हुई समझेगा। इससे उसकी प्रतिष्ठा में ही बट्टा नही लगेगा उसका व्यवसाय भी गिर जायगा; लोग उस पर हँसेंगे सो अलग। फिर भी उसका हृदय भर-भर आ रहा था। उसे लगा, इस दिशा में वह बिलकुल अनाथ है। और यह रामकुमार देखने में इतना नम्र,

विनीत, सभ्य ! क्या यही इसकी सभ्यता है ? क्या यही सभ्य मनुष्य का रूप है ? उसे अपने ऊपर बहुत ग्लानि हुई। उसने अपना सिर पीट डाला और सुबक-सुबककर रोने लगी। बहुत देर रोने के बाद मन का बोझ हल्का हो जाने पर वह सो गई। सवेरे वह देर से उठी। मरीज आकर लौट रहे थे। मोहन ने कह दिया, "डाक्टर साहब बीमार हैं, दोपहर या शाम को आना।"

वह अभी बिस्तार पर ही थी कि प्राणनाथ आ गया। शुभदा ने बताया, "जीजी रात को रामकुमार की पत्नी तथा एक मरीज को देखकर ढाई बजे रात लौटी। तबियत भी खराब है।" इसके साथ ही उसने अपनी रात को बीमारो को देखने की पुरानी शिकायत फिर दुहराई।

प्राणनाथ बोला, "रामकुमार के यहाँ जाना जरूरी था, शुभदा ! उसकी स्त्री का चिल्लाना सुनकर रोगटे खडे हो जाते है। बहुत बीमार है बिचारी। जिस समय उसे दौरा उठता है तो आस-पास दूर-दूर तक उसके चिल्लाने की आवाज सुनाई देती है।"

शुभदा की सहानुभूति अजना के प्रति हो गई। वह फिर कुछ न बोली। इसी समय शेफाली ने कमरे मे प्रवेश किया। प्राणनाथ ने उठ कर स्वागत किया और कहने लगा, "तो आपका क्या विश्वास है, अजना बच जायेगी ? मुझे तो शक है। उसे इन्टेस्टाइन की टी० बी० है, वह बच नही सकती। जितने दिन कट जायँ उतना ही। "

"मिस्टर प्राणनाथ, क्या आप जरा उसका हाल-चाल पूछकर मुझे अभी बता नही सकते।"

"क्यो नही, ऐसी क्या बात है। मै अभी आया।"

"हाँ, ताँगे पर चले जाइए, लौटकर चाय यही पीजिएगा।" प्राणनाथ जिस समय लौटकर आया उस समय तक शेफाली तैयार होकर उसकी प्रतीक्षा में बैठी थी।

प्राणनाथ ने आकर कहा, "अंजना की हालत अब-तब हो रही है।"

"क्या कहा ?"

"हाँ, वह शाम तक भी जी जाय तो गनीमत है। एक बात और, रामकुमार की आँखो में धूल झोककर किसी ने उनकी घडी और गले की जजीर लूट ली। उनकी आँखो का इलाज हो रहा है।"

शेफाली ने भीतर ही भीतर समाचारजन्य उत्सुकता को दबाकर रामकुमार की बात सुनी और दिखावटी तौर पर बोली, "आँखो मे धूल झोककर, क्या मतलब तुम्हारा ?"

प्राणनाथ ने उत्तर दिया, "रात को कही से लौट रहे थे कि दो आदमियो ने इशारे से उन्हे गाडी खडी करने को कहा। उनके गाडी रोकने पर उन्होने उतार लिया और पहचाने जाने के डर से उनकी आँखो में धूल झोक दी और सब लूट लिया।"

"पर वहाँ बालू-रेत कहाँ से आई ?"

"न जाने ! समझ मे तो मेरी भी नही आया। बालू-रेत न होकर धूल भी हो सकती है। मैंने सेठ से मिलना भी चाहा, पर मिले नही। उनका एक केस भी है इसी से, खैर बात कुछ अजीब-सी है। ऐसा तो कभी नही हुआ। फिर ये हजरत रात को कहाँ से आ रहे थे ? मुमकिन है···कही और जगह। ··"

"छोडिए चाय तैयार है। आइए।"

सबने मिलकर चाय पी। इसके बाद शुभदा और प्राणनाथ चले गए। शेफाली डिस्पेन्सरी मे चली गई। उसका किसी काम मे मन नही लगा। थोडी देर बाद उसने सुना कि सेठ रामकुमार की स्त्री का देहान्त हो गया।

बताने वाले ने कहा, "सेठ की आँखो मे धूल झोकने की शहर में बड़ी चर्चा है। कोई कह रहा है कि सेठ किसी स्त्री के साथ बलात्कार करना चाहता था वही उसकी आँखो मे धूल झोककर भाग गई। किसी ने उड़ाया है कि दो आदमियो ने उसे मोटर से उतारकर लूट लिया और पहचाने जाने के डर से उन्होने लूटने से पहले उसकी आँखो मे धूल

झोक दी।"

शेफाली यह सब सुनती और चुप हो जाती। उसे कभी-कभी भय लगता कि किसी तरह से उसका नाम इसके साथ न जुड जाय। वह उस अवस्था मे क्या करेगी, क्या उत्तर देगी, किस तरह अपने को बचाएगी ? बहुत कुछ तो सेठ पर निर्भर था। वही यदि कह दे तो क्या होगा ? यह बहुत बुरा हुआ। वह इसके यहाँ इलाज करने गई ही क्यो ? हवन करते हाथ जलना इसी को कहते है। इसमे भला उसका क्या दोष है ? क्या उसने सेठ को कोई भी प्रोत्साहन दिया या कोई ऐसी बात की, जिससे उसे इतना आगे बढने का मौका मिलता ? उसे खयाल आया, यदि उसकी आँखे बहुत खराब हो गई तब मुमकिन है कि वह झुँझलाकर यह सब कह डाले। अपने ऊपर आई विपत्ति से बचने के लिए मनुष्य क्या नही करता ? उसे सूझ कुछ भी नही रहा था, यद्यपि अभी भय कोई नही था। उसने किसी के भी मुँह से अपना नाम इस घटना के साथ नही सुना, फिर भी उसका शकाकुल हृदय रह-रह कर काँप उठता। तो क्या वह कही बाहर चली जाय, आखिर वह क्या करे, कहाँ जाय, किससे कहे ? कभी वह सोचती यदि इस समय कोई भी उसे सहायता दे सकता है तो वह प्राणनाथ है, बैरिस्टर प्राणनाथ। राममोहन छिछोरा है। कदाचित वह साधना से कह दे या अपने किसी अन्तरग मित्र से ही कह डाले, तो बात फैल जायेगी। इसी उधेडबुन में वह रह-रहकर उद्विग्न हो उठती। रोगियो को देखते-देखते, नुस्खा लिखते-लिखते वह जैसे भूल जाती। बीमारो की बात सुनते-सुनते वह भूल जाती कि वे क्या कह रहे है। रोगी अनुभव करते कि आज डाक्टर शेफाली को क्या हो गया है। ऐसी भुलक्कड तो वह कभी नही थी। जरूर कोई ऐमी बात है। फिर शेफाली के मन का पूर्वापर न जानने के कारण चुप हो जाते और फिर अपनी बात दुहराते। कम्पाउण्डर को जो आदेश देती उसमें भी स्पष्टता नही थी। वह भी हैरान था। हारकर वह बिना ही मरीजों को देखे, जैसे ही भीतर जाने लगी वैसे ही

एक आदमी आकर बोला, "सुना है सेठ रामकुमार अन्धे हो गए हैं।"

शेफाली ने सुना तो चौक उठी। बोली वह कुछ भी नही, बल्कि सुन्न-सी होकर चुपचाप अपने कमरे मे चली गई। उसी समय उसने एक आदमी प्राणनाथ को बुलाने भेजा।

घर मे हीरादेई थी। शुभदा कालेज से लौटी नही थी। वह चाहती थी कि कोई भी उसके पास न आये, कोई भी उससे न मिले। उसके कमरे में घुसते ही हीरादेई आई तो उसने कह दिया, "रात को देर से सोने के कारण तबियत भारी है।"

हीरादेई ने चाहा कि वह उसके पास बैठे, किन्तु उसने इशारे से हीरादेई को हटा दिया। वह चला गई। हीरादेई के जाने पर वह चुप-चाप तकिए मे सिर छिपाकर पड गई। एक-पर-एक विचार उसके दिमाग मे आ रहे थे, जैसे भय, सन्देह, प्रतिष्ठा, अपमान अपना-अपना मूर्त रूप धारण कर उसके सामने बार-बार आकर खडे हो जाते हो। कभी भय का दृश्य उसके सामने आता और उसे दिखाई देता कि कोर्ट मे उस पर सेठ की आँखो मे धूल झोंकने का अपराध लगाया गया है। सारा शहर वहाँ जमा है। लोग उत्सुक होकर, घृणा से भरकर, चैमेगोइयाँ कर रहे है। सारे शहर में उसकी बदनामी हो रही है। कोई कह रहा है कि पहले से ही रामकुमार के साथ इसकी दोस्ती थी। शेफाली पहले से ही खराब थी, बदमाश थी, फायशा थी। अब कोई भी भला आदमी इसको अपने घर बीमार औरतो को देखने के लिए बुलाने से रहा। सारा शहर उसकी निन्दा कर रहा है। वह जिधर भी जाती है उधर लोग उसकी ओर देखकर मुँह फेर लेते है। कुछ लोग उसके ऊपर हँस रहे है। कुछ उसका मजाक उडा रहे हैं। अखबारो मे कालम-के-कालम उसके विरुद्ध रँगे जा रहे है। कुछ डाक्टरो ने मिलकर उसका बहिष्कार कर दिया है। ये सब बाते उसके कल्पना चित्र में बनती और बिगडती। जब उससे लेटे न रहा गया तो वह उठ बैठी, बैठे न रहा गया तो टहलने लगी। जैसे वह पागल हो गई हो। उसे

लगता, इस अप्रतिष्ठा के कारण वह कही की न रही। शुभदा ने भी उससे मुँह मोड लिया है। हीरादेई भीतर-ही-भीतर हँस रही है। नौकर-चाकर नौकरी छोडने पर आमादा है। जैसे सब उसे छोडे जा रहे है। गिरधर कह रहा है, "क्या शेफाली का यह रूप है? रोगियो की सेवा मे सुख पाने वाली शेफाली!"

इसी उधेडबुन मे वह बेचैन थी कि आदमी ने आकर सन्देश दिया, "प्राणनाथ साहब शाम को आएँगे।" इतना कहकर चला गया।

सौभाग्य से उस समय तक शुभदा कालेज से नही आई थी, वरना उससे तो शेफाली को बात करनी ही पडती। वह अपनी बेचैनी किसी तरह भी दबा नही पा रही थी। फिर एक बार उसके जी में आया, क्या प्राणनाथ इतना विश्वासपात्र है कि वह उससे अपने मन की बात कह सके? इन वकील-बैरिस्टरो का क्या भरोसा! शहर-भर की बातें सुनते है, टीका-टिप्पणी करते है। यदि प्राणनाथ भी कही बाहर खबर फैला दे, और हाँ वह तो उसी का वकील है। क्या ठिकाना उससे मिल जाय और मुझे जलील करे। वह किससे कहे? इसी बीच मे शुभदा आ गई।

जैसे ही उसने शेफाली को देखा तो बोली, "कैसी तबियत है, चेहरा उतरा हुआ लगता है, जैसे महीनो की बीमार हो, जीजी! क्या बात है?" वह शेफाली की गोद में आ लेटी।

शेफाली कुछ देर तक चुप रहकर बोली, "कुछ भी तो नही।"

"कुछ कैसे नही? तुम्हारा चेहरा कह रहा है कि कोई गहरी मनो-वेदना तुम्हे सता रही है।"

शेफाली ने फीकी हँसी हँसकर कहा, "क्या कहने, डाक्टर तो तू है। मै ठीक हूँ। जा चाय पी। मैं भी एक प्याला पीऊँगी।"

इसके साथ ही उसने हीरादेई को बुला भेजा और इधर-उधर की बाते करने लगी। पर मन में जो भर-भर रहा था वह उसे भीतर ही भीतर जैसे खरौच रहा था।

शाम को प्राणनाथ आया। यह आज पहला ही मौका था कि शेफाली ने उसे बुलाया। उसके पैर सीधे नही पडते थे। वह कोर्ट से लौटकर जल्दी ही निश्चित होकर चला आया। आते ही कहने लगा, "क्षमा कीजिए, जिस समय मोहन गया था मै एक मुकदमे मे जिरह कर रहा था। हाँ, कहिए।"

शेफाली क्या कहती। पर शुभदा बोली, "जीजी की आज तबियत खराब है, प्राणनाथ बाबू!"

"मुझे लगता है कि इन्हे इससे भी ज्यादा बीमार होना चाहिए। भला कोई बात है? दिन-दिन भर रोगियो को देखती है, रात को भी आराम से नही सोती। ऐसा आदमी जिन्दा कैसे रहता है, यही आश्चर्य है!" प्राणनाथ बोला। "परन्तु हाँ, सेठ रामकुमार ने कहा है जब वह आपको छोडकर लौट रहा था कि यह दुर्घटना हो गई।"

"छोडकर? जीजी तो ताँगे मे आई है," शुभदा ने तत्क्षण बात काट दी।

शेफाली उसी समय बोली, "ठीक तो है मुझे दूसरे मरीज के घर छोडकर वे लौट गए, तभी की घटना हो सकती है।"

"तो आपके साथ और कोई नही था? जिसके घर जाना था, वह आदमी तो होगा ही?" शुभदा ने तर्क किया।

"अरी पगली, वह आदमी सेठ के घर आकर ही मुझे आने को कह गया था। बस, वहाँ से निबटकर मै उसके घर चली गई।"

दोनो चुप हो गए। शेफाली की जान-मे-जान आई। उसे अपनी बुद्धि पर भरोसा हुआ, परन्तु झूठ-पर-झूठ बोलने के लिए उसे ग्लानि भी कम न हुई।

"आप रात का जाना बिलकुल बन्द कर दीजिए। न जाने कब क्या दुर्घटना हो जाय। फिर तो अपनी प्रतिष्ठा सँभालना भी मुश्किल हो जायेगा, डाक्टर शेफाली!" प्राणनाथ ने सिर हिलाते हुए एक हितैषी भविष्यवक्ता का तरह कहा।

शुभदा ने शेफाली के बिस्तर के पास ही चटाई पर चाय का सामान लगाया और वह किसी काम से बाहर चली गई। इसी समय शेफाली ने प्राणनाथ से कहा, "आप ठीक कह रहे है। मै भी उसी समय से ऐसा ही सोच रही हूँ। फिर भी मै चाहती हूँ कि इस दुर्घटना मे मेरा नाम किसी तरह न लिया जाय।"

"तो मै भरपूर कोशिश करूँगा। और यह है भी ठीक। न जाने आपका नाम आने पर लोग क्या-क्या अटकले लगायेगे।"

"आप सेठ रामकुमार से मिले थे क्या आज ?"

"नही, उनका मुनीम कोर्ट में आया था। वही कह रहा था।"

सबने मिलकर चाय पी। इसके बाद शुभदा उठकर पढने चली गई। शेफाली सोच रही थी क्या इस दुर्घटना का पूरा ब्यौरा वह प्राणनाथ से कहे ? उसने प्रारम्भ से आज तक प्राणनाथ को विश्वास के योग्य समझा है। उसकी किसी बात मे उसे ओछापन दिखाई नही दिया। वह अनुभवी होने के साथ-साथ अच्छा मित्र भी है। यही बाते शेफाली ने प्राणनाथ के भीतर पाई।

इसी समय प्राणनाथ ने पूछा, "आपने बुलाया था, क्या कोई खास बात है ?"

शेफाली चुप रही। प्राणनाथ अधीर हुआ। उसकी बैरिस्टरी बुद्धि ने शेफाली के हृदय की गहराई को ताड लिया। वह बोला, "शेफाली जी, जिस दिन से मै आपके सम्पर्क मे आया हूँ उसी दिन से मैं आपके चरित्र को पढ रहा हूँ। उसी दिन से आपके प्रति मेरी श्रद्धा बढ रही है। आपके-से चरित्र के व्यक्ति मिलते कहाँ है ?"

शेफाली ने उत्तर मे केवल इतना ही कहा, "यह सब आपके हृदय की उदारता है, प्राणनाथ बाबू, मै तो एक साधारण स्त्री हूँ। परन्तु आज ऐसा अवसर आया है कि मुझे अपना बिलकुल अन्तरग मानकर आपसे कहना पड रहा है।"

"मै विश्वास दिलाता हूँ कि आपको निराशा नही होगी।"

शेफाली ने एक बार फिर प्राणनाथ की आँखो की तरफ देखा, उनमें झाँककर उसे पढना चाहा। फिर सेठ रामकुमार के साथ बीती दुर्घटना सिलसिलेबार सुना दी। प्राणनाथ चुपचाप सुनता रहा। वह बराबर शेफाली के कहने की भावभगी, शब्द-विन्यास की शैली को पढने की चेष्टा करता रहा।

सुनने और सारी परिस्थिति पर विचार करने के बाद प्राणनाथ ने कहा, "मै भी मानता था और बार रूम के कुछ वकीलो का भी यही खयाल था कि इस घटना का सम्बन्ध किसी स्त्री से होना चाहिए। बात ठीक निकली। आप बिलकुल चिन्ता न करें। मै प्रयत्न करूँगा कि आपका नाम किसी भी तरह इसके साथ न जुडे। मै आज ही सेठ रामकुमार से मिलूँगा।"

इसके बाद शेफाली बोली, "मै इस परिणाम पर पहुँची हूँ कि डाक्टरी का पेशा भी खतरे से खाली नही है। आखिर कभी-कभी तो डाक्टर को रात को भी बीमार देखने जाना ही पडता है। कोई इस सम्बन्ध मे नियम तो नही बनाया जा सकता, प्राणनाथ बाबू!"

प्राणनाथ चुप रहकर बोला, "यह रात को मरीज देखने जाने का इतना प्रश्न नही है जितना व्यक्ति के रूप का है। क्षमा कीजिए। सारे शहर में आपकी सुन्दरता, शालीनता प्रसिद्ध है। लोगो को हैरानी है, इतनी सुन्दर होते हुए भी आपने अभी तक शादी क्यो नही की! अवश्य ही कोई विशेष कारण है या आपको प्रेम सम्बन्धी ठेस पहुँची है, जिससे मजबूर होकर आपने विवाह न करने की प्रतिज्ञा की है।" प्राणनाथ ने अपने मन की बात इस तरह घुमा-फिराकर कही।

शेफाली अपनी पुरानी कथा दुहराने जा रही थी कि कुछ सोचकर चुप हो रही। फिर बोली, "हो सकता है, परन्तु मुझे ऐसी कोई बात नही लगी। मै तो वैसे ही माँ की इच्छा के अनुसार डाक्टर बनी हूँ। वैसे भी सेवा करने की मेरी प्रवृत्ति बचपन से है। आप मानते है, स्त्री स्वभावत: दयालु प्रकृति की होती है।"

प्राणनाथ ने शेफाली की यह बात सुनी, परन्तु विश्वास उसे नही हुआ। उसने पूछा—

"तो क्या माँ ने यह भी चाहा कि आप विवाह न करे ?"

"नही, यह मेरा निश्चय है, परन्तु अब मै सोच रही हूँ कि मुझे वैसा करना ही होगा।"

"वह दिन आपके और उस व्यक्ति के सौभाग्य का होगा, शेफाली देवी।"

"निश्चय से कह सकना कठिन है। जीवन का प्रवाह जहाँ सरल है वहाँ बहुत वक्र भी है, दुरभिजेय भी है, प्राणनाथ!" इतना कहकर शेफाली ने मुस्कान-भरी एक नजर प्राणनाथ के ऊपर डाली। "आपका क्या विचार है ?"

"आप मुझसे पूछ रही है ?"

शेफाली ने अपनी बात के दो अर्थ समझकर तत्क्षण कहा, "मेरा मतलब विवाह करने से है।"

"बुरा तो नही है, बल्कि एक तरह से अच्छा है। वैसे भी जो बात आपके हृदय में है उसका मै जवाब भी क्या दूँ।"

"मै निश्चय कर रही हूँ।"

"आपके निश्चय का सौभाग्य दिनो, सप्ताहो या मासो मे किसको मिलने वाला है ?" आँखो मे ही हँसकर प्राणनाथ ने प्रश्न किया।

"यह तो उत्तर-पक्ष पर निर्भर है, प्राणनाथ!"

"हर एक प्रश्न का उत्तर होता है। यदि प्रश्न ही नही होगा तो उत्तर कोई क्या दे।" इतना कहकर प्राणनाथ ने शेफाली का हाथ पकड़ लिया।

शेफाली ने अपना हाथ प्राणनाथ के हाथ में रहने देकर कहा, "मैं इधर कल रात से इस दुर्घटना से पागल हो गई हूँ। न जाने क्या हो ? मुझे डर है सेठ को कही 'पेनोफेलमाइटस' न हो जाय। फिर तो सारा जीवन उस बिचारे का खराब हो जायेगा और यदि रामकुमार की आँखें

ठीक न हुई तो हो सकता है वह क्रोध में आकर मेरा नाम ले दे।"

प्राणनाथ ने शेफाली की बात की गुरुता को समझा और थोड़ी देर बाद वह चला गया।

दूसरे दिन प्राणनाथ सेठ के घर पहुँचा तो मालूम हुआ वह अस्पताल मे है। वह अस्पताल पहुँचा। उसकी आँखे बहुत ही खराब हो गई थी। उसकी आँखो मे अलसर हो गया था। घावो के कारण दोनो आँखो में खराबी आ गई थी। रुपया पानी की तरह बहाया जा रहा था। डाक्टर और नर्स बराबर सेठ की देखभाल कर रहे थे। नगर के सभी प्रतिष्ठित व्यक्ति वहाँ आ-जा रहे थे।

डाक्टर से पूछने पर उसने कहा, "सम्भव है आराम हो जाय।" प्राणनाथ यत्न करके भी एकान्त न पा सका। आँखो पर उसके पट्टी बँधी थी। देख सकने का तो प्रश्न ही नही था। जिस समय प्राणनाथ का नाम सेठ ने सुना तो वह स्वय बोला, "बैरिस्टर साहब, इधर आइए न! आपसे कुछ काम है। और कौन है यहाँ पर? जरा मुझे आपसे एकान्त मे बाते करनी है।" सब लोग चले गए। एकान्त पाकर रामकुमार ने प्राणनाथ का हाथ अपने हाथ मे लेकर पूछा, "कहाँ से आ रहे हो?"

"सीधा घर से। तुम्हे देखने आया हूँ। कैसी तबियत है? यह सब हुआ कैसे?"

रामकुमार ने उत्तर दिया, "दुर्घटना कहकर नही आती, बैरिस्टर साहब! मै तुमसे एक बात पूछना चाहता हूँ।" इतना कहकर वह रुक गया।

"पूछिए न!"

"बात तुम्ही तक है। क्या मै किसी तरह भी डाक्टर शेफाली की मनोवृत्ति का परिचय पा सकता हूँ? मुझे लगता है, उस रात को मेरे और मेरी पत्नी के कारण उन्हे बहुत दुःख पहुँचा है। मै उन्हे उनकी फीस भी नही दे सका।"

"मै पूछकर देखूँगा।"

"नही।"

इतन्ना कहकर रामकुमार चुप हो गया। वह समझ नही पा रहा था कि किस तरह अपने मन की बात कहे।

प्राणनाथ ने इसी बीच कहना शुरू किया, "यह तो कोई ऐसी बात नही है, जिसमे आप डाक्टर शेफाली की मनोवृत्ति के सम्बन्ध मे व्याकुल हो। उनकी फीस उन्हे दे दी जायेगी। बस, आखिर डाक्टर का तो काम है कि जब कोई बुलावे तब आवे।"

'ठीक है पर मुझे ऐसा लगता है कि वह मुझसे नाराज हो गई है। वे बहुत भली है। अच्छा, ठीक होते ही मै स्वय उनसे मिलूँगा। माफी माँग लूँगा। तुम कुछ न कहना।" इतना कहकर रामकुमार चुप हो गया। उसने उधर मुकदमे की दो-चार बाते की और उसे बिदा कर दिया। प्राणनाथ ने उसके द्वारा स्पष्ट न कहे जाने पर भी सारी स्थिति समझ ली और चला आया।

शेफाली ने सुना तो उसे तसल्ली हुई। जब शेफाली ने पूछा, "क्या मैं सेठ को हस्पताल में जाकर देख आऊँ ?" तो प्राणनाथ ने इसका विरोध किया।

इधर एक दुर्घटना हो गई। हीरादेई की लडकी सरोज और लडके नलू की अपने नाना के घर अचानक मृत्यु हो गई। माँ की बीमारी का हाल सुनकर हीरादेई अपने बच्चो के साथ गाँव चली गई। वहाँ लडके को हैजा हो गया। गाँव का मामला, कोई डाक्टर अथवा वैद्य तो मिला नही। एक सिडी से अनाडी हकीम को बुलाकर दवा कराई। दूसरे दिन ही लडका और उसके दो दिन बाद सरोज चल बसी और उसके साथ ही गोद का लडका भी। हीरादेई मन मसोसकर रह गई। बहुत रोई-चिल्लाई। एक-एक करके उसके आठ बच्चे इसी तरह जाते रहे थे।

शेफाली के पास समाचार उस समय आया जब तीनो बच्चे हीरादेई के हाथ से छिन गए। शेफाली ने कम्पाउण्डर को भेजकर हीरादेई को बुला लिया, बहुत ढारस बँधाया, किन्तु हीरादेई उस दु ख को न भूल सकी। पहले कुछ दिनो तक तो पागल-सी गुम-सुम रही, न किसी से बोलती न बात करती, दिन-भर आँखे फाड-फाडकर देखती रहती, जैसे उसके रोम-रोम मे शोक का प्रबल वेग छा गया हो, जैसे उसकी चेतना-ग्रन्थियो में नि शून्यता भर गई हो। शेफाली ने काफी प्रयत्न किया, काफी समय देना पडा, तब जाकर वह प्रकृतिस्थ हो पाई। फिर भी दिन-भर अपनी कोठरी मे बैठी रोती रहती। शुभदा जब-तब जाकर उसे धीरज बँधाती। शेफाली भी रात को उसके पास बैठकर उसे तसल्ली देती। इन दिनो हीरादेई की अवस्था देखकर दु:ख होता था। उसका रूप और शरीर घोर दु.ख मे निष्प्राण हो गए थे। उसका मन बहलाने के लिए शेफाली ने उसे अपना सहकारी बना लिया। धीरे-धीरे वह उसे नर्स का काम सिखाने लगी।

प्रयत्न करने पर भी जगन्नाथ का हीरादेई को कोई पता न चला। कभी कोई कहता कि वह जेल मे है, कभी समाचार मिलता कि वह सरकारी नजरो से भागा-भागा फिर रहा है। इसी दु ख मे हीरादेई एक बार फिर बीमार पड गई। शेफाली ने उसकी सेवा मे कुछ भी उठा न रखा। वह रात को हीरादेई के पास ही सोती; दिन मे उसकी देख रेख करती, स्वय अपने हाथो से उसे दवा पिलाती, उसके पथ्य की व्यवस्था करती। परिणामस्वरूप शेफाली की सेवा और लगन से हीरादेई रोग-मुक्त हो गई। इधर दिन-रात काम करते-करते तथा ठीक आराम न करने के कारण शेफाली के स्वास्थ्य पर भी उसका असर हुआ।

एक दिन शाम को प्राणनाथ ने कहा, "शेफाली देवी, लगता है जैसे आप महीनो की बीमार है।"

"भीतर से मै बहुत प्रसन्न हूँ प्राणनाथ बाबू, अपने जीवन में पूरी तरह सेवा करने का मुझे यही अवसर मिला है।"

"अपना स्वास्थ्य खोकर आप निरन्तर सेवा नही कर सकती और आपके मन की प्रसन्नता भी रह न सकेगी।"

"कभी-कभी मै सोचती तो हूँ, पर क्या करूँ काम से छुटकारा मिले तब न ?"

"मेरी राय है आप थोडे दिनो के लिए पहाड हो आइये।"

"शुभदा की परीक्षा होते ही मै जाने की चेष्टा करूँगी। केवल दो सप्ताह की बात है।"

प्राणनाथ ने राममोहन का प्रसूति-गृह वाला प्रस्ताव उसके सामने रखते हुए कहा, "राममोहन ने नगर के बाहर बाग के पास चालीस बीघे का एक प्लाट खरीदा है।"

"अच्छा तो है।"

"अस्पताल के लिए इजीनियर को डिजाइन के लिये भी कहा है। नक्शा पास होते ही काम शुरू हो जायेगा।"

शेफाली को प्रसूति-गृह के सम्बन्ध में बहुत उत्साह न लेते देखकर प्राणनाथ ने कहा, "जो डाक्टर सब का स्वास्थ्य ठीक करे वही बीमार या अस्वस्थ हो तो आश्चर्य है। आपको अवश्य पहाड जाना चाहिए।"

"मेरे स्वास्थ्य के सम्बन्ध मे शायद सभी को बहुत चिन्ता हो गई है। साधना भी आई थी, उसने भी यही कहा था। अब मुझे निश्चय ही कुछ न कुछ करना होगा। न करने से काम भी तो नही चलेगा। शुभदा के पर्चे अच्छे हो रहे है। शायद अच्छा डिवीजन आ जाय।"

"आगे क्या एम० ए० ज्वाइन करने का इरादा है ?"

"यह तो वही जाने। यदि उसे एम० ए० करना होगा तो कौन मना करता है।"

प्राणनाथ कुछ देर चुप रहकर बोला, "आपने शुभदा को जिस तरह अपनाया है, वह अद्भुत है। मालूम होता है जैसे सगी बहन हो।"

"शुभदा की आत्मीयता भी मेरे लिए कम गौरव की वस्तु नही है, प्राणनाथ बाबू ! वह भी एक-मात्र मुझे अपना अभिभावक मानती है।

मुझसे पूछे बिना कुछ भी कर सकना उसके लिए असम्भव है। हीरादेई ने जिस प्रकार तन्मयता से मुझे अपनाया है, उसे देखकर लगता है कि वह मुझे भी छोडकर कही नही जायेगी। मनुष्य में निश्छल भावना चाहिए। इधर हीरादेई बडी तेजी से नर्स का काम सीख रही है। मै चाहती हूँ वह भी ट्रेनिंग लेकर एक सर्टिफिकेट ले ले। किन्तु मुश्किल यह है कि पढी-लिखी नही है; उसे दाई का सर्टिफिकेट मिल सकता है, नर्स का नही।"

हँसकर प्राणनाथ बोला, "तो यो कहिए कि कोई भी आपके यहाँ आकर आश्रय ले सकता है, उसके पति का क्या हुआ ?"

"उसका कुछ भी पता नही लग रहा है। कुछ लोग कहते है कि वह जेल मे है, दूसरे कहते है फरार है।"

प्राणनाथ ने कहा, "सुना है तारा ने पार्टी का काम छोड़ दिया है।"

"क्यो ? वह तो घोर कम्यूनिस्ट थी न ?"

"कहते है तारा अब वह नही रही। वह आजकल बम्बई में है। सुना है वह रूस जा रही है, परन्तु पासपोर्ट की दिक्कत है। उसके काम करने का ढग अच्छा है। बम्बई की पार्टी में उसका बहुत ऊँचा स्थान है।"

शेफाली ने इस समाचार को आँख फाड़कर बडी उत्सुकता से सुना। "सचमुच ? वह बडी तेज है एक दिन···" इतना कहकर वह चुप हो गई।

प्राणनाथ बोला, "हाँ, एक दिन, आप आगे क्या कह रही थी ?"

"एक दिन वह मेरे पास आई थी—तीन मास का गर्भ लेकर। मैने कहा—विवाह कर लो तारा, मै ऐसा काम नही करती।"

प्राणनाथ जैसे चौक उठा, बोला, "फिर ?"

"मैने उसे एक और लेडी डाक्टर बता दी। उसके बाद मुझे नही मालूम।"

"शायद उसका काम हो गया था। स्त्री के लिए यह बडा कष्टप्रद

प्रसग होता है। देश की सेवा के मुकाबले में उसका यह काम मामूली है। आखिर मनुष्य ही तो है।"

शेफाली ने जरा उग्र होकर कहा, "फिर भी शायद ससार का कोई भी सभ्य समाज इसकी स्वीकृति नही देता। और तो और उस व्यक्ति की आत्मा, जिससे यह भूल हुई है, वह भी भीतर-ही-भीतर लज्जित होती है, पश्चात्ताप करती है। क्षणिक सुख के आवेग मे जीवन का यह अनन्त पश्चात्ताप है, प्राणनाथ बाबू! स्त्री ही इसको समझ सकती है। मेरे सामने आये-दिन ऐसे केस आते है। मै जानती हूँ कि ऐसी लडकियो की क्या दशा होती है।"

इसके साथ ही शेफाली ने नगर के प्रसिद्ध परिवार की एक लडकी के सम्बन्ध मे बताया कि उसने निरुपाय होकर आत्महत्या कर ली। सेक्स को स्वाभाविक मानते हुए भी उसका नियन्त्रण आवश्यक है। "उस दिन रात को तारा अचानक मेरे सामने आ खडी हुई। उसके पास जगन्नाथ का पत्र था। मै उस समय दवाखाने मे बैठी थी। सब लोग जा चुके थे। आकर उसने चुपचाप मुझे वह पत्र दिया। मैने पढा और उसकी ओर देखने लगी। उसने कहा—'इसमे मेरी भूल नही है। एक साथी ने मेरे साथ बलात्कार किया है।'"

"'बिना तुम्हारी मरजी के ऐसा सम्भव नही है,' मैने कहा।"

"वह चुप रही और बोली, 'क्या आप मेरी सहायता कर सकती है?'"

"मैने पूछा, 'क्या तुम उससे शादी नही कर सकती? शादी कर लो।'"

"'नही, मै ऐसा नही कर सकती। वह निकम्मा है। फिर मुझे अभी शादी नही करनी है। मेरा काम अधूरा है।'"

"किन्तु तुम्हे सम्हलकर चलना चाहिए था।'"

"इसका उसने कोई जवाब नही दिया। अन्त मे मैने कहा, मैं ऐसा काम अनुचित समझती हूँ तारा, तुम्हे मै एक और डाक्टर का

नाम बताये देती हूँ, वह कभी-कभी ऐसा काम करती है। तुम वहीं जाओ।' वह चुपचाप चली गई।"

"मै समझता हूँ वह जगन्नाथ ही होगा। स्त्री सर्वसाधारण को इस मामले में अपने कान्फिडेन्स में नही ले सकती।"

"हो सकता है। यदि ऐसा है तो वह बडा पतित है। उसके स्त्री है।"

"पुरुष बडा उच्छृङ्खल होता है।"

"तब तो डरना चाहिए", उसने मुस्कराकर कहा।

"पर यह स्वाभाविक है। कोई भी सेक्स के वेग को रोक नहीं सकता।"

"और समाज ?"

"जीवन के आवेग पाप-पुण्य नही देखते।"

"हो सकता है", कहकर शेफाली चुप हो गई।

जगन्नाथ बडे जोश से पार्टी का काम करता रहा। उसने कुछ चन्दा माँगकर और कुछ और तरह से रुपया इकट्ठा किया। तारा उन सबकी देख-रेख करती। इन्ही दिनो बम्बई से एक कार्यकर्त्ता आ गया। उसने दिन भे मजदूरो मे काम करने और काम चलाने के लिए उनसे ही चन्दा लेने की प्रथा डाली। धीरे-धीरे कुछ रुपया भी जमा होने लगा। तारा और मधुकर दोनो बराबर मजदूरो मे काम करने लगे। रात को उन्होने हरिजनो की बस्ती मे एक पाठशाला खोल दी। तारा स्त्रियो को पढाती और मधुकर पुरुषो को, पर बहुत कम स्त्रियाँ ऐसी थी जो पढने आती। अक्सर बच्चे ही घेर-घारकर लाये जाते, उन्हे ही वह पढाती। मधुकर लोगो को गरीबी का एक-मात्र उपाय साम्यवाद बताता। वह रूस की क्रान्ति और उससे पहले की देश की दशा का

जो इधर कदम धरे तो !"

"हम आखिर तुम्हे पढाते ही तो है। तुम्हारा कुछ लेते तो नही।"

"हमे नही पढना, हम ऐसे ही भले है।"

इसी समय रूपा की बडबोली औरत आ गई और कहने लगी, "इतनी बडी लुगाई अकेली गैर मरदो के साथ रहे है। क्या हमारे घर भी खराब करने है ?"

उस दिन पाठशाला नही लगी। मधुकर ने बहुत-कुछ समझाया परन्तु किसी की कुछ भी समझ में नही आया। दोनो लौट गए। रास्ते में तारा बोली, "बडा मूर्ख देश है !"

मधुकर चुपचाप क्रोध मे भरा चला जा रहा था। बोला, "बात ठीक है। यह बात इनकी समझ मे आ ही नही सकती कि बिना ब्याह के एक लडकी कैसे किसी लडके के साथ रह सकती है। कल से हम जगन्नाथ और शमशेर को लेकर आएँगे।"

जगन्नाथ ने आकर सब लोगो को धीरे-धीरे समझाया। तारा दफ्तर का काम करने लगी। वह कभी-कभी अकेले मजदूरो की बस्ती मे औरतो में काम करती। जो दो-एक लडकियाँ इधर-उधर से इकट्ठी हो गई थी, वे कुछ दिन बाद चली गई।

आखिर एक दिन मधुकर बोला, "तारा को ट्रेनिंग लेने बम्बई भेज दिया जाय।" जगन्नाथ ने इसका विरोध किया। वह नही चाहता था कि तारा वहाँ से जाय। बडे कम्यून के कार्यालय से सम्बद्ध होने के कारण आज्ञा मानना आवश्यक था। तारा को जाना पडा। वह बम्बई चली गई। कुछ दिन बाद मधुकर को आगरा, कानपुर जाने का आर्डर मिला। आगरे और कानपुर का काम सम्हालने के लिए मधुकर चला गया। शमशेर, जगजीत भी उदास हो गए थे। जगन्नाथ इधर-उधर घूमता रहता।

तीन मास बाद तारा फिर लौट आई। जगन्नाथ बडा प्रसन्न हुआ। अब उसका काम में मन लगने लगा। वह बडे उत्साह से काम करने

लगा। थोडे ही दिनो में तारा के उत्साह से पार्टी मे नई जान आ गई। जगन्नाथ ने चमारो, भंगियो की बस्ती मे प्रचार-कार्य प्रारम्भ कर दिया। शमशेर कालेजो के लडको में जा बैठता। उन्हे कम्यूनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम और भावी जीवन के सन्देश सुनाता। कभी जगन्नाथ, कभी जगजीत और कभी शमशेर घूम-घूमकर पार्टी का प्रचार करते। तारा उनके काम की योजना बनाकर देती और वे काम करते। जैसे-ही-जैसे उनका काम बढ रहा था वैसे ही सरकार के कान भी खडे होने लगे थे। पुलिस पीछे लगी रहती। उनके काम पर कडी नजर रखी जाने लगी। बम्बई, कानपुर और अहमदाबाद मे हडताले कराने का काम पार्टी की तरफ से हुआ। सब लोगो को जहाँ-तहाँ भेजा गया। थोडी-बहुत सफलता भी मिली, परन्तु रुपये के अभाव से पूरी सफलता कही नही मिली। हडताल थोडे दिन चलकर रह जाती, फिर भी कार्यकर्ताओ में उत्साह की कमी न थी। सब लोग अपना काम कर रहे थे। एक दिन अहमदाबाद की मिल मे काम करते हुए जगन्नाथ को खबर मिली कि सरकार ने पार्टी को अवैध घोषित कर दिया है। पार्टी के दफ्तरो की तलाशी हुई। पुलिस को जो कुछ मिला वह उठा ले गई। लोग इधर-उधर पकडे गये। जगन्नाथ कान्हूभाई नाम के एक मजदूर के घर छिपकर रहने लगा। दिन-भर उसके घर के भीतर छिपा रहता। रात को बाहर निकलता। एक रात को घूमते-घूमते साबरमती के किनारे एकान्त में उसे तारा मिली। वह भी पुलिस की नजरो से भागती फिर रही थी।

जगन्नाथ तारा के पास गया और उसके कन्धे पर हाथ रखकर बोला, "मै तुम्हे ही ढूँढ रहा था तारा। दिन मे तो निकलना मुश्किल है, रात को ही निकलकर तुम्हे ढूँढता रहा हूँ। बराबर पन्द्रह दिन से साबरमती आता हूँ।"

"मै पास के गाँव मे हूँ। आज इसी आशा से आई कि तुम मिलोगे। अब यहाँ रहना बेकार है। पुलिस ने चुन-चुनकर हमारे लोगो को पकड़ लिया है। अच्छा हो हम लोग वापस लौट चले।"

"आज ही रात की गाडी से ?"

"हाँ।"

"परन्तु अहमदाबाद के स्टेशन से बैठने में खतरा है।"

"हम लोग पैदल चलकर दूसरे स्टेशन से बैठे, पर मै तो भूखी हूँ।"

"ठहरो, मै तुम्हारे लिए कुछ खाना ले आता हूँ।" इतना कहकर जगन्नाथ उस अँधेरे मे छिप गया। किनारे-किनारे सडक की बत्तियो से बचता जगन्नाथ एक दुकान से कुछ मिठाई-नमकीन खरीदकर लौटा तो देखा तारा वहाँ नही है। दो आदमी टहल रहे है। जगन्नाथ एक पेड की आड मे हो गया और उन दोनो की गति देखता रहा। वे कह रहे थे, "हमारी आँखे धोखा नही दे सकती। वह अभी यही थी। शायद हमारी टार्च की रोशनी को देखकर इधर-उधर हो गई है।"

इसके बाद टार्च की रोशनी फिर उन्होने इधर-उधर फेकी। जगन्नाथ पास के बँगले के पीछे झाडी मे छिपकर बैठ गया। वे लोग बहुत देर तक इधर-उधर खोजते रहे। पेडो पर उन्होने लाइट फेकी, इसके साथ ही पाँच-सात पुलिस के और आदमी भी आ गए। एक बार तो जगन्नाथ के ऊपर भी रोशनी पडी किन्तु मैले कपडो और पत्तो में ढके रहने के कारण वे उसे देख न पाए। वे फिर इधर-उधर तलाश करने लगे। जगन्नाथ को लगा कि वह अवश्य ही पकडा जायेगा, इतनी तेज रोशनी और इन आँखो से उसका बचना मुश्किल है। वह साँस साधकर लेट गया। इधर पूरब की तरफ से कुछ खडबड की आवाज आई तो सब लोग उधर ही घूम गए। वहाँ कुछ भी न था। केवल एक गीदड भागकर दूसरी ओर चला गया था। पुलिसवाले बहुत देर तक एक-एक पेड और पत्तियो को देखकर चले गए। जगन्नाथ चुपचाप पड़ा रहा। उसने देखा कि दो आदमी अब भी वहाँ घूम रहे है। उसने समझ लिया कि तारा इनमें नही है। वह शायद पकडी भी नही गई है। हो सकता है वह रोशनी देखकर पहले ही कही छिप गई हो और उसके बाद वे लोग आये हों। परन्तु अब वह कब तक इस तरह पडा रहेगा,

यही सोचता रहा। लगभग आध घण्टे के बाद वे दोनो आदमी चुपचाप साबरमती के किनारे-किनारे चले गए। जगन्नाथ पसीने से तर हो रहा था, फिर भी वह वैसे ही पडा रहा। वह उस समय तक पडा रहा जब तक उन लोगो के पैरो की आहट दूर नही हो गई। अब वह उठा, किन्तु इस अँधेरे मे, जबकि दूर पर सडक की बिजली की रोशनी टिमटिमाते तारो की तरह दिखाई पड रही थी, वह तारा को कहाँ खोज पाता। अँधेरा बढ रहा था। आकाश मे बादल छा रहे थे। गरमी से पसीना-पसीना होकर जगन्नाथ उठा और किनारे पर गया। उसके हाथ में तारा के लिए खाना था। वह उसने रख दिया और प्यास बुझाने के लिए पानी पीने लगा। फिर वह उसी जगह जा बैठा जहाँ वह तारा को छोड गया था। उसे विश्वास था कि यदि तारा पकडी नही गई है तो वह अवश्य आयेगी। वह बैठा ही रहा। एक तरफ ध्यान से देखने पर कुछ हिलता-सा दीख पडा। वह उठा और उसी ओर बढा। ऊबड-खाबड जगह तथा अँधेरे मे कुछ भी सूझ नही पड रहा था। वह पास जाकर आँखें फाडकर देखने लगा तो मालूम हुआ कि गाय थी। इसी अस्त-व्यस्त दशा मे जगन्नाथ बहुत देर तक कभी उसी स्थान पर आता और इधर-उधर ताकता। तारा की कही छाया भी न थी। जगन्नाथ को विश्वास हो गया कि या तो तारा पकडी गई है और या फिर वह गाँव की ओर भाग गई। उसे गाँव का भी पता नही था, जहाँ जाकर वह ढूँढता। आखिर हारकर वह उठा और वापिस मुडा। निरुद्देश्य जीवन की तरह उसे यह सब लग रहा था, किन्तु न चाहने पर भी उसके पैर साबरमती नदी के पुल की ओर चले। कुछ दूर जाने पर उसे झोपड़े दिखाई दिए। वह उन्ही के पास जाकर ठिठक गया। बहुत देर तक खड़ा रहा। उसके हृदय मे निराशा-आशा का घोर द्वन्द्व चल रहा था। उसने निश्चय किया कि यदि तारा न मिली तो वह भी वापस अपने घर लौट जायेगा। अहमदाबाद में रहकर उसे कुछ भी नही करना है। वह अकेला था। जिस आदमी के सहारे वह उसके घर ठहरा था, वह

कान्हूभाई एकदम आवारा ढग का व्यक्ति था। हडताल के दिनो में उससे जान-पहचान हुई थी। वह सप्ताह-भर मजदूरी कर लेता और दो-चार दिन की छुट्टी मनाता, शराब पीता और बेसुध पडा रहता। कभी-कभी उसकी बहन आती और उसे खाना खिलाती। बहन पास ही रहती थी। उसने पिछले दिनो अपने पहले पति को छोडकर एक और से सम्बन्ध कर लिया था। राधा ने जब जगन्नाथ को पहली बार देखा तो ठिठककर रह गई। भाई ने बताया कि यह बहुत काम का आदमी है—गरीबो का सेवक। इसी ने हडताल कराई थी और दिन-रात मजदूरो की सेवा की। जब मिल वालो के आदमियो ने मजदूरो को पीटा उसमे इसे भी चोट आई। दिन-भर यह छिपा पडा रहा। शाम को कुछ ठीक होने पर वही उसे दया करके अपने घर ले आया। राधा ने उसे भी बाजरे की रोटियाँ खिलाई और चली गई। उस दिन से राधा जगन्नाथ के लिए भी खाना ले आती और बोली न समझने पर भी जगन्नाथ के पास बैठती। जगन्नाथ उसकी बाते पूरी तरह नही समझ पाता था फिर भी दोनो की बाते होती। राधा की उम्र पैंतीस से ऊपर थी—देखने मे कुरूप, काली परन्तु टीम-टाम से रहने वाली स्त्री। जगन्नाथ दिन-भर भीतर कोठरी मे पडा रहता, रात को बाहर निकलता। एक दिन दोपहर के समय राधा भोजन लेकर आई तो उसने जगन्नाथ को ही पाया। भाई कही गया था। वह उसी के पास बैठ गई। उसने जगन्नाथ के गले मे हाथ डालकर उसका मुँह चूम लिया। वह पहले तो कुछ झिझका। अब राधा एक तरह से जगन्नाथ की पूरी तरह सेवा करने लगी। इधर राधा से वह डरने भी लगा था। वह जब-तब उससे अपना पति बनने को कहती। वह कहती, "यदि जगन्नाथ चाहे तो वह अपने पहले मालिक को छोड सकती है।" पर जगन्नाथ को जैसे उसे देख उबकाई आती। फिर भी नियत समय एकान्त पाकर दोनों मिल जाते। उसे एक डर यह भी था कि यदि वह मना करेगा तो यह औरत न जाने पुलिस को खबर ही कर दे तो वह पकडा

जायेगा, क्योकि एकाध बार जगन्नाथ के मना करने पर उसने धमकी दी थी। इधर जगन्नाथ स्वय भाग जाना चाहता था। यही सब बातें जगन्नाथ उस समय खडा-खडा सोचता रहा।

रात अपने पूरे यौवन पर थी। वह फिर एक बार तारा को पाने की चेष्टा मे पीछे लौटा, तो देखा तारा वही बैठी है। उसने बताया कि पुलिस वाले जिस समय टार्च जलाकर दूर से आ रहे थे, उसी समय वह साबरमती मे कूद पडी और उनके आते-आते वह पार की झाडियो में छिप गई। अभी आध घण्टा हुआ लौटी है। हाथ लगाकर जगन्नाथ ने देखा कि उसके कपडे भीग गए थे। जगन्नाथ ने तारा को खाना खिलाया और दोनो वहाँ से चल दिए। उस समय रात के दो बजे थे। आकाश में चाँद का टुकडा उग आया था। फिर भी देखने योग्य पूरा प्रकाश न था। दोनो स्टेशन की लाइन की ओर चल दिए। दोनो लाइन के दोनो ओर मकानो की कतार पार करते चले जा रहे थे।

"अब कितनी रात होगी, मै तो थक गई हूँ ?"

"अभी काफी रात है; न हो हम लोग कही सुस्ता लें।"

"पर मकानो से तो पीछा छूटे ?"

"हाँ, इन्हे तो पार ही करना होगा, जरा और चलो।" इसके साथ ही जगन्नाथ तारा को सहारा देकर चलाने लगा। थोडी देर चलने के बाद तारा ठहर गई। जगन्नाथ ने पीछे मुडकर देखा, "और बस, बहुत दूर नही है, हम एकान्त मे पहुँचने ही वाले है।

"नही, अब मै और आगे नही चल सकती।"

"बस थोडी दूर और चलो तारा, मकान समाप्त हो गए है।" इतना कहकर जगन्नाथ ने तारा का हाथ पकड लिया।

तारा फिर कुछ दूर चली। लाइन की पटरी पर बैठकर बोली, "न जाने हम लोग कहाँ है ? मै तो बहुत थक गई हूँ जगन्नाथ !" फिर जगन्नाथ के कहने से तारा और आगे चली। पास ही एक पुल पर दोनो बैठ गए। चाँद अब पूरा निकल आया था। चारो ओर सुनसान ! इधर-

उधर खेत, मैदान और झाडियाँ। स्पष्ट कुछ भी नही था। अपने अस्पष्ट भाग्य की तरह दोनों बैठ गए। तारा पुल के पत्थरो पर लेट गई।

जगन्नाथ बोला, "नींद तो मुझे भी आ रही है, परन्तु यह जगह बिलकुल असुरक्षित है।"

पुल की चौडाई बहुत असाधारण थी—दोनो ओर गिरने का डर। फिर भी तारा लेट गई। जगन्नाथ ने तारा का सिर अपनी गोद मे लेना चाहा तो उसने प्रतिरोध करके सिर हटा लिया। जगन्नाथ ने एक बार फिर उसका सिर गोद मे रखने की चेष्टा की तो वह चुप रही। जगन्नाथ तारा के सिर पर हाथ फेरने लगा। तारा ने जगन्नाथ की कमर मे हाथ डाल दिया। जगन्नाथ का साहस उद्बुद्ध हो उठा। उसने मन्द प्रकाश मे मुरझाए हुए तारा के रूप को देखा। उसके यौवन से गदराये शरीर से उभरते हुए सौन्दर्य का स्पर्श पाकर जगन्नाथ ने तारा का मुँह चूम लिया।

"तुम्हे शरम आनी चाहिए, जगन्नाथ!"

"मै तो तुम्हारा ही हूँ तारा! क्या हम इतने दिनो एक-दूसरे के साथ रहकर एक नही हो गए?"

"नही, नही!" इतना कहकर वह फिर लेट गई।

जगन्नाथ ने फिर तारा का सिर उठाकर गोद में रख लिया। तारा का शरीर शिथिल पड गया। जगन्नाथ ने उसे उठाकर हृदय से लगा लिया। तारा कुछ भी प्रतिरोध न कर सकी। उस अँधेरी एकान्त रात मे जगन्नाथ और तारा उसी पुल के ऊपर लेटे एक-दूसरे के आलिंगन में आबद्ध हो गए और थोडी देर के बाद फिर उठकर पास के स्टेशन पर पहुँच गए। तारा को लगा कि जैसे उसका सम्पूर्ण गौरव, आत्म-सम्मान, प्रतिष्ठा, चिर-सचित यौवन उस अँधेरी रात में न जाने कहाँ बह गया। वह उदास हो गई। जगन्नाथ ने उसे बहुत समझाया, सान्त्वना दी।

जगन्नाथ लौटने पर भी हीरादेई से नही मिला। तारा के एक-मात्र

भाई ने तारा की बहुत भर्त्सना की। उसे भ्रष्ट दुराचारिणी कहकर निकाल दिया। इस काम मे भाई की पत्नी ने सहायता दी। वह लौट आई और फिर शहर से बाहर जमुना जी के पास एक मकान मे दोनों रहने लगे। तारा को कुछ-कुछ आभास हुआ कि वह माँ बनने वाली है, इससे उसे और भी दु ख हुआ। यह बात एक दिन उसने जगन्नाथ पर प्रगट की तो वह भी चुप रहकर सोचने लगा।

"अब क्या होगा जगन्नाथ, मेरी तो जिन्दगी खराब हो गई। मै तो इससे मर जाना बेहतर समझती हूँ।"

जगन्नाथ फिर भी चुप रहा। थोडी देर के बाद बोला, "डा० शेफाली तुम्हारी मदद कर सकती है। कहो मै एक पत्र लिख दू ।"

तारा फिर भी चुप रही। जगन्नाथ ने एक पत्र शेफाली के नाम देते हुए कहा, "इसे ले जाओ, कृपा करके उसे और कुछ न बताना।" और उठकर चला गया।

वह पत्र बहुत देर तक वही पडा रहा। तारा क्षोभ और घृणा से भर गई। उसे लगा कि जैसे उसका जीवन व्यर्थ हो गया। उसकी सारी आशाओ पर पानी पड गया। उसका सम्पूर्ण उत्साह ठण्डा पड गया। स्त्री के लिए इससे अधिक दु ख की बात क्या हो सकती है कि समाज से उसे छिपना पडे, उसके सामने उसे हीन होकर रहना पडे। रह-रहकर उसमें प्रतिक्रिया होती। वह चाहती कि जगन्नाथ का भण्डाफोड कर दे। जिस जगह वह रहता है, वहाँ के लोगो को वह बता दे कि इसने मेरा सारा जीवन नष्ट कर दिया, किन्तु फिर सोचती इससे जगन्नाथ का कुछ नही बिगडेगा; बदनामी तो उसकी ही होगी। वही किसी को मुँह दिखलाने लायक नही रहेगी। इधर जगन्नाथ का रुख भी बदल गया। जितने स्नेह से वह तारा को चाहता था वह सब धीरे-धीरे कम हो गया और उसे स्वय तारा से डर लगने लगा। दोनो एक-दूसरे से बिना बोले रात को पडे सोया करते। दोनो एक-दूसरे को न चाहते हुए भी विवश इकट्ठे रह रहे थे, जैसे किसी ने उन्हे बाँध दिया हो।

जगन्नाथ रह-रहकर हीरादेई की बात सोचता, अपने बच्चो की बाते याद करता। दिन में तारा रूखा-सूखा बनाकर जगन्नाथ के सामने रख देती; वह खाकर बाहर निकल जाता। न जाने कहाँ-कहाँ मारा-मारा फिरता। तारा पडी रहती और सोचा करती। उसका मुख म्लान और हृदय जैसे शून्य हो गया हो। दिन-दिन उसे भारी हो रहे थे। निरुपाय उसी समय एक दिन तारा रात के समय शेफाली के पास गई। कुछ दिनो बाद क्लिनिक से लौटने पर उसे ज्ञात हुआ कि जगन्नाथ को पुलिस पकड ले गई। तारा अब निश्चिन्त थी। शेफाली की बताई हुई एक लेडी डाक्टर द्वारा उसका गर्भ गिराया जा चुका था। एक दिन उस मकान के लोगो ने देखा कि तारा सामान बाँधकर कही जा रही है।

मकान मालकिन ने, जो उस समय अपने बाग मे टहल रही थी, पूछा, "क्या कही जा रही हो ?"

"हाँ, जाना ही होगा।"

"अपने पति को छुडाओ, शायद वे छूट जायँ।"

"वे मेरे पति नही है।"

जैसे उसके ऊपर वज्र गिर पडा। "क्या वह तुम्हारा पति नही है ?"

"नही, हम दोनो साथ रहते थे।"

"अच्छा, बिलकुल नई बात है ?"

"हाँ, वह मेरा पति नही है। अच्छा चलूँ, गाडी को देर हो रही है।" इतना कह सामान ताँगे मे रखकर तारा चली गई। स्वामिनी बडी देर तक तारा की ओर देखती रही और फिर घूमने लगी। जैसे कुछ हुआ ही न हो। फिर भी उसे लगा जैसे जीवन वही नही है जो बीत रहा है। वह भी है जिसकी कल्पना भी नही की जा सकती।

उसके बाद किसी ने भी तारा दिल्ली मे नही देखी। वह बम्बई चली गई। बम्बई पहुँचकर तारा ने कुछ दिन तो परिस्थिति के अध्ययन मे बिताये, फिर अपने पुराने काम मे लग गई। उसके जीवन मे

एक ही लगन थी—अपने विचारो का प्रचार, अपने उद्देश्य की सिद्धि। वह दिन-भर मजदूरो की बस्ती मे काम करती, उन्हे अपने उद्देश्य समझाती। सच्चे मनुष्य बनने का, आर्थिक शोषण से मुक्त होने के लिए हर तरह के त्याग का, कठिनाइयो के सहन का मार्ग बताती। भूखी, प्यासी रहने पर भी बिजली की तरह तेज, फौलाद की तरह मजबूर उस लडकी को देखकर पार्टी के अवसरवादी लडको और लडकियो मे भी प्राण सचार-सा होने लगा।

थोडे दिनो बाद उसे पार्टी के हिन्दी-पत्र मे काम करने का भार दिया गया। उसमे भी उसने जैसे जान फूँक दी। उसके लेखो को पढ-कर विरोधी भी उसकी दलीलो का लोहा मान जाते। सामग्री के चयन और पत्र के 'डिस्प्ले' से भी उसके प्रचार मे सहायता मिली और तारा सबकी 'नयन-तारा' हो उठी। उसे कार्य-समिति मे ले लिया गया। मधुकर ने देखा तो वह भी उसका भक्त बन गया, उसकी लगन का, काम करने की क्षमता का लोहा मान गया। जिस लडकी को वह कुछ दिन पहले 'फैशनेबल कम्यूनिस्ट' मानता था, उसी ने अवसर मिलने पर जो अपने जौहर दिखाये उससे मधुकर जैसे उग्र लगन के व्यक्ति को भी उसकी कर्तृत्व शक्ति का चमत्कार स्वीकर करना पडा। और एक दिन मधुकर और तारा को नये ढग की ट्रेनिग के लिए यूरोप की यात्रा के बहाने रूस भेज दिया गया।

"आज तो मै वहुत थक गई हूँ शुभदा!" इसके साथ ही उसे मूर्छा आ गई।

शुभदा ने देखा तो घबरा गई। उसने हीरादेई को पुकारा, दोनो ने सेवा की। शेफाली का चेहरा बिलकुल पीला पड गया था। थोडी देर बाद वह ठीक हो गई।

शुभदा की परीक्षा समाप्त होते-होते शेफाली का स्वास्थ्य और भी गिर गया। उसके सयमी जीवन का ढाँचा आत्मिक प्रतिरोध होने पर भी बिखरने-सा लगा। देखते-ही-देखते उसके शरीर की निर्बलता बढने लगी। मुख की कान्ति मलिन हो गई। उठने-बैठने मे भी उसे थकावट महसूस होने लगी। शुभदा परीक्षा मे व्यस्त होते हुए भी बहन का ध्यान रखने लगी। उसने आग्रह करके मरीजो को देखना बन्द करा दिया और परीक्षा से निवृत्त होने पर एक अच्छे डाक्टर को बुला लाई। उसने कुछ औषधि दी और साथ ही एकदम पहाड जाने का परामर्श दिया।

शेफाली ने कहा, "किन्तु मुझे तो एक-मात्र रोगियो को देखने में ही सुख मिलता है। जिस दिन मेरा सेवा-व्रत टूट जायेगा · "

डाक्टर ने कहा, "आप पहले अपना शरीर ठीक कर लीजिए, सेवा पीछे होती रहेगी। कम्प्लीट रेस्ट !"

"नही तो क्या ··?"

"अभी तो नही, पर उसकी सम्भावना दूर नही है।"

शेफाली चुप हो रही। डाक्टर चला गया। जाते हुए उसने शुभदा से एकान्त में कहा, "इनका जीवन न केवल लोगो के लिए ही बहुमूल्य है बल्कि हमारे लिए भी इनका स्वस्थ रहना जरूरी है। यदि आवश्यकता हो तो मै स्वयं मसूरी की एक कोठी खाली करा सकता हूँ। आप वही जाकर रहिए। चौकीदार है। किसी प्रकार की असुविधा न होगी। कल ही इनको लेकर चली जाइए।" डाक्टर चला गया।

शेफाली की बीमारी की खबर लोगों में बिजली की तरह फैल गई। राममोहन, साधना तथा अन्य कई लोग देखने आये। प्राणनाथ भी आया। उसने एक नौकर के साथ स्वय मसूरी तक पहुँचा आने का निश्चय किया। साधना ने जब शेफाली को देखा तो वह एकदम रोकर शेफाली से चिपट गई। शेफाली की इच्छा थी कि प्राणनाथ भी साथ चले। उसके साथ उसे दो लाभ थे, एक तो यह कि वह सब विषयों

पर बहुत प्रभावपूर्ण ढग से बोल मन बहला सकता था, दूसरे अब उसे हर प्रकार का सहारा प्राणनाथ ही था। प्राणनाथ को भी यह मालूम था कि शेफाली का उसके प्रति एक निश्चित दृष्टिकोण है। यही बात चलते समय उसने प्रकारान्तर से कही। शुभदा पहले ही जानती थी कि बहन को प्राणनाथ के प्रति मोह है। उसने प्राणनाथ को बुला भेजा और उसके आते ही बोली—

"प्राणनाथ बाबू, आपके कोर्ट कब से बन्द हो रहे है ?"

"अभी तो नही, परन्तु जल्दी ही होने वाले है। क्या ही अच्छा होता कि मै डाक्टर शेफाली की सेवार्थ चलता।

"तो चलिए न !"

"क्या तुम्हारा ही यह विचार है ?"

"बहन को कोई आपत्ति न होगी। और हो भी तो मै उन्हे समझा लूँगी।"

प्राणनाथ का मन खुशी के मारे बल्लियो उछलने लगा। वह संकोच के मारे कह नही सका था। और कहता भी क्या ? उसने निश्चय कर लिया। न होगा वह कुछ दिनो की छुट्टी ले लेगा। यही सोचकर उसने कहा, "शुभदा, मै तैयार हूँ। परन्तु "

"मै आपसे कहती हूँ कि बहन को कोई आपत्ति न होगी।"

"अच्छा !"

इसी समय शेफाली ने कमरे मे प्रवेश किया। प्राणनाथ को बैठा देखकर बोली, "लो प्राणनाथ बाबू, मै कल मसूरी जा रही हूँ। आप भी तो कुछ दुबले दिखाई देते है।"

"बहन, मै इनसे कह रही हूँ कि ये भी हमारे साथ चले। ठीक रहेगा।"

शेफाली कुछ देर चुप रहकर बोली, "क्या हर्ज है ! चलिए न ! हाँ, यदि काम मे कोई रुकावट हो तो···"

"मै तैयार होता हूँ।"

प्राणनाथ चला गया। अब दो के बजाय तीन की तैयारी हुई। दिन-भर आवश्यक सामान जुटाने में लगा। शेफाली भी प्रसन्न थी।

इसी समय शाम को प्राणनाथ आकर बोला, "मै नही जा सकूँगा।"

"क्यो ?"

"मुझे बनारस एक केस में जाना है। एक क्रान्तिकारी पर सरकार मुकदमा चला रही है। उसे कोई वकील नही मिल रहा है। मैने निश्चय किया है मै बिना पैसा लिये उसकी तरफ से लड़ूँगा।"

"सरकार तुम्हे भी जेल मे डाल देगी," शुभदा ने भेद लेने के लिए कहा।

"कोई परवाह नही।"

"मेरा विचार है मसूरी जाने की अपेक्षा यह बडा काम है।"

"अरे, तो और कोई वकील यह काम कर लेगा," शुभदा फिर बोली, "चलिए न।"

प्राणनाथ ने दृढता से कहा, "नही शुभदा, मै उसके बाद आऊँगा; मेरा कर्तव्य मुझे बुला रहा है।"

"कर्तव्य ? वकील का भी कोई कर्तव्य होता है ?" शुभदा ने फिर व्यग्य किया।

"यही कर्तव्य है शुभदा, अन्याय की चक्की में पिसते लोगो को बचाना। मै नही जा सकता।"

शेफाली ने सुना तो प्रसन्न हुई। उसे आज पहली बार प्राणनाथ का यह रूप दिखाई पडा। उसने शुभदा से कहा, "प्राणनाथ सचमुच महान् है। वह मनुष्य ही क्या जो अपनी शक्ति-भर किसी की सहायता न कर सके ?"

शेफाली को यथासमय मसूरी पहुँचाया गया। उसके रहने के लिये सेवॉय होटल के पास एक बँगले में व्यवस्था की गई। साधना भी साथ ही रही। डाक्टर ने अपने एक डाक्टर मित्र को भी सूचना दे दी कि वह शेफाली को प्रतिदिन एक बार देख लिया करे। डाक्टर चौधरी के पास

जब यह समाचार पहुँचा तो वह शेफाली के पहुँचते ही उसी दिन उसे देख गया। डाक्टर ने सब प्रकार की व्यवस्था कर दी। शेफाली यथा-नियम शुभदा और साधना के साथ प्रातः सायकाल घूमने जाती। बाकी समय आराम करती, कुछ पढती या आमोद-प्रमोद के लिए कभी शुभदा उसे सिनेमा दिखाने ले जाती।

डाक्टर अविनाशचन्द्र दास चौधरी बगाली थे। वे अपनी विधवा बहन के साथ मसूरी मे प्रेक्टिस करते थे। धार्मिक प्रवृत्ति के इस डाक्टर की बातचीत से शेफाली बडी प्रभावित हुई। वह जितने अच्छे ढग से अपने पेशे की गहराई तक उतरता था उतना ही वह भारतीय संस्कृति, धर्म पर भी व्याख्यान दे सकता था। उस दिन जब वह दोपहर को छडी हिलाता शेफाली के बँगले पर पहुँचा तो वह बाहर धूप में बैठी तिलक का गीता-भाष्य पढ रही थी। यह देखते ही बोला—"ओह, तिलक का गीता एकदम अवास्तविक है। यह 'मिसइण्टरप्रेटेशन' देता है।"

"किन्तु यह गीता-भाष्य प्रवृत्तिपरक है न? यह सन्यासी नही बनाता, क्रियाशील उत्साही बनाता है डाक्टर, आइए बैठिए।"

डाक्टर ने एक कुर्सी पर बैठते हुए कहा, "नही नही, शेफालीजी, मै निवृत्ति को ही वास्तविक प्रवृत्ति मानता हूँ। 'सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेक शरण व्रज,' यही वास्तविक निवृत्ति है। निराकार ब्रह्म की उपासना कठिन है, अतएव साधक को सृष्टि में प्राप्त प्रेम-रूप ब्रह्म की उपासना का निर्देश गीता करती है। उसे सदा स्मरण करते हुए सब कार्य कर्मों में प्रवृत्त होना चाहिए। उन सब कर्मों को उसकी उपासना के रूप में समर्पित करते रहना चाहिए। यही प्रवृत्ति है।"

"पर लोकमान्य भी तो यही कहते हैं।"

"नही नहीं, वह ऐसा कहाँ कहते है। लोकमान्य तो एकदम प्रवृत्ति में ही गीता समाप्त कर देते है," डाक्टर ने बात पर अडते हुए कहा।

शेफाली ने नम्रता से अपनी बात पेश करते हुए कहा, "क्षमा कीजिए डाक्टर, सारा ससार प्रवृत्तिमूलक है। यदि हम कर्म करना छोड़ दे और

केवल चिन्तन करते रहे तो यह ससार कैसे चले। जिस प्रेममय ब्रह्म की बात आप करते हैं, वह भी तो सृष्टिमय ही है। यदि वही क्रिया समाप्त हो जाय तो मनुष्य अथवा दूसरी सृष्टि कहाँ रहे? आप रोगियो की सेवा करते हैं और उसके द्वारा आपको जो सुख मिलता है वह क्या है, प्रवृत्ति नही है? प्रवृत्ति सृष्टि है, निवृत्ति उसका विनाश या प्रलय। तिलक ने गीता-दर्शन को मनुष्य की निरपेक्ष क्रिया के रूप मे स्वीकार करके उस पर जोर दिया है, वह सदा ही अनासक्त कर्म पर जोर देते है, पर कर्म की हानि उनके मत मे निरा ढोग है।"

चौधरी शेफाली के तर्क पर कुछ देर रुका और फिर कहने लगा, "आप ठीक कहती हैं। किन्तु उस व्यक्ति के लिए भी क्या गीता का उपदेश नही है, जो जीवन से उपरत हो चुका है। जिसे कार्य कुछ भी नही रहा, वह तो केवल प्रभु का स्मरण मात्र करना चाहता है; उसी के द्वारा जीवन और आत्मा को जानना चाहता है।"

"वह उसका एक अग है, उसमें भी प्रवृत्ति ही काम करती है क्या आपने गीता में यह नही पढा कि कोई जीव बिना कर्म किए एक क्षण भी नही रह सकता?"

शुभदा भी वहाँ आ बैठी, किन्तु उसका मन किसी तरह भी उन बातो में नही लग रहा था। इस कारण वह बात का प्रसग बदलते हुए बोल उठी—"परन्तु भौतिकवाद में न आत्मा है, न परमात्मा; न आपका अध्यात्म है न परात्म। इसका समाधान क्या है डाक्टर?"

डा० चौधरी ने कहा, "भौतिकवाद एक दम अनार्य है।"

शेफाली ने बात का प्रसग सँभालते हुए उत्तर दिया, "मेरे खयाल में भौतिकवाद केवल व्यावहारिक जीवन को तर्क पर कसता है, आत्मा-परमात्मा का विवेचन नही करता है। भौतिकवाद का स्पष्ट रूप भूतो एव भूतो से सम्बन्ध रखने वाले तत्त्वो का विवेचन है। यद्यपि हमारे यहाँ पाँच भूत हैं, किन्तु वैज्ञानिको ने चौरानवे तत्त्व खोज निकाले है। दुनिया की वस्तुएँ इन्ही तत्त्वो से बनती है। फिर भी जब वैज्ञानिक

इन्ही तत्त्वो का विश्लेषण करता है तब वह आत्मा के सम्बन्ध मे कुछ भी नही ज्ञानता।"

डा० चौधरी ने आगे बढकर कहा, "हाँ, यह भी एक तर्क है, किन्तु मै मानता हूँ भौतिकवाद जीवन की सबसे पहली सीढी है, अन्तिम नही।"

शुभदा ने बीच मे ही कहा, "भौतिकवाद में आत्मा को न मानते हुए भी उसका काम चलता है। वह शरीर के 'केमिकल कम्बिनेशन' को ही आत्मा मानता है, प्रकृति द्वारा स्वयभूत, इसलिए ईश्वर की भी उनको जरूरत नही है।"

वाद-विवाद काफी देर तक चलता रहा। साधना को छोडकर उसमें सबने भाग लिया। डा० चौधरी को शेफाली और शुभदा के तर्को से प्रसन्नता हुई। वह जान गया कि शेफाली केवल डाक्टर ही नही उसका ज्ञान गम्भीर और अन्तरगव्यापी भी है। अन्त में वह बोला, "ठीक तर्क से सत्य और असत्य को पहचाना जाता है। पर तर्क के लिए बुद्धि-विवेक की आवश्यकता है। हमारे परमहस रामकृष्ण ने भक्ति द्वारा सत्य को जानने का मार्ग बताया है। भक्ति स्वय एक विज्ञान है। इसी से उन्होने जीवन मे कई चमत्कार देखे और जनता को दिखाए।"

शुभदा ने पूछा, "क्या चमत्कार अपने-आप में सत्य होते है, क्या वह एक भ्रान्ति नही होते ? जादूगर जो एक खेल करके लोगो को मुग्ध कर देता है, क्या वह सत्य है ?"

चौधरी ने कोई उत्तर नही दिया। वह विवेकानन्द के एक उपदेश की चर्चा करता रहा। उसने शेफाली से प्रस्ताव किया कि नीचे राजपुर आश्रम मे एक वीतराग साधु ठहरे है, उनके दर्शनो को मै जा रहा हूँ, क्या आप भी चलेगी ?"

डा० चौधरी प्रेक्टिस के लिए प्राय सुबह ही बैठता था। शेष समय मे या तो वह आत्मचिन्तन करता या फिर किसी साधु सन्यासी के पास जा बैठता। वह साधुओ के दर्शनो के लिए ऋषिकेश, देहरादून

भी चला जाता। पिछले दिनो उसने रामकृष्ण मिशन मे जाने का निश्चय कर लिया था, किन्तु अपनी बहन के कारण वह उसमें सम्मिलित न हो सका।

शेफाली, शुभदा और साधना तीनो उस दिन साधु के दर्शनो को गई। सन्यासी एक तेजस्वी युवक थे। वयस होगी लगभग पैंतीस की। भव्य आकृति, गौर वर्ण, बडी-बडी आँखे, कमर से नीचे एक अँगोछा पहने थे। बातचीत वे अंग्रेजी में ही करते थे। काफी भक्त-मण्डली से घिरे हुए थे। जब वे प्रवचन कर रहे थे तभी डा० चौधरी के साथ ये लोग भी पहुँचे। धीरे-धीरे वे अंग्रेजी मे मनुष्य-जीवन के लक्ष्य पर बोल रहे थे। प्रवचन के पश्चात् स्वामी जी उठे और बिना कुछ कहे वन की ओर चल दिये। एक आश्रमवासी ने बताया, 'ये महात्मा कभी घूमते आ जाते है। इच्छा होती है तो रात को रह जाते है नही तो कई-कई दिनो तक नही आते। न रात को कुछ ओढते है, न बिछाते है, ऐसे ही कही भी पड रहते है। हम लोगो ने इन्हे कम्बल दिये, पर यह वही छोडकर चल देते है; साथ मे कुछ नही रखते। एक बार दो दिन तक एक पेड के नीचे पडे भीगते रहे।'

दूसरे ने कहा, "सदा मुस्कराते रहते है। वीतराग है।"

"और भोजन ?"

"न जाने। कभी खाते तो देखा नही; कुछ खा लेते होगे।"

दूसरे ने कहा, "पत्ते भी खाते है।"

डा० चौधरी तथा अन्य लोग आपस में बाते करने लगे। यात्री अंग्रेजो ने उनका फोटो लिया। धीरे-धीरे सब चले गए।

चौधरी ने शेफाली से कहा, "यह निवृत्ति-मार्ग है।"

शुभदा ने पूछ लिया, "इससे क्या लाभ ? ऐसा तो एक पागल भी कर सकता है।"

साधना बोल उठी, "ऐसा न कहो शुभदा, साधु-महात्मा को ऐसा नही कहना चाहिए।"

"चाहे जो कोई भी ये हो, आखिर इनसे समाज को क्या लाभ है? यह एक प्रश्न है," शुभदा ने टोका।

चौधरी को धक्का-सा लगा। वह कुछ न बोला। देर तक चुपचाप साथ-साथ चलता रहा। वह स्वय कुछ नही समझ पा रहा था कि वह वीतरागिता किस लिए है। फिर भी उसने एक बार कहा, "वीतराग मनुष्यो के यही लक्षण है। जीवन्मुक्त है यह!"

शुभदा के ऊपर उन महात्मा का कोई प्रभाव नही पडा। शेफाली के हृदय मे अन्तर-मथन हो रहा था। साधना कुछ और न समझकर भक्ति-विभोर हो उठी और उसने मन ही मन एक बार उन महात्मा को प्रणाम किया।

रास्ते-भर महात्मा के सम्बन्ध में चर्चा होती रही। चारो व्यक्ति अलग-अलग सोच रहे थे। डा० चौधरी उनको पहुँचा हुआ आत्मज्ञानी मानते थे। वह जोर देकर कह रहे थे, "महात्मा जीवन्मुक्त हैं। हमारे यहाँ ऐसे महात्माओ की परम्परा है। जड भरत, विदेह, बुद्ध, महावीर, परमहस रामकृष्ण इसी श्रेणी के महात्मा थे। आत्मलीनता में रहने के कारण बाह्य जीवन से यह मुक्त है।"

साधना भी कुछ-कुछ इसी मत की थी। उनकी विवेचना इतनी दूर तक नही पहुँची थी। वह केवल उनके रूप से ही उन्हे महात्मा मानती थी।

शेफाली उन्हे महात्मा तो मानती थी, पर उनके इस रूप में उसे पूरा विश्वास नही हो रहा था। वह कह रही थी, "यदि इसका चरम लक्ष्य आत्मा का साक्षात्कार है तो उससे समाज का भी कुछ लाभ होना चाहिए, क्योकि प्रत्येक व्यक्ति समाज का एक अग है। समाज का हित तो किसी न किसी रूप में उसके द्वारा होना ही चाहिए। इसके अभाव मे व्यक्ति का अस्तित्व श्रेयस्कर नही कहा जा सकता। हमको तो उनसे कोई लाभ नही हुआ। फिर यह परम तप क्या महत्त्व रखता है? इसलिए शुभदा की बात भी कुछ अश तक ठीक हो सकती है कि ये

महात्मा आत्म-विक्षिप्त हैं या योगभ्रष्ट है !"

शुभदा एकदम भौतिकवादिनी थी। वह न आत्मा मे विश्वास करती थी न व्यक्ति के इस रूप मे। वह मानती थी कि यह जीवन का अपलाप है, जिसका रूप इस व्यक्ति में देखने को मिला है। क्या वह कहे कि यह व्यक्ति एकदम 'एबनार्मल' है। और 'एबनार्मेलिटी' का दूसरा नाम पागलपन है।

बहुत-कुछ वाद-विवाद के बाद भी चारो व्यक्ति एकमत नही हो सके। शेफाली इसका वैज्ञानिक विश्लेषण चाहती थी। उसने साधु-महात्मा को बडे ध्यान से देखा। उनकी प्रत्येक चेष्टा को वह ध्यान से देखती रही। उनकी बातो में भी उसे लगा, जैसे उनकी बातो में कोई क्रम नही है, कोई नई बात नही है। वही रटे-रटाए शब्द है, जिन्हे वे बार-बार दुहराते रहे है। यही सब सोचकर उसने डाक्टर चौधरी से कहा, "हो सकता है आपकी बात ठीक हो, किन्तु क्या आपके दर्शन मे साधु के प्रति एक गहरी श्रद्धा नही है ? मेरा मानना है कि सत्य की पहचान में श्रद्धा एक भ्रम पैदा करती है।"

डा० चौधरी ने माना कि श्रद्धा के बिना मनुष्य की दृष्टि अपूर्ण है। उनकी इस बात पर शुभदा खिलखिलाकर हँस पडी। चौधरी को शुभदा का यह हँसना बुरा लगा, पर वह चुप रहे।

उस दिन कार में आने-जाने पर भी शेफाली थक गई थी। रात-भर नींद नही आई। वह उन महात्मा तथा उनके सम्बन्ध मे पडी सोचती रही। प्रात काल ही जब शेफाली का समाचार देने शुभदा डा० चौधरी के घर पहुँची तो डाक्टर बोल उठा—"नीद नही आई होगी। ठहरिए मै चलता हूँ। मै भी रात को यही सोचता रहा और इसी परिणाम पर पहुँचा हूँ कि जीवनमुक्त की यही स्थिति होती है। परमहस भी कभी-कभी इसी प्रकार हो जाते थे। ऐसे लोग भूत-भविष्यत् सभी जानते हैं शुभदा देवी !"

शुभदा ने कुछ भी उत्तर नही दिया। चुपचाप चौधरी की बातें

सुनती रही। उनकी बहन पूजा मे बैठी थी—शुद्ध बगाली वेश में। शुभदा को यह सब अच्छा लगा। वह बगला मे बोली, "चौधरी बाबू, विवाह क्यो नही कर लेते ?"

चौधरी जोर से ठठाकर हँस पडा और बंगला मे उत्तर देते हुए बोला, "शुभदा देवी, यह प्रश्न तो तुम अपने से भी कर सकती हो !"

"किन्तु आप तो समर्थ है न ?"

"तो अब क्या हमको समर्थ की परिभाषा करनी होगी। तुम तो साक्षात् शक्ति हो। तुम्ही उत्तर दो।"

इसी समय डाक्टर चौधरी की बहन वहाँ आ गई—हाथ में अर्घ्य-पात्र लेकर। उसने सूर्य को जल चढाया और हाथ जोडकर प्रणाम किया इसके पश्चात् पल्ला फैलाकर प्रार्थना के स्वर मे कुछ बोलती रही। डा० चौधरी हडबडाते अपना सामान ढूँढते रहे। उन्होने धोती खोजी तो कोट नही मिला। फिर गोलूबन्द के लिए इधर-उधर घूमते रहे। उन्हे लपड-झपड घूमते देखकर बहन ने पूछा, "अरे, कोट क्या ?"

"नही, गोलूबन्द बाबा, गोलूबन्द ! न जाने कहाँ रख दिया ! इतने परिश्रम से तो ईश्वर भी मिल जाता।"

"देखो उधर खाट पर रखा होगा। रात को कहाँ उतारा था ?"

"सो ही तो देख रहा हूँ दीदी !"

'शुभदा' नाम सुनकर पीयूषदासी उसकी तरफ अतृप्त नेत्रो से निहारने लगी। "तुम भी बगाली हो ?"

"हाँ !"

बाहर से नौकर आ गया। उसने डाक्टर का सामान ढूँढकर दिया, चाय लाया। दोनो चाय पीकर चल दिए।

शेफाली उस समय तक सो रही थी। दोनो बाग मे टहलने लगे। डा० चौधरी बोले—

"तर्क कभी पूर्ण नही होता शुभदा, वह केवल बुद्धि का चमत्कार है।"

"किन्तु सभी वस्तुएँ तर्क से जानी जाती है। यही सत्य के पहचानने की कसौटी है।"

"किन्तु ईश्वर के सम्बन्ध मे अपूर्ण है।"

"मै ईश्वर को नही मानती, डाक्टर !"

"तो क्या मानती हो ? छि: !"

"वह, जो है।"

"यह भी सिद्ध करना होगा कि क्या है और क्या नही। जैसे मनुष्य के भीतर आत्मा है वैसे ही वह भी है।"

"मै आत्मा में विश्वास नही करती डाक्टर !"

"जिस वस्तु को सिद्ध करने की आवश्यकता नही यदि ऐसी कोई वस्तु है तो आत्मा ही है। मेरा अस्तित्व नही है ऐसा कौन स्वीकार करता है ? 'अहं नास्मि' क्या ऐसा भी कोई कहता है, शुभदा देवी ?"

शुभदा का मन चौधरी की बातो मे नही लग रहा था। वह तन्मय होकर पर्वत की छवि का निरीक्षण कर रही थी। बीच-बीच में अन्य-मनस्क भाव से वह चौधरी को उत्तर भी देती जाती थी। उसे परम आस्तिक चौधरी को चिढाने मे कुछ आनन्द भी मिलता था। अतः वह उसे उत्तेजित करने के लिए बीच-बीच में कुछ बोल देती थी।

जब डा० चौधरी भन्नाकर तर्क पर तर्क करने लगा तो शुभदा उसकी तरफ देखकर बोली, "आप इस प्रकृति-सौन्दर्य को देखिए चौधरी बाबू ! क्या यह हमारी आत्मा और उस काल्पनिक ईश्वर से महान् नही है। कितना सुन्दर है यह सब-कुछ ! जैसे जीवन का रस कण-कण मे बरस रहा है। शत-शत निर्मूल आस्थाएँ, भ्रान्त धारणाएँ इस पर न्यौछावर की जा सकती है। इस विशाल और असीम आकाश में धरती के चरणो को चूमने वाले इन पर्वत-शिखरो के मस्तक पर कितना गर्व फूल-फूल रहा है।"

"मै यही कहता हूँ, यह उस कुशल चित्रकार के चित्र है," चौधरी बोले।

शुभदा ने कहा, "इस परम विपत्ति ने मुझे नास्तिक बना दिया है, डाक्टर ! मुझे लगता है यह सबसे बडा भ्रम है जीवन का। इससे मुक्ति ही परम पुरुषार्थ है।"

इसी समय शेफाली आती दिखाई दी। डाक्टर ने आगे बढकर शेफाली का स्वागत किया और बोला, "देखता हूँ रात मे आपको नीद नही आई।"

"हाँ, न जाने थकावट से ऐसा हुआ है। परन्तु अब ठीक हूँ।"

नौकर से बाहर दो-तीन कुर्सियाँ डलवाकर शेफाली धूप मे बैठ गई। डाक्टर ने अच्छी तरह परीक्षा करके देखा और दवा की व्यवस्था के लिए नौकर को दौडाया। स्वय एक और रोगी को देखने की बात कहकर चला गया।

शेफाली धूप में बैठी ही थी कि आकाश मे बादल घिर आए, मौसम मे घनापन छा गया, सरदी बढने लगी और थोडी देर में वर्षा होने लगी। शुभदा ने स्वय कुर्सिया उठाकर भीतर रख दी। शेफाली को कमरे मे ले जाकर काउच पर लिटा दिया। वह कम्बल ओढकर अधलेटी ही सोचने लगी। शुभदा ने हीटर लगा दिया और कमरा गरम हो गया।

इन दिनो शेफाली अपेक्षाकृत अधिक सोचने लगी थी। उसे कभी-कभी लगता कि यदि कुछ हो जाता तो क्या होता ? मृत्यु भी हो सकती थी। क्या इस सबसे पहले यह अच्छा न होता कि शुभदा शादी कर ले। इस बसाक-कन्या से कौन शादी करेगा ? परन्तु यह किससे कम है ? कौन बात नही है इसमे ? विद्या, बुद्धि, सौन्दर्य, शिष्टता किसमें कम है यह ? शुभदा, लगता है, जैसे मेरी ही आत्मा हो, मेरा ही स्वर हो, मेरा ही प्राण हो। नही, यह नही हो सकता ! यह चौधरी, क्या यह इसे स्वीकार करेगा ? परन्तु प्रश्न यह है, क्या शुभदा इसे स्वीकार करेगी ! चौधरी कट्टर है। शुभदा एकदम सरिज्जल की तरह स्वच्छ। मेरी शुभदा ! वह पडी यही सब सोचती रही।

इधर बीमारी की अवस्था में साधना उसके साथ जब से आई है तब से उसने शेफाली के प्रति एक प्रकार का आत्मदान कर दिया है। उसकी बीमारी मे घर का सारा खर्च उसने अपने ऊपर ले लिया है। वह उसकी सेवा भी बडी तत्परता से कर रही है। राममोहन ने उसे लिख दिया है कि शेफाली को स्वस्थ करना उसका प्रथम काम होना चाहिए। स्वय साधना भी शेफाली के प्रति कम अनुरक्त नही है। वह उसे अपनी एकमात्र बडी बहन मानती है। शेफाली हृदय में सब कुछ जानती हुई भी मौन है। जब कभी उसे अपनी शादी के दिन याद आते तो उसके हृदय में असन्तोष की प्रचण्ड आग सुगल उठती। उसे लगता यह सब उसके भाग्य का दोष है, किन्तु वह उस आग को दबा लेती। उसकी चिनगारी कभी नही उभरती थी।

इधर मसूरी की यात्रा का सारा खर्च करने के प्रश्न पर जब साधना और राममोहन ने विनय और प्रेमपूर्ण भर्त्सना के स्वर में शेफाली को चेतावनी दी तो उसने विरोध किया। शुभदा ने शेफाली का साथ देते हुए कह डाला, "हम लोग अपाहिज नही है साधना बहन!"

साधना ने उस समय आँखो में आँसू भर लिये और चुप होकर शेफाली की तरफ देखने लगी। शेफाली ने भीतर ही भीतर एक तृप्ति की साँस लेकर साधना को व्यय-भार सँभालने की अनुमति दे दी। शुभदा को आश्चर्य और क्षोभ हुआ, किन्तु वह चुप हो गई। इसके बाद वैसा प्रसग ही नही उठा। साधना को अपने साथ पाकर जैसे शेफाली का हृदय फूल-फूल उठता था। रात के समय साधना और शुभदा दोनो जब उसके सिर और पाँव सहलाती तो शेफाली को लगता जैसे उसकी बिना गृहस्थी के भी गृहस्थी बस गई है।

यही सब सोचती हुई शेफाली ने एक प्रातःकाल शुभदा से कहा, "डा० चौधरी अच्छा आदमी लगता है शुभदा!"

शुभदा शेफाली का हाथ अपने हाथ में लेकर उसे धीरे-धीरे सहला रही थी। थोडी देर चुप रहकर बोली, "हाँ, बुरा नही है।"

शेफाली फिर कुछ देर चुप रहकर बोली, "इसका मतलब है अच्छा नही है, यन साधारण है। एक बात पूछूँ ?"

शुभदा हाथ सहलाना रोककर उसकी ओर देखने लगी।

"मै चाहती हूँ तू ब्याह कर ले," शेफाली ने जरा सहमे हुए ढग से कहा, जैसे वह शुभदा को कोई चोट पहुँचाने जा रही हो या उसके छिपे भाव को व्यक्त कराने की चेष्टा से उसने यह कहा हो।

शुभदा चुप रही। शेफाली ने फिर जरा उसके कन्धे पर हाथ रखा और बोली, "आखिर यह भी एक दिन करना होगा। मै चाहती हूँ, डाक्टर चौधरी बुरा नही है। वैसे भी तुम बगाली लोग देखने-सुनने मे और शिष्टाचार में किसी से पीछे नही हो। यदि तू चाहे तो मै···क्या कहती है ?"

शुभदा ने कुछ भी उत्तर न देकर जैसे सोचना शुरू कर दिया हो। "बगाली बडी भावुक जाति है जीजी, इसी ने इसका नाश भी कर दिया है।"

"कैसे ? यह तू कैसे कह सकती है ? वह तो वीर और सभ्य है पगली !"

"नही, ऐसा होता तो वह अग्रेजो द्वारा प्रचलित देश में अकाल-भूख के ताण्डव पर आत्म-समर्पण न कर देती। मुझे लगता है क्यो उस समय प्रत्येक बगाली युवक-युवती ने भीख माँगकर चावल के एक-एक दाने के लिए हाथ पसारने की अपेक्षा तत्कालीन पूँजीपतियो और अधिकारियो की हत्या नही कर दी ? और क्यो नही महाभारत के बाद यादवो की तरह उन्होने एक-दूसरे का नाश कर दिया ? दुर्भिक्ष, भूख का जैसा भयकर रूप इस बगाली जाति ने देखा है और जिस तरह से उसने उसका मुकाबला न करके नि.सहाय दीनता दिखाई उससे लगता है हमने बगाल के सौन्दर्य, उसकी कला, उसकी परम्परा के नीचे कायरता का पोषण कर रखा था। माँ काली के सामने प्रत्यह वीरता-पूर्वक बलिदान की प्रतिज्ञा करने वाली इस जाति ने अपनी पुकार को

मन्दिर के घण्टो तक ही सीमित रखा। हमने जोर से बोलने की अपेक्षा कृतित्व या अवसर का कभी महत्त्व नही जाना। अन्यथा, क्या हम मरणान्त कष्ट में भी साहस छोडते ?···"

वह जोश में आकर और भी बोलने जा रही थी कि शेफाली ने बीच मे ही टोककर कहा, "रहने दे, वह इतना बडा नाश था कि उसमें एक व्यक्ति के किये कुछ भी नही हो सकता था। फिर भी मै मानती हूँ कि फुटपाथों पर मुर्दों की तरह पडे जन-समूह को चैतन्य देने वाला कोई भी महान् पुरुष ऐसा न था, जो समय के अनुसार पग बढाता। बकिम, शरद्, रवीन्द्र का बगाल दु ख की एक चोट भी न सह सका। पर इसमें तेरा या किसी का क्या दोष है ?"

"दोष तो मेरा ही है जीजी। मेरे बगाल का दोष है। आज प्रत्येक जीवित बंगाली का दोष है जो उस अपलाप, लाछना, प्रताडना, भीरुता को कन्धे पर ढोता हुआ आज भी जी रहा है। किसी भी बगाली को देखकर मुझे सबसे पहले यही खयाल आता है। डा० चौधरी आत्मा-परमात्मा की बाते करते है, पर अपने देश की दुरवस्था पर उनका कभी ध्यान नही गया। यही सब सोचकर मै आज घोर नास्तिक हो गई हूँ। मुझे चौधरी जैसे आदमियो से घृणा है।"

"अरी, आज तो सारा देश ही विपन्न है फिर हम केवल बगाल की ही बात क्यो सोचे ?"

"हाँ, बंगाल तो इस महान् देश का एक अग है। मै भी आज अपने को किसी विशेष अंग से बँधा हुआ नही मानती।"

"फिर क्या मै यह समझ लू कि तू···चौधरी से······!"

"नही, मै विवाह नही करूँगी।" शुभदा ने जोर देकर कहा, "और चौधरी जैसे व्यक्ति से तो कभी नही !"

"फिर क्या करोगी।"

"पढूँगी !"

"ठीक है।" शेफाली चुप हो गई। शुभदा ने नौकर की लाई हुई

दवा दी। साधना भी इस समय तक घूमकर आ गई थी। उस दिन शेफाली तबियत खराब होने के कारण जल्दी न उठ सकी। शुभदा भी नही गई थी। आते ही साधना ने दवा की शीशी देखी। थर्मामीटर लगाने जा रही थी कि शेफाली बोली, "डा० चौधरी अभी देखकर गए है। शुभदा बुला लाई थी।"

"हाँ, मै भी उसी तरफ से आ रही हूँ। वे घर पर नही मिले। शायद इसीलिए शुभदा मेरे साथ सबेरे घूमने नही गई थी।"

"मुझे सबेरे घूमने का कोई खास शौक नही है, साधना बहन, मै तो वैसे ही तुम्हारे साथ चली जाती हूँ।"

"मै जानती हूँ, पर पहाड़ पर यदि घूमा-फिरा न जाय तो आने का क्या फायदा? लेकिन आज तो तुम्हे चलना ही होगा। कुछ सामान भी खरीदना है। मुझसे तो बाजार से चीजे खरीदने मे तुम्ही होशियार हो।"

शेफाली ने आज्ञा के स्वर मे कहा, "तो दोपहर को चलेगे। मै भी चलूँगी। अब तबियत ठीक है।"

खाना खाकर दोपहर को तीनो बाजार चली गई। साधना और शुभदा ने सामान खरीदा। शेफाली डा० चौधरी का घर पास आया जानकर उनके घर चली गई। उस समय डा० चौधरी सो रहे थे। उनकी बहन बरामदे मे बैठी चण्डीदास की रामायण पढ रही थी। अधेड उम्र की होने पर भी चौधरी की बहन बुरी नही थी। काली किनारे की सफेद धोती पहने चश्मा लगाए वह पुस्तक पढ रही थी। शेफाली को घर में घुसते देखकर बोली, "डाक्टर इस समय सो रहा है। शाम को आना।"

शेफाली थोडी देर के लिए चौकी फिर बोली, "मेरा नाम डा० शेफाली है। वैसे ही आपसे मिलने चली आई। देखा नही था। सोचा मिल लूँ आपसे।"

उसने चश्मे में से आँखो को ऊँचा करके देखा और उन्हे उतारते हुए बोली, "ओह, आप है शेफाली! शुभदा की बोन! आइये बैठिए!"

इतना कहकर वह उठी। कुर्सी खीचकर लाने लगी। शेफाली स्वय उसके पास चटाई पर बैठ गई।

"ओ रे अविनाश, देख डाक्टर शेफाली !"

चौधरी सोते ही सोते बोला, "दीदी, शेफाली बगाली नही है। मै आया।"

"हमको क्या मालूम बाबा, कौन कौन है ? आप बगाली नही हैं?"

"मै दिल्ली रहती हूँ।"

"दिल्ली में हमारे कई बगाली-परिवार है।"

"मै युक्त-प्रान्त की रहने वाली हूँ।"

"अच्छा अच्छा, ठीक, यह शुभदा ?"

"यह मेरी बहन है।"

"शोगी नई !"

"नही, सगी से भी बडी।"

चौधरी कुरता-धोती पहने मुँह पर हाथ फेरते आ गया। उसने शेफाली को हाथ जोडे।

"ठीक है न तबियत ?"

"हाँ !"

"हमारा बडा भाग्य है। फिर बगला मे बहन से कहा, "शेफाली बहुत प्रसिद्ध डाक्टर है दिल्ली की।"

पीयूषदासी ने सिर हिलाया और हाथ जोडे। फिर बोली, "इस डाक्टर चौधरी को समझाइए कि शादी कर ले। यह शादी नई करता। आपका विवाह !"

शेफाली चुप रही। इसी समय चौधरी ने नौकर को पुकारा और दो कप चाय बनाने की आज्ञा दी। फिर बोला, "आइए बैठक में बैठा जाय !"

"यही दीदी के पास ठीक हूँ। घर में इस प्रकार बैठना अच्छा लगता है।"

डा० चौधरी भी वही एक ओर चटाई पर बैठ गया। सरदी उस दिन कुछ अधिक थी। पीयूषदासी अँगीठी उठा लाई। वह शेफाली से प्रभावित हुई। फिर बोली, "हाँ, तो तुम्हारा विवाह नही हुआ ?"

डा० चौधरी ने टोकते हुए कहा, "सभ्य समाज में ऐसा प्रश्न नही किया जाता दीदी !"

पीयूषदासी ने बात को बदलते हुए कहा, "पर तुमको तो ब्याह करना ही चाहिए। मुझको छुट्टी दो, मैं ऋषिकेश जाऊँ।"

डा० चौधरी ने बहन की बात का जवाब न देकर शेफाली से कहा, "देखता हूँ आपका स्वास्थ्य ठीक हो रहा है।"

"मुझे भी लगता है। सोचती हूँ अगले सप्ताह दिल्ली लौट जाऊँ।"

"नही, अभी नही, एक मास और। अभी नीचे काफी गरमी है। अब आप खूब खाइए, घूमिए और औषधि लेती रहिए। वे दोनो क्या हुई ?"

"वे बाजार में सामान खरीदने लगी थी। मैने सोचा आपके घर दीदी के दर्शन कर आऊँ।"

पीयूषदासी बोली, "इस डाक्टर को अवकाश नही होता। मै कही भी बाहर नही जा पाती।"

चौधरी ने कहा, "तुमको पूजा-पाठ से फुरसत ही नही है। और जाओ भी कहाँ दीदी ?"

इसी समय किसी ने बाहर से डाक्टर को पुकारा। वह उठकर बाहर गया। पीयूषदासी अवसर पाकर बोली, "अविनाश शुभदा की बहुत प्रोशसा करता। बगालिन है न वह ?"

"हाँ !"

"आपके पास वह कैसे रहती है ? सुना है बी० ए० पास है।"

"इस साल उसने बी० ए० की परीक्षा दी है। हम दोनो बहुत दिनों से साथ रहती है।"

"क्या शुभदा हमारे भाई से विवाह नही कर सकती ? यह उसको

चाहता है। उसका बोर्नन करता है।"

"शुभदा स्वतन्त्र है दीदी, मै क्या कहूँ !"

"नही नही, हम लोग बिना जाति के विवाह कर लेंगे। बगालिन होना चाहिए। वह कौन जाति है ? आप प्रयत्न कीजिए !"

शेफाली पीयूषदासी की निर्भीक बात सुनती रही। उसने डाक्टर की आमदनी, उसका चरित्र, अपने कुल आदि के सम्बन्ध मे बहुत-कुछ कह डाला।

शेफाली सब-कुछ सुनती रही। वह जानती थी कि साधारणतया ऐसे परिवार की स्त्रियाँ यथार्थ बात करने मे कैसी होती है। उन्हे यह भी ज्ञान नही होता कि एकदम अपरिचित व्यक्ति से ऐसी बाते नहीं करनी चाहिएँ। उसने इसका बुरा नही माना, बल्कि और स्नेह से बाते करने लगी जैसे वह अपने ही परिवार में बैठी हो, जहाँ स्त्रियो को विवाह के अतिरिक्त और कोई बात नही आती।

शेफाली ने उसकी बाते सुनकर कहा, "चेष्टा करूँगी। मै स्वय चाहती हूँ कि शुभदा का विवाह हो जाय।"

"हाँ हा, अवश्य बात करना। ऐसा वर उसे नही मिलेगा। मेरा भाई बडा गौ है। पढ़ा-लिखा डाक्टर ! मुझे भय है यदि इसका विवाह नही हुआ तो यह साधु हो जायेगा। बन्दीगृह से छूटने के बाद यह ऐसा हो गया है।"

शेफाली चौकी, "बन्दीगृह ?"

"हाँ हाँ, क्रान्तिकारी होने से इसे बन्दीगृह जाना पडा—छः वर्ष का कारावास। इसी बीच मे यह धार्मिक हो गया है।"

"क्रान्तिकारी भी थे ?"

पीयूषदासी को लगा जैसे उसने भाई के कारावास की बात कहकर बुरा किया है। अब शुभदा सुनेगी तो इससे विवाह नही करेगी। अब क्या हो ? यह तो बहुत अनुचित हुआ। वह बोली, "वह क्रान्तिकारी नही था। उसको सरकार ने पकड़ लिया था।"

"तो क्रान्तिकारी होना बुरी बात नही है दीदी। यह तो बहुत गौरव की बात है। मुझे नही मालूम था कि डा० चौधरी इतने महान् है।"

शेफाली की बात सुनकर उसे सन्तोष हुआ। वह कहने लगी, "इसने किसी पर एक बम चलाया वह मरा नही, बच गया। कौन जाने मर भी गया हो, परन्तु मै तो इतना ही जानती हूँ।"

शेफाली ने बढकर पीयूषदासी के पैरो की धूल ली और बोली, "आप धन्य है, जिसका ऐसा भाई है।"

गद्गद् होकर पीयूषदासी कहने लगी, "नही नही, ऐसा क्या, मैं तो अभागिन हूँ। चौबीस साल की उमर मे मेरा सिन्दूर पुँछ गया।" इतना कहते-कहते उसकी आँखो से दो-चार बूँद आँसू टपक पडे।

डा० चौधरी ने बाहर से आते ही नौकर को चाय लाने के लिए आवाज दी और कहा, "हमारी दीदी बिलकुल सीधी-सादी ग्रामीण है। इनका बुरा न मानियेगा डाक्टर शेफाली! आपका नाम बगाली है। लगता है आप बगाली है शेफाली!"

"यह नाम मेरे पिता का रखा हुआ है। माँ और नाम से पुकारती थी।"

'ठीक!"

नौकर चाय लाया। पीयूषदासी झपटकर भीतर से मिठाई और नमकीन ले आई।

चौधरी ने कहा, "डाक्टर अभी मिठाई-नमकीन नही ले सकती दीदी! लाओ मुझे दो।" इतना कहकर वह स्वय खाने लगा। शेफाली ने केवल चाय ली।

डाक्टर ने चाय पीते-पीते कहा, "मै आजकल योग-वसिष्ठ पढ रहा हूँ। बडा आनन्द आता है।" वह बोलता जा रहा था। धर्म और देश दोनो की बातें एक ही रूप मे मिश्रित होकर निकल रही थी। शेफाली अनमने भाव से बैठी रही।

पीयूषदासी का ध्यान अपनी पुस्तक पर था। वह उडते-उडते अक्षर पढ रही थी। जैसे उस पुस्तक के प्रत्येक अक्षर से अविनाशचन्द्र दास के विवाह का सम्बन्ध हो। उसे लग रहा था यदि शुभदा माने तो उससे भाई का विवाह हो जाय। इधर शेफाली कुछ और ही सोच रही थी। वह इन दोनो भाई-बहनो को मानो पढ रही थी। वह समझ नही पा रही थी कि क्रान्तिकारी दल मे काम करने, इतने दिन जेल मे रहने के बाद इस डाक्टर मे जो एकदम आध्यात्मिक परिवर्तन हो गया है, क्या वह उन्नति है ? निश्चय ही यह इसका यथार्थ से हटकर सन्यास धर्म की ओर जाना एक प्रकार से पलायन है। क्या इस व्यक्ति की वह सराहना करे ? क्या यह ऐसे ही नही है कि युद्धक्षेत्र मे शत्रु को हराने की चेष्टा वाले व्यक्ति ने एकदम सन्यास ले लिया हे, जबकि युद्ध अभी बाकी है। लडने के लिए देश उसे पुकार रहा है।

उसकी बहन के सामने महत्त्व न तो उसके क्रान्तिकारी होने मे है और न उसके अध्यात्म मे। उसकी दृष्टि में एक साधारण स्त्री की तरह सृष्टि का महत्त्व किसी एक छोकरी को भाई के गले से बाँध देना-भर है। यही शेफाली ने उन दोनो के आकार-प्रकार से पढने की चेष्टा की। इसी समय साधना और शुभदा नौकर के सिर पर सामान लदवाये वहाँ आ गईं।

शेफाली उठने को हुई तो डा० चौधरी ने एक-एक प्याला चाय और पीने का अनुरोध किया। पीयूषदासी ने शुभदा को अपने पास ही बिठाया। साधना एक ओर खिसककर बैठ गई।

साधना ने ब्यौरेवार सामान की फहरिस्त का बखान कर डाला। पीयूषदासी ने न तो साधना के बारे में पूछा न कोई बात की। वह बगला मे शुभदा से बाते करती रही। यथासमय सब लौट आए।

शेफाली ने डाक्टर के क्रान्तिकारी होने तथा छः वर्ष तक कारावास काटने की बात शुभदा को सुनाई। उसने कहा, "कोई कल्पना भी नही कर सकता कि यह व्यक्ति कभी क्रान्तिकारी रहा होगा।"

शुभदा के हृदय मे उसकी आध्यात्मिकता के प्रति अनास्था थी। वैसे स्वय डॉक्टर चौधरी के प्रति कोई आकर्षण भी नही था। एक साधारण डाक्टर के नाते वह उससे मिलती, किन्तु उसके क्रान्तिकारी होने की बात ने उसे एक क्षण के लिए चौधरी के सम्बन्ध मे सोचने को बाध्य कर दिया। उसे पुरानी स्मृतियाँ उद्भूत हुई। उसने पिछले दिनो जिन क्रान्तिकारियो के सस्मरण पढे थे उनमे इसका भी नाम था।

शुभदा ने बताया, "चौधरी क्रान्तिकारियो के दल मे एक साहसी व्यक्ति रहा है।"

"पर यह सब क्या है शुभदा ?"

"समझी तो मै भी नही।"

"क्या यह जीवन से भागना नही है ?" शेफाली ने प्रश्नसूचक ढग से पूछा। फिर बोली, "हो सकता है इसमें भी कोई रहस्य हो। बहुत देर तक चौधरी का प्रसग लेकर चर्चा होती रही। शेफाली ने लक्ष्य किया कि शुभदा के हृदय मे चौधरी के प्रति वह कटुता नही है। अब वह अपेक्षाकृत कुछ नरम भी हो गई है। किन्तु पीयूषदासी के प्रति कोई भी अच्छी भावना वह प्रकट न कर सकी।

दूसरे दिन शेफाली शुभदा के साथ डा० चौधरी को देखने गई तो शुभदा ने एकान्त पाकर उससे पूछा—

"क्रान्तिकारी का अन्त कहाँ होता है डाक्टर ?"

डाक्टर ने सशक होकर पूछा, "तुम्हारा मतलब ?"

"मै वैसे ही पूछ रही हूँ। मैने चौधरी नाम के एक व्यक्ति से सम्बन्ध रखने वाले सस्मरण पढे है।"

"उसकी मृत्यु हो गई; वह कुछ न कर सका।"

"तो अब क्या दूर किसी पहाड पर आध्यात्मिक जीवन बिता रहा है ?"

"वह साधना कर रहा है। जब उसके जीवन की साधना पूरी होगी तभी वह कुछ कर सकेगा।"

"साधना क्या है ?"

"सयम का पालन, आत्मा की खोज !"

"मैं समझती हूँ यह अपने प्रति धोखा है।"

"हो सकता है," निरीह भाव से डाक्टर ने उत्तर दिया।

शुभदा छोडने वाली नही थी। बोली, "डाक्टर, क्या आप समझते है कि आप धरती को छोडकर पाताल की ओर नही जा रहे है ?" काफी देर तक डा० चौधरी और शुभदा में बातचीत होती रही। शुभदा के हृदय में डा० चौधरी के प्रति एक आस्था थी तो एक क्षोभ भी था। वह इस मामले मे एकदम उग्र थी। वह चाहती या मानती थी कि ऐसे व्यक्ति का स्थान या तो जेल है या मृत्यु। इस प्रकार उद्देश्य-हीन होकर अध्यात्म मे मुँह छिपा लेना उसे किसी तरह सह्य नही था। डा० चौधरी बात करते-करते बचने की कोशिश करता तो शुभदा उसे व्यंग्य बाणो से बीध देती। वह झुँझला उठता। अन्त मे शुभदा ने कहा, "डाक्टर, क्या तुम्हारे जीवन का यही ध्येय है—आत्मा को खोजते-खोजते मर जाना ? यह तो जीवित मरण है डाक्टर ! जाओ, देश तुम्हे अब भी पुकार रहा है, बूढी माँ की आत्मा अब भी क्षीण आवाज में कराह रही है।" शुभदा चली आई। डा० चौधरी गुमसुम हो गया।

घर आकर शुभदा ने देखा कि प्राणनाथ और राममोहन आये हैं।

प्राणनाथ ने बताया, "एक महीने आगे की तारीख पड गई है। सरकार किसी तरह भी उसको 'बेल' पर नही छोड रही है। मुझे देखकर एक और बनारस के वकील भी तैयार हो गए। हम दोनो ने मिलकर केस की तैयारी की है। छूटना तो मुश्किल है पर···"

"यह बडे साहस का काम है कि आजकल किसी क्रान्तिकारी की कोई सहायता करे।"

"साहस तो दिखाने से ही होगा। पर मुझे प्रसन्नता है कि मैं आज अपने पेशे मे सफल हूँ। अब तक तो सच को झूठ ही बनाता रहा हूँ।"

प्राणनाथ के चेहरे पर प्रसन्नता थी। शेफाली ने देखा कि प्राणनाथ मे भी वे ही सब गुण है जो एक मनुष्य मे होने चाहिएँ। उसने उन दोनो का सत्कार किया।

राममोहन जब साधना से मिलकर कमरे से लौटा तो बोला, "हाँ, अब शेफाली का स्वास्थ्य ठीक है।"

"ठीक तो मै वहाँ भी थी। यह तो आपको लग रहा था कि मैं बीमार हूँ," शेफाली ने हँसकर कहा।

"इस ठीक और उस ठीक में अन्तर है, यह तो आप मानेगी," प्राणनाथ ने कहा।

"मै इसी ठीक को ठीक मानता हूँ," राममोहन ने शेफाली के चेहरे पर आँखें जमाये हुए उत्तर दिया। अभी आप कम-से-कम एक मास और यहाँ रहिए। हाँ, मै यदि आप आज्ञा दे तो साधना को लेकर कल सवेरे की गाडी से चला जाऊँ। आपको देख लिया, तसल्ली हुई। प्राण-नाथ यहाँ है ही।"

"पर साधना के बिना क्या हमे वह सुख मिल सकेगा ?" शेफाली ने कहा।

"साधना का जाना जरूरी है। इसकी माँ बीमार है। उनके पास भी इसे जाना है।"

साधना ने माँ की बीमारी का जब से समाचार सुना तभी से वह बेचैन थी। वह आ भी गई। शेफाली ने साधना को अपने पास ही बिठा लिया और उसके कन्धे पर हाथ रखकर बोली, "इसने माँ की तरह मेरी सेवा की है।"

"क्यो मुझे कुएँ मे डाल रही हो जीजी ?" साधना ने तत्क्षण विभोर होकर जवाब दिया।

"जीजी की न मालूम किस रूप मे इन्होंने सेवा की। मुझे तो लगा है कि ये मेरी सगी बहन है ! बडी बहन ! ठसकीली, मटकीली, फबीली, चटकीली और कभी-कभी चपत लगा देने वाली !" शुभदा ने चुटकी

लेते हुए कह डाला ।

"चपतीली भी कहिए !" सब लोग हँस पडे, "शायद 'ईली' का इससे अच्छा प्रयोग और कभी नही हुआ है !"

उन दिनो मसूरी मे खासी चहल-पहल थी । युक्तप्रान्त, राजपूताना, बिहार, बगाल—सभी प्रान्तो के धनी लोग वहाँ आ रहे थे । बाज़ारो में नये-नये चेहरे विचित्र वेश-भूषा मे दिखाई देते । जैसे ही मसूरी पहाड अपने यौवन पर था, वैसे ही यौवन, रूप, रमणीयता, सौन्दर्य का अजस्र प्रवाह भी वहाँ बह रहा था । एक तरफ जहाँ आर्य-समाज, धर्म-समाज, ब्राह्म-समाज आदि धार्मिक सस्थाओ ने मनुष्य जाति को शुद्ध ईश्वरवादी बनाने का बीडा उठा लिया था, दूसरी तरफ वहाँ उतनी ही जोर-शोर से होटलो, रेस्तराँओ, नाटक-सिनेमा-घरो, नृत्यशालाओ मे मदनोत्सव मनाये जा रहे थे । भीड दोनो में काफी होती । पर एक मे बूढे, श्वेत-केश, गलितदन्त धर्म को विलास के रूप में समझने वाले 'फेनेटिक' लोगो की भरमार थी, तो दूसरे मे उमंग, उत्साह, रति-रग में डूबे जीवन को प्रत्यक्ष भोगने वालो की भीड थी । सूर्य दोनो के ऊपर एक-सा चमकता था, वर्षा दोनो प्रकार के लोगों को अपने स्फटिक बिन्दुओ से भिगोती, हवा दोनो को उत्फुल्ल करती; और रात दोनो को अपनी गोद मे लिटाती, बिजली की बत्तियाँ दोनो को उत्तेजित करती—जैसे पृथ्वी से ऊपर उठकर मनुष्य ने अधर में अपनी विलास-भूमि बना ली हो, जहाँ शराब के झरने झर रहे हैं, सुन्दरियो का स्वर्ग उभरा पड रहा है ।

शुभदा के लिए यह यात्रा बिलकुल नई थी । उसकी आँखें इतना स्वर्ग-सुख देखकर चौंधिया गईं । साधना की विलासिता मे चार चाँद लग गए । शेफाली दोनो को देखती और सोचती—'वास्तविक क्या है ! यह या वह ।'

उस दिन राममोहन साधना के साथ सिनेमा चला गया । शेफाली के ही कारण और लोग नही गये । वे रात के नौ बजे तक घूमते रहे ।

डा० चौधरी को प्राणनाथ बहुत अच्छा लगा। प्राणनाथ को दो-एक मित्र और भी मिल गए। वह सवेरे उनके साथ घूमता रहा। दोपहर को डाक्टर चौधरी आ गया। आते ही बोला, "रात आर्य-समाज में ईश्वर के ऊपर एक सुन्दर व्याख्यान हुआ, आज भी है।"

शुभदा ने कहा, "ईश्वर को सिद्ध करने से पूर्व देश को रोटी सिद्ध करने की जरूरत है, डाक्टर चौधरी! उसे सकटो से बचाने की आवश्यकता हे। सारा संसार आज त्राहि-त्राहि कर रहा है।"

"पर यह कष्ट तो ईश्वर पर श्रद्धा न रखने के कारण ही है शुभदा देवी," डा० चौधरी ने उत्तर देते हुए अपनी बात कही और 'धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षित' शास्त्र-वाक्य सुना दिया।

प्राणनाथ ने बीच मे होकर कहा, "आज मनुष्य की सन्देहवादी बुद्धि एकदम किसी भी प्राचीन को 'इन टोटो' स्वीकार नही कर सकती। शुभदा का कहना ठीक है कि उस अप्रत्यक्ष के ज्ञान की चेष्टा न करके हमे प्रत्यक्ष होनेवाली कठिनाइयो का हल सोचना होगा। ईश्वर पर विश्वास करने या न करने से हमारा पेट तो भरने से रहा, डाक्टर साहब!"

चौधरी ने प्राणनाथ की बात काटते हुए कहना शुरू किया, "आप ठीक कहते हैं कि मनुष्य जाति पीडित है। यह पीडा उसे किसने दी? मनुष्य ने स्वय ही तो उत्पन्न की है। क्यो? इसलिए कि ठीक मार्ग पर वह नही चला। वह उस छात्र की तरह है, जो माता-पिता का कहना न मानकर फेल हो जाता है और फिर रोता है। तो क्या यह उसके माता-पिता का दोप है?"

शुभदा ने तत्क्षण कहा, "यह आपका दृप्टान्त यहाँ नही घटता। सारी बुराई की जड हमारी समाज-व्यवस्था है। उसी के दूषित होने पर हमारे दु ख बढे है। इसमे छात्र की तो कोई बात ही नही है। हमारा भौतिकवाद मानता है कि मनुष्य आदिकाल से परीक्षण कर रहा है। निरन्तर होनेवाले पुराने अनुभव के आधार पर ही बहुत से सृष्टि के

सत्यो का आविष्कार हुआ है। हवा की लहरो और समुद्र के जल के प्रवाह की नियति का ज्ञान हजारो वर्षों की नाव की यात्रा के व्यवहार से मनुष्य को मिला है।"

"मै मानता हूँ, अनुभव ही सत्य की खोज का आधार है, पर अनुभव दो तरह से मिलते हैं—एक बाह्य जगत् से और दूसरे आत्म-साक्षात्कार से। अध्यात्म-अनुभव आत्म-साक्षात्कार का फल है।" डाक्टर चौधरी ने अपनी बात को पुष्ट किया।

शेफाली ने बीच मे ही टोककर कहा, "यह भौतिकवाद क्या बला है ?"

चौधरी तत्क्षण बोल उठा, "भौतिकवाद, नास्तिकवाद !"

"ठीक है, भौतिकवाद नास्तिकवाद होते हुए भी वह सत्य है।" प्राणनाथ बोला।

"कैसे ?"

प्राणनाथ ने कहा, "जडवाद का पहला सिद्धान्त है कि सब चीजें बदलने वाली है, परिवर्तनशील है। वस्तुओ का स्थान बदलता रहता है, उनके घटक गुण-धर्म सब बदलते रहते है।"

"यह तो हमारा धर्मशास्त्र भी मानता है ।"

"भूगर्भ का इतिहास कहता है कि वायुमय, द्रवमय, घनरूप इन तीन अवस्थाओ में से पृथ्वी गुजरी है। पहले वनस्पति नही थी, मनुष्य नही थे, वे सब हुए। जो जानवर पहले जिस रूप में थे वे अपने रूप मे आज नही हैं। दूसरा सिद्धान्त है कि सत्तावाली वस्तु का सम्पूर्ण नाश नही होता, क्योकि सम्पूर्ण अभाव से कोई वस्तु नही होती। प्रत्येक वस्तु किसी वस्तु से ही बनती है। जैसे कपडा रुई से, घडा मिट्टी से।"

सब लोग प्राणनाथ की मार्मिक बाते सुन रहे थे। उसके कहने का ढंग भी काफी आकर्षक था। उसने आगे कहा, "जरा विस्तार से बात करने के लिए क्षमा चाहता हूँ। जैसे बीज, पानी, खाद से वनस्पति बनती है. आक्सिजन और हाइड्रोजन से पानी बनता है और आक्सिजन-हाइड्रो-

शेफाली ने प्राणनाथ की बात का नम्रता से उत्तर देते हुए कहा, "आपकी बात ठीक हो सकती है, प्राणनाथ बाबू ! मै स्वयं जानती हूँ कि डाक्टरी में न आत्मा है न उसकी चर्चा। इसी प्रकार सम्पत्ति-शास्त्र, वनस्पति-शास्त्र, रसायन-शास्त्र—सब मे कही भी आत्मा और ईश्वर का जिक्र नही है। तो इसका यह अर्थ नही है कि यदि इन शास्त्रो मे अध्यात्म की चर्चा नही है तो यह विषय ही नही है।"

शेफाली के इस तर्क को सुनकर डा० चौधरी उछल पडा। बोला, "हियर यू आर, शेफाली देवी!"

प्राणनाथ ने उसी नम्रता से कहा, "इससे तो मेरी बात ही सिद्ध होती है, कि जब विज्ञान मे ईश्वर का अस्तित्व नही है और वह उसके बिना भी अपना काम चलाता है, प्रकृति की और मानव की सीमा निश्चित करता है और उसके द्वारा निश्चित मानव-मूल्यो का भी ठीक-ठीक साधन उपस्थित करता है, तो हमारे लिए कही उसकी आवश्यकता नही रह जाती, और हमारा काम चल जाता है।"

डा० चौधरी ने कहा, " 'ईश्वरः सर्वभूताना हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।' यह गीता-वाक्य ही बताता है वह आत्मा, जिसका भौतिकवादी भौतिक-शास्त्र उल्लेख नही कर पाया, नही समझ पाया, सब जगह मौजूद है।"

प्राणनाथ डा० चौधरी के इस तर्क पर हँसा और बोला, "मालूम होता है आपने फीजिक्स पढा तो है, गुना नही। मित्र, तुम भूल जाते हो, द्रव्य-रचना के बदलने पर उसके नियम बदल जाते है। एलोक्ट्रोन्स प्रोटोन्स के आविष्कार से विज्ञान ने मनुष्य की आस्था को बदल दिया है। पदार्थ-विज्ञान जिन नियमो का विवेचन करता है, रसायन-शास्त्र उससे भिन्न नियमो का विवेचन करता है। जीव-सृष्टि के नियम क्या अजीव-सृष्टि से भिन्न है ? द्रव्य की रचना बदल जाने पर जब नये गुण-धर्म वाले द्रव्य का निर्माण होता है तब इस नवीन बनने वाली सृष्टि के नियम भी नये हो जाते है। वे दोनो जड-चेतन में एक-सा

कार्य करते है। भौतिकवादी उस चेतन को शरीर से भिन्न कोई तत्त्व नही मानता। सजीव पिण्ड या मनुष्य उसी प्राकृतिक द्रव्य की एक विशेष अवस्था है।"

शुभदा ने कहा, "मै भी विश्व की गति-स्थिति के लिए परमात्मा की आवश्यकता नही मानती।"

शेफाली ने कहा, "आज मनुष्य की बुद्धि चकरा गई है कि वह क्या माने और क्या न माने। फिर भी काम दोनो का चलता है। जाने दीजिए। यह विषय ऐसे है जिन पर विश्वास के साथ कुछ भी नही कहा जा सकता।"

प्राणनाथ ने उत्तर दिया, "यदि मनुष्य सोचे तो सत्य को प्राप्त कर सकता है। हमारे भीतर सबसे बडी कमजोरी हमारी रूढिवादिता है।"

डा० चौधरी बहुत देर तक रामकृष्ण परमहस की महत्ता पर बोलता रहा। अन्त मे उसने कहा, "हमे प्रत्यक्ष से अनुभव प्राप्त करके किसी परिणाम पर पहुँचना चाहिए। क्या कारण है कि सारे ससार में सभी प्रकार के लोगो को कष्ट से बचने के लिए धर्म की आवश्यकता मालूम हुई ? यही नही, उससे सन्तोष भी हुआ, समाज का कल्याण भी हुआ। इससे स्पष्ट है कि धर्म की आवश्यकता आज भी है और कल भी होगी। धर्म एक बल है, प्रेरणा है, एक विश्वास है, जो मनुष्य को उन्नति की ओर ले जाता रहा है, सामाजिक सुख, व्यक्तिगत सुख दोनो ही देता रहा है। मुझे गीता पढकर, योग वासिष्ठ का मनन करके कम सुख, कम सन्तोष नही मिलता। फिर मै कैसे मान लूँ कि भौतिकवादी पद्धति ही श्रेष्ठ है ? मुझे क्रान्तिकारी बनने, शत्रु पर विजय प्राप्त करने और कष्ट सहने की प्रेरणा इस धार्मिक ग्रन्थ गीता से मिली है। और मैने मौत को हथेली पर रखकर इस मैदान मे कूदने का निश्चय किया। यह सब क्या है, क्या यह असत्य है ? यदि यह असत्य है तो देश-प्रेम भी असत्य है। यह समाज, जिसमे हम रहते है, वह भी असत्य है।"

डाक्टर चौधरी की अन्तिम बात मे उसके हृदय का सत्य-विश्वास और दृढता झलकी। उसे लगा उसने क्रान्तिकारी होने की बात क्यो कह डाली, पर हृदय के एकमात्र विश्वास को प्रकट करते समय वह अनायास इस बात को भी कह गया।

प्राणनाथ रुककर बोला, "तो क्या आप क्रान्तिकारी भी रहे है ? मै क्रान्तिकारियो की हृदय से पूजा करता हूँ। मै उनकी देश-भक्ति, लगन की प्रशसा करता हूँ। यह दूसरी बात है कि उनका मार्ग सर्वजन-सहमत न हो।"

शेफाली बोली, "डाक्टर चौधरी साधारण व्यक्ति नही है। मै उनके सम्बन्ध में कल ही उनकी बहन के मुख से सुन चुकी हूँ।"

डाक्टर ने बात को टालते हुए कहा, "वह थोडा-बहुत कभी किया था, परन्तु मै तो साधारण व्यक्ति हूँ—तुच्छ, स्वार्थी, यह बात मत भूलिए।"

प्राणनाथ पूछ बैठा, "याद आ रहा है शायद आप वही चौधरी हैं, जिनके कारनामे, बहादुरी की बाते हम लोग पढते-सुनते आ रहे है, जो क्रान्तिकारी दल के प्रसिद्ध नेता थे।"

शुभदा आँखे फाड-फाडकर दाढी बढे, शुष्क, नीरस किन्तु तेजस्वी अविनाशचन्द्र दास के मुख की ओर देखती रही। शेफाली ने अपना अहोभाग्य मानते हुए डाक्टर को प्रणाम किया और बोली, "आपका धर्म-सम्बन्धी कोई भी दृष्टिकोण हो डाक्टर चौधरी, परन्तु आपकी महत्ता और त्याग मे कोई सन्देह नही है। यह मेरा सौभाग्य है कि मैं आपके दर्शन कर सकी, आपसे परिचय प्राप्त कर सकी।"

सब लोग इस छिपे व्यक्ति को पहचानकर श्रद्धा से अभिभूत हो उठे। जितना ही लोग डाक्टर चौधरी के सम्बन्ध में बातें करते, उतना ही वह विनम्र, विवश होता जा रहा था। अन्त मे उसने कहा, "छोडिए इन बातो को, अब तो मैं वही स्वार्थी पेट भरने वाला डाक्टर हूँ। मेरे सम्बन्ध में इस प्रकार की बाते कहकर मुझे लज्जित न करे।" इतना कहकर

वह प्राणनाथ से बोला, "आपका दृष्टिकोण बिलकुल वैज्ञानिक, तर्क-सम्मत है प्राणनाथ बाबू, किन्तु उसमे श्रद्धा का अभाव है। इसलिए वह मस्तिष्क को अपील करता है, हृदय को नही।"

"वैज्ञानिक तो हृदय-जैसी किसी वस्तु को स्वीकार नही करता, इसलिए वह नग्न सत्य के उद्घाटन का प्रयत्न करता है, वह सत्य-प्रिय है, मनोहर नही।"

'तो क्या आपका ध्येय पूर्ण हो गया, चौधरी बाबू ?" शुभदा ने पूछा। "मेरा विश्वास है यह आपकी नई दौड के लिए बीच का समय है।"

डाक्टर चौधरी इस प्रश्न के लिए तैयार नही था। उत्तर भी नहीं देना चाहता था, बोला, "जाने दीजिए। पूछकर क्या कीजिएगा ?"

"फिर भी मेरा विश्वास है कि जो नदी प्रबल तूफान लेकर किनारे तोडने मे एक बार असफल रही है वह एकदम ठण्डी नही हो जायेगी। जो आग आपने अपने प्राणो की हवा से प्रज्ज्वलित की है वह ऐसे ही नही बुझ जायेगी।" शुभदा ने फिर बात पर जोर देते हुए कहा।

"मैने अपने प्राणो की हवा से आग प्रज्ज्वलित की है," आसमान की ओर ताकते रहकर उसने शुभदा की बात को दुहराया, "मेरे भीतर सघर्ष उठता रहता है। मै निश्चय नही कर पाता हूँ। मै अपनी आत्मा से इस प्रश्न का उत्तर चाहता हूँ, किन्तु वह मिलता नही है। इसीलिए उत्तराखण्ड के इस तपोवन मे अध्यात्मयोग में प्रवृत्त हुआ हूँ, शुभदा ! वह कोई भी दिन आ सकता है जब मुझे वापस जाना होगा, लौट जाना होगा। लौट भी सकता हूँ। तुमने आज फिर मुझे याद दिलाई है।"

सब लोग उस व्यक्ति की चेष्टाएँ देखते रहे। वह आसमान की ओर ताकता रहा। कभी अन्तस्थ हो जाता। "अच्छा चलूँ।"

"आपका ध्येय अधूरा है, डाक्टर मोशाय !" शुभदा ने यह फिर कह डाला।

"नही, नही, यह कोई ध्येय नही है। यदि मनुष्य और किसी तरह

भी समाज की सेवा कर सके तो वह भी कम नहीं है। तुम ऐसा क्यों कहती हो शुभदा ?"

"जीवन का लक्ष्य परिस्थिति के अनुकूल निर्मित होता है । तपेदिक के रोगी को साधारण बुखार की दवा नहीं दी जा सकती । हो सकता है डाक्टर चौधरी अब किसी और ढग से काम करना चाहते हो ।"

चौधरी उठते-उठते बोला, "ध्येय तो मेरा एक ही है । हो सकता है मार्ग भिन्न हो । विश्वास करता हूँ शुभदा की प्रेरणा मुझे बल देती रहेगी ।" इतना कहकर वह बिना नमस्कार किये ध्यानस्थ-सा होकर चला गया । सब लोग चुप हो गए, जैसे वर्षा के बाद शान्ति छा गई हो । सब लोग अपने-अपने ढग से चौधरी की बात सोचते रहे । चुप्पी तोडने का साहस ही जैसे नष्ट हो गया ।

अगले तीन-चार दिनो तक डा० चौधरी आता और शेफाली को देख जाता । न वह किसी से बहुत बोलता न हँसता। प्रयत्न करने पर भी वह चुप रहता। शेफाली उसे देखती और दयार्द्र होकर एक बार मन-ही-मन उसे प्रणाम करती। प्राणनाथ मनोवैज्ञानिक ढग से उसका विश्लेषण करता ।

शुभदा भीतर-ही-भीतर डा० चौधरी की भक्त हो गई । वह कभी-कभी उसके साथ बाहर तक निकल जाती और बातें करती रहती । एक बार सब लोगो ने चौधरी को प्रसन्न करने के लिए एक होटल में चाय-पार्टी दी, पर उसका मौन वहाँ भी न टूट सका । वह साधारण बात-चीत में भी जैसे रस नहीं पाता था । अन्त मे शेफाली ने एकान्त में ले जाकर चौधरी से कहा, "डा० चौधरी, मुझे बहुत दु ख है कि शुभदा ने आपकी मन स्थिति को डॉवाडोल कर दिया है । आप उसकी बातो में न आइये, वह बच्चा है ।"

चौधरी ने उत्तर दिया, "आप ठीक कहती है । पर मुझे लगता है जैसे मेरा जीवन व्यर्थ हो रहा है । कोई मुझे पुकार-पुकारकर कह रहा है, 'काम करो, काम करो या मरो ।' "

"नही नही, आप अपने मन को स्वस्थ करे," शेफाली ने सान्त्वना देते हुए कहा।

दिन बीतने लगे। शेफाली स्वस्थ हो रही थी। थोडे दिनो बाद सबने देखा कि डा० चौधरी मे अब वह चुप्पी नही है। वह सबसे हँसता-बोलता, समाज, धर्म पर चर्चा करता। प्राणनाथ, शेफाली और शुभदा से भी उसका व्यवहार बडा स्नेहमय हो गया था। प्राणनाथ की विद्वत्ता की धाक वह मानने लगा। प्राणनाथ भी अपने जर्मनी के अनुभव, राजनीतिक दाव-पेच, हिटलर द्वारा कम्यूनिस्ट पार्टी पर अत्याचार की बाते सुनाता। जब चौधरी ने सुना कि प्राणनाथ तीन वर्ष तक जर्मनी की कम्यूनिस्ट पार्टी मे काम करता रहा है और उसी बीच वह पकडा जाकर घोर कष्ट सहता रहा और अन्त मे ट्रूस पर छोडा गया, तब उसे बहुत अच्छा लगा। उसने कहा, "प्रत्येक मनुष्य मे अनन्त शक्ति का भण्डार है, उसे पहचानने की क्षमता चाहिए।"

प्राणनाथ ने कहा, "तुम ठीक कहते हो चौधरी, मेरा भी यही विश्वास है। यह मनुष्य का युग है। उसे अपनी समस्याओ को अपने-आप हल करना है। कोई देव, दानव और ईश्वर आकर उसकी सहायता नही कर सकते।"

"ठीक है, यह मनुष्य का युग है और उसे ही अपनी कठिनाइयो को सुलझाना है—'कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविशेच्छत समा।' "

जब मसूरी से प्रस्थान करने का समय आया तो निश्चय हुआ कि डाक्टर चौधरी को चार सौ एक रुपया भेट दिया जाय। सब लोग जाकर रुपया दे भी आए। चौधरी ने बहुत मना किया, बुरा भी माना, परन्तु शेफाली का आग्रह वह किसी तरह भी न टाल सका। उस दिन शाम को सब लोग शुभदा के आग्रह पर सिनेमा देखने चले गए। दूसरे दिन सब लोग मसूरी के अन्य दर्शनीय स्थान देखने चले गए। रात को वहाँ से लौटे। घर आने पर मालूम हुआ कि डाक्टर चौधरी की बहन दिन मे कई बार आ चुकी है। उसने यह भी कहा, "डाक्टर चौधरी

का कुछ भी पता नहीं लग रहा है । न जाने कहाँ चले गए !"

शेफाली ने सुना तो सन्न-सी रह गई । शुभदा से बोली, "चलो जरा देखें क्या बात है ।"

शेफाली काफी थक गई थी, फिर भी उसे तैयार देखकर शुभदा और प्राणनाथ दोनो साथ हो लिए । रास्ते-भर डाक्टर चौधरी की चर्चा होती रही । शेफाली ने कहा, "हो सकता है कि शुभदा की बात उसे लग गई हो और वह फिर मैदान मे कूदने के लिए चल पडा हो ।"

"पर बीच में तो वे ठीक हो गए थे, जीजी !"

प्राणनाथ चुप रहा । वह क्या कहता !

दस बजे के लगभग जब ये लोग पहुँचे तो पीयूषदासी एक चटाई पर कम्बल ओढे पडी थी । रोते-रोते उसकी आँखे सूज गई थी । शेफाली के पूछने पर उसने बताया, "इधर कई दिन से वह बहुत चुप-चुप था । किसी रोगी को देखने भी नही गया । दिन में दुकान पर भी नही । रात को जब-जब मैने देखा उसके कमरे की बत्ती जलती पाई । सोचा, कुछ बात होगी । जवान आदमी है, मैं कहती भी क्या ? मै सन्ध्या-समय पूजा मे बैठी थी कि वह बाहर चला गया । फिर नही मालूम ।" इतना कहकर वह रोने लगी ।

सब लोग हैरान थे कि आखिर डाक्टर चौधरी चले कहाँ गए । पीयूषदासी ने बताया, "वह बहुत दिनो से रामकृष्ण मिशन में जाकर सन्यासी होने की सोच रहा था । मैने ही उसे समझाया कि मेरी मृत्यु के बाद वह सन्यास ले । उसे रोकने का मेरा मतलब था कि किसी तरह प्रमथनाथ दास का वश चले । किन्तु ऐसा भाग्य में नही था ।" इतना कहकर वह रोने लगी ।

प्राणनाथ ने कहा, "मै कलकत्ता चिट्ठी लिखकर पता लगाऊँगा ।"

शेफाली की आँखो में भी आँसू आ गए । उसने पीयूषदासी को सान्त्वना दी । इधर उसने दो दिन से कुछ खाया-पीया नही था । शेफाली ने चाहा कि कुछ बना दे, क्योकि नौकर कही इधर-उधर गया था । वैसे

भी पीयूषदासी किसी के हाथ का बना खाना नही खाती थी। आखिर शुभदा ने थोडा भात बनाकर उसे खिलाया।

एकान्त में आकर शेफाली ने शुभदा से कहा, "शुभदा, तुझे कुछ दिन पीयूषदासी के पास रहना होगा। जब डा० चौधरी लौट आएँगे या उनका कुछ भी पता लग जायेगा तभी तू दिल्ली चली आना।"

शुभदा कुछ देर खडी सोचती रही। शेफाली के विछोह का ध्यान आते ही वह विह्वल हो गई। उसके मुँह से कोई उत्तर नही निकला, और कोई उपाय भी न था। इस अवस्था में पीयूषदासी को छोडना स्वय शुभदा को भी ठीक नही लगता था। बहन शुभदा से इसी बीच में कई बार कह भी चुकी थी। हारकर शुभदा बोली, "जीजी, मैं स्वय दुखी हूँ किन्तु · " इतना कहते हुए शुभदा ने मुँह फेर लिया। शेफाली ने शुभदा को गले से लगाकर रहने का आदेश दिया और चल दी। उस समय शुभदा को ज्ञात हुआ कि शेफाली और उसका स्नेह एक-दूसरे के लिए कितना गहन, कितना पवित्र, कितना नि स्वार्थ है। स्वय शुभदा के मन में भी जैसे हूक उठी, किन्तु वह चुप रह गई। उसने पीयूषदासी को समझा-बुझाकर शान्त किया और स्वय एक खाट बिछाकर पड़ रही।

दूसरे दिन प्राणनाथ ने खरीद-फरोख्त की और शेफाली के साथ शुभदा से आखिरी बार मिलने गये।

शेफाली ने पाँच सौ रुपये शुभदा को देते हुए कहा, "मै प्रतिमास पचास रुपये इन्हे भेजा करूँगी, जब तक डा० चौधरी का पता नही लग जाता।"

शुभदा सब लोगो को मोटर के अड्डे तक छोडने गई। शेफाली ने शुभदा से जल्दी लौटने का आग्रह किया और प्राणनाथ ने पढाई जारी रखने और पत्र लिखने का। पर शुभदा कुछ भी न कह सकी। उसे भीतर-ही-भीतर अनुभव हुआ जैसे मसूरी से उसका सुख चला जा रहा है। शुभदा ने उस समय समझा कि शेफाली के बिना वह ज्ञानहीन क्रिया के समान है।

हीरादेई, शेफाली के मसूरी जाने के बाद से बराबर घर की देख-भाल करती रही। इसी बीच में एक दिन उसे गिरधर दिखाई दिया। वह उसे देखते ही बोली, "क्यो गिरधर, आजकल अपनी कविता से कुछ नाराज हो क्या ? बहुत दिनो से आये नही !"

गिरधर पहले तो हीरादेई का लक्ष्य समझा नही; फिर बोला, "वह तो आजकल प्राणनाथ की कविता है मेरी नही।"

हीरादेई ने हँसकर पूछा, "फिर तुम्हारी कविता कौन है ?"

"क्यो, तुम भी तो !"

"मेरा सौभाग्य है कि मुझे तुम इस लायक मानते हो !"

"यह उसका सौभाग्य है जिसकी कविता तुम हो," गिरधर ने उसी भाव से उत्तर दिया।

हीरादेई ने अपनी बडी-बडी आँखे मटकाकर एक मुस्कान फेंकी और बोली, "मैं तो तुम्हारी सदा याद करती रहती हूँ। परीक्षा हो गई ?"

"पढना छोड़ दिया। अब तो कविता ही करता हूँ। देखो, मेरी कविताएँ अब पत्रो में छपने लगी है।" गिरधर ने दो-चार मासिक पत्र, जिन्हें वह साथ लिये घूमता रहता था, हीरादेई को दिखाए। कविताएँ तो उसकी समझ मे नही आई पर उसका नाम और चित्र देखे। बोली, "बहुत बड़े आदमी हो गए हो। आजकल कहाँ रहते हो ?"

"ऐसे ही, जहाँ जगह मिल जाय। मित्रो के यहाँ पडा रहता हूँ।"

हीरादेई को दया आ गई। उसने शाम को भोजन करने के लिए उसे बुलाया। शाम को गिरधर उसकी कोठरी में खाट पर आ बैठा। हीरादेई ने स्वय कई तरह के भोजन तैयार किये और प्रेम से उसे खाना

खिलाया। घर में उस समय वह अकेली थी। कम्पाउण्डर बाहर दुकान में रहता था। जमादार भी कम्पाउण्डर के पास बाहर सोता था। गिरधर खाने के बाद बोला, "क्या तुम अकेली हो आजकल ?"

हीरादेई ने बताया, "शेफाली देवी स्वास्थ्य सुधारने मसूरी गई है; शुभदा और साधना भी उनके साथ है।"

गिरधर निश्चिन्त हुआ। हीरादेई भोजन करके उसी के पास आ बैठी। गिरधर ने एक गीत गाकर सुनाया। वह जानता था कि यह उसकी समझ के बाहर है, फिर भी तृप्ति के बाद वह सुनाने के लिए बेचैन हो रहा था। उसने एक गीत गाया। हीरादेई कुछ न समझती हुई भी उसकी भावमुद्रा, उसके सुन्दर चेहरे और घुँघराले बालो को देखती रही, जैसे वह सभी समझ रही हो। उसकी आँखो मे मादकता छा गई। वह बोली, "कितना अच्छा गाते हो तुम गिरधर! कोई भी तुम पर लट्टू हो सकती है।" इतना कहकर उसने गिरधर के गले में दोनो हाथ डाल दिए। गिरधर के लिए यह सब बिलकुल नया था। वह किताबी प्रेमी था। उसे एक स्त्री के इस प्रकार गले में हाथ डालने पर रोमाच हो आया। हीरादेई ने उसे चिपटाकर उसका मुँह चूम लिया और प्रेमानुभव मे चतुर हीरादेई ने मौखिक प्रेमी गिरधर को रस-विभोर कर दिया।

गिरधर अब प्रति सायकाल वहाँ आ जाता, रात-भर रहता और सबेरे चुपचाप उठकर चला जाता। एक दिन उसने बताया, "नागपुर में वह एक पत्र का सम्पादक होने जा रहा है।"

हीरादेई ने सुना तो बोली, "मुझे भी साथ ले चलो। एक मकान ले लेना, उसी में हम दोनो रहेगे।"

"लोग देखेगे तो क्या कहेगे ?"

"क्यो, हम तुम पति-पत्नी होकर रहेगे।"

"यदि तुम्हे स्वीकार हो। लेकिन डाक्टर क्या कहेगी ?"

"मुझे किसी की परवाह नही है। वे कुछ भी नही कह सकती।"

"तो चलो। इस बार उत्तर आने दो। पर मेरे पास तो कुछ भी नही है।"

"मेरे ये गहने है। पचास-साठ रुपये भी है। फिर तुम्हे वेतन तो मिलेगा ही।"

"हाँ, सौ रुपये।"

"बहुत है। हम तुम दोनो साथ रहेगे। नया स्वर्ग होगा गिरधर!" यह कहकर हीरादेई ने गिरधर को कसकर आलिंगन मे बॉध लिया।

गिरधर की उम्र लगभग २३ वर्ष की थी। एम० ए० से उसने पढना छोडा था। उसके परिवार मे एक भाई थे, जो किसी सरकारी दफ्तर में नौकर थे। भाई चाहते थे कि बी० ए० पास करने के बाद गिरधर नौकरी कर ले। किन्तु कवि-प्रकृति ने गिरधर को एकदम दायित्वहीन और लापरवाह बना दिया। वह न घर की चिन्ता करता न भाई का अनुरोध ही मानता था। इससे उसकी भाभी भी जो चार बच्चो की मॉ थी, उससे ऊब गई थी। भाई भी थोडी नौकरी के कारण गिरधर को आगे पढाने मे असमर्थ था। परिणाम यह हुआ कि गिरधर की उच्छृङ्खलता बढ गई और भाई-भाभी ने उसकी उपेक्षा कर दी। इधर भाई का कानपुर तबादला हो गया। गिरधर दिल्ली मे ही रह गया। गिरधर अब और भी आजाद हो गया। वह कविता लिखता, मित्रो को सुनाता और उन्ही मे किसी के घर पडा रहता।

जब उसे नागपुर के एक पत्र में स्थान मिला तो वह हीरादेई को साथ लेकर नागपुर चला गया। कुछ दिन तक तो गिरधर को हीरादेई में आकर्षण लगा। खूब हँसते-खेलते, खाते-पीते, साथ-साथ बाहर घूमने निकल जाते और यौवन के भूखे मनुष्यो की तरह एक-दूसरे के प्राणो में समा जाते। जब तक गिरधर बाहर रहता हीरादेई खाना बना रखती, नहाती-धोती और शृंगार करती। फिर दोनों मिलकर नये जीवन के आनन्द मे डूब जाते। कुछ महीनों तक यह प्रवाह चलता रहा। तूफान की तरह प्रेम उमडा, उभरा और एक दिन आया कि धीरे-धीरे गिरधर

शिथिल पडने लगा। अब गिरधर कभी रात गये लौटता, कभी वह इधर-उधर दोस्तो मे रम जाता। सम्पादक-विभाग मे एक लडकी भी थी। गिरधर अब उसके प्रति आकृष्ट हुआ। वह कभी-कभी गिरधर के साथ उसके घर भी आ जाती। एक दिन कान्ता ने पूछा, "गिरधर, क्या तुम्हारा विवाह इतनी बडी स्त्री से हुआ है ?" गिरधर इसका कुछ भी उत्तर न दे सका। "बोलो गिरधर, क्या तुम्हारे देश मे बडी उम्र की कन्या से छोटे लडके का विवाह करने की चाल है ?"

हीरादेई ने सुना तो समझाया, "कह दो, ऐसा भी होता है।" पर गिरधर का मन तो कान्ता मे रमा था, वह क्या कहता ?

समय बीत रहा था और गिरधर का मन हीरादेई से हटता जा रहा था। हीरादेई ने पहले तो समझाया। फिर एक दिन उसने गिरधर को डाँट लगाते हुए पूछा—

"इतनी देर करके क्यो आते हो ? मै दिन-भर अकेली पडी रहती हूँ।"

"तो मै क्या करूँ ?" उसने रूखेपन से जवाब दिया।

"तुम्हे मालूम है मुझे चार मास ऊपर हो गए है।"

"क्या मतलब ?"

"तुम थोडे दिनो बाद एक बच्चे के बाप होने वाले हो। मेरा ध्यान रखा करो प्रियतम !" इतना कहकर जैसे हो प्यार से उसने गिरधर के कन्धे पर हाथ रखा वैसे ही उसने झटक दिया।

हीरादेई निष्प्रभ हो गई। बोली, "क्या बात है ? क्या नाराज हो ?"

बिना कुछ कहे-सुने गिरधर करवट बदलकर लेट गया। हीरादेई की आँखे खुली। वह भयभीत होकर गिरधर की खुशामद करने लगी। पर वह कठोर होता जा रहा था।

"तुम कोई पत्नी तो हो नही, चाहे जब मै तुम्हे छोड़ सकता हूँ।"

"पर ऐसा करने की नौबत ही क्यो आयेगी ? ब्याही औरत में

और मुझ में फर्क ही क्या है ? क्या मै उसी तरह तुम्हारी सेवा नही करती ?"

गिरधर कहने जा रहा था कि अब तुम मे वह सौन्दर्य नही, वह आकर्षण नही जो एक कवि को प्रिय होता है। पर उसने कहा नही। कान्ता की बात सोचने लगा—कितनी सुन्दर है वह ! कितना भोला मुख ! बडी-बडी नशीली आँखे, जैसे अपनी मस्ती की कहानी कह रही हो ! हर समय होठो पर मुस्कराहट ! दाँत कितने सुन्दर ! चिडिया की तरह चचल ! काश वह मेरी होती। पर निश्चय ही वह मुझे चाहती है, मेरी कविता पर मुग्ध है। वह भूल गया कि हीरादेई का कोई अस्तित्व है। वह उसकी आँखो मे मोहक स्वप्न बनकर नाचने लगी। इसी अवस्था में बहुत देर तक पडा रहा। फिर उसे हीरादेई का ध्यान आया। अरुचि और उपेक्षा से उसका मन तिलमिला उठा। जो हीरादेई उसके यौवन का आधार थी, जिसकी उष्ण, मादक साँसो में उसे प्रेरणा मिलती वही एक नवयौवना के मुकाबिले मे व्यर्थ हो गई। काश, यह हीरादेई न होती। मै कान्ता से कह दूँगा कि यह मेरी कोई नही है। कह दूँगा—कान्ता मेरी है···इसी प्रकार की बाते सोचता-सोचता वह सो गया।

इधर हीरादेई को अपनी भूल मालूम हुई। उसने कितनी बडी गलती की है इस व्यक्ति के साथ भागकर ! यदि यह उस लडकी से कह दे तो मेरी क्या अवस्था होगी ? मै कहाँ जाऊँगी, क्या करूँगी, मेरा तो यहाँ कोई नही है। यही सब पडी-पडी हीरादेई सोचती रही। फिर रोने लगी, पर गिरधर का मन नही पसीजा। उसने दो-एक बार जागने पर हीरादेई को रोते देखकर भी न कुछ पूछा न उससे बोला ही।

दूसरे दिन सबेरे उठकर बिना चाय पिये वह बाग मे घूमने चला गया। वहाँ से कान्ता के घर पहुँचा। कान्ता उस समय बाथ-रूम से नहाकर निकली थी। उसका सौन्दर्य देखकर गिरधर और भी विह्वल हो उठा। कान्ता ने गिरधर को चाय पिलाई और बोली—

"मैं आज रात की गाड़ी से बम्बई जा रही हूँ गिरधर ! एक

सप्ताह तक लौटूँगी।"

"क्यों ?"

"पिताजी ने बुलाया है।"

गिरधर चुप हो गया, बोला कुछ भी नहीं।

"क्यों, आज उदास हो, क्या बात है ?"

"कुछ नहीं, ऐसे ही।"

कान्ता चुपचाप उसकी मुखाकृति देखती रही। बोली—

"बम्बई देखा है तुमने ?"

"नहीं।"

"बड़ा अच्छा शहर है।"

"कौनसी गाडी से जा रही हो तुम ?"

"रात की गाडी से। एक सप्ताह बाद भेंट होगी।"

वह चुप हो गया। थोड़ी देर बाद वह अनमने भाव से उठकर चल दिया। यथासमय दफ्तर पहुँचा और शाम होते-होते घर जाकर सामान बाँधने लगा।

हीरादेई ने पूछा, "यह क्या है ?"

"मै बाहर जा रहा हूँ।"

"कहाँ ?"

"बम्बई।"

"क्यो कोई काम है ?"

"हाँ, दफ्तर का काम है। एक सप्ताह तक लौटूँगा।"

"और मै किसके सहारे रहूँगी ? मुझे तो यहाँ कोई नही जानता। गिरधर, तुम इतने निर्मोही न बनो।"

"मै कुछ भी नही जानता, चाहो तो वापस जा सकती हो।"

"कहाँ ? क्या मै अब कही जाने लायक रह गई हूँ ?" उसने आँखो में आँसू भरकर प्रार्थना-भरे स्वर में कहा। पर गिरधर फिर भी न पसीजा और रात होते-होते अपना थोड़ा-सा सामान उठाकर चल दिया।

हीरादेई ने बहुत मनाया, मिन्नत की, पैरों पडी पर सब व्यर्थ, गिरधर चला गया। हीरादेई पछाड खाकर आँगन मे गिर पडी, जैसे उसका सब-कुछ लुट गया हो।

न जाने वह कब तक वैसे ही पडी रही। रोते रोते उसकी आँखे सूज गई। जैसे-तैसे किवाड बन्द करके सो रही। दूसरे दिन न उसने कुछ खाया न पिया। वह सोचती थी कि यह क्या हो गया, अब क्या करे, कहाँ जाय, इतने बडे शहर मे कोई जान-पहचान का भी तो नही है जिससे जाकर कुछ कहे। एक बार उसके जी मे आया कि गिरधर के दफ्तर में जाकर उसका पता लगाए। पर दफ्तर वालो से यदि उसने कह दिया हो कि हीरादेई उसकी पत्नी नही है, तो ? तो क्या कान्ता के घर जाय ? पर उसका घर कहाँ है ? क्या वह उसे बताएगी···वह उसे क्यो बताने लगी ? वह भी तो उसकी प्रेयसी है। यदि उससे भी उसने कह दिया हो कि हीरादेई उसकी पत्नी नही है तो···रोते-रोते उसने बर्तन माँजे। बुहारी लगाने जाते हुए सोचा—आखिर यह सफाई किस लिए · वह तो न जाने कहाँ चला गया, कब आएगा ? निराहार, असहाय हीरादेई की दशा उस मनुष्य के समान थी जो समुद्र में एक शहतीर के सहारे बहता चला जा रहा हो, जिसे कही भी किनारा न दीखता हो, या अथाह अन्धकार में अपना स्थान ढूँढ रहा हो। उसकी आँखो के आगे अन्धकार-ही-अन्धकार था। फिर उसने सोचा—'शायद एक सप्ताह में गिरधर लौट आए, फिर तो कोई बात ही नही। मनुष्य है, कभी-कभी बिगड ही जाता है। ऐसी कोई बात नही। वे भी (जगन्नाथ) तो आये-दिन नाराज हो जाते थे।' जगन्नाथ का स्मरण आते ही उसे वे दिन, उसके बच्चे, वह जीवन जैसे सभी स्पष्ट हो गया। कितना परिवर्तन हो गया उन दिनों से आज तक ! वे भी न जाने कहाँ चले गये ? और आज वे होते तो···यह ध्यान आते ही वह सोचने लगी—'तो क्या वे मुझे जीती छोडते। गिरधर को मार देते और मुझे भी जीती न छोडते। पर वही कौन अच्छा था ! यदि भला-सा होता

तो मुझे छोडकर ही क्यो जाता ? फिर मेरी यह दशा ही क्यो होती ? क्यो मै गिरधर, इस निकम्मे गिरधर के पास आती। यह कवि है। कविता लिखता है, गाता है, कितना अच्छा गाता है ! घुँघराले बाल, सुन्दर मुख, लम्बी नाक, ऊँचा माथा, सिंह की-सी चाल ! कितनी मादकता है इसकी आँखो मे ! और वे दिन, जब वह मेरी बाहो मे लिपटकर सोया। अपनी गरम-गरम साँसो से मेरा चुम्बन लेता था। कितना सुख था उसमे…! यही सोचते-सोचते उसने आठ दिन काट दिए। नौवाँ दिन हुआ, दसवाँ बीता, पर गिरधर का कोई पता न था। अब क्या हो ? हारकर एक दिन पूछती-पूछती गिरधर के दफ्तर पहुँची। डरते-डरते भीतर घुसी। बाहर चपरासी बैठा था। उसने भीतर पहुँचा दिया। सामने एक सज्जन बैठे थे—चश्मा लगाए, गुम-सुम। कुछ लिख रहे थे। कलम रखकर हीरादेई का मुँह देखने लगे।

"मै गिरधर बाबू को पूछने आई हूँ। उन्हे आज दस दिन हो गए।"

"वह तुम्हारा कौन है ?"

"पति !"

"पति ? उसने तो कहा था कि उसका विवाह नही हुआ है। वह तो नौकरी छोडकर चला गया।" हीरादेई ने सुना तो खडे-खडे गिर पडी।

उन सज्जन ने उसे उठाया। बोले, "बहन, क्या वह सचमुच तुम्हारा पति था ? बडा दुष्ट निकला। तुम्हे इस तरह छोडकर चला गया। इन कवियो का कुछ भी ठीक नही है—दायित्वशून्य, मनुष्यता से रहित !"

वह खडी-खडी शून्य मे आँखे फाडे देखती रही और चुपचाप जब लौटने लगी तो उन्होने कहा, "ठहरो," इसके साथ ही दस-दस के पाँच नोट दराज मे से निकालकर देते हुए बोले, "यही मैं तुम्हारी सेवा कर सकता हूँ।"

हीरादेई नोट लेकर चल दी। सब ओर सुनसान था। जैसे इस चहल-पहल भरे जन-समूह मे एक भी आदमी न हो, जिससे वह कुछ

कह सके, बोल सके और उसके सामने रोकर अपने को निःसत्व करदे।

तांगे, मोटर, रिक्शा, सभी चल रहे थे, पर जैसे उसके लिए वे निर्जीव हो। बाजार में सभी हँसते-बोलते बाते करते जा रहे थे, पर जैसे उससे बात करने वाला कोई न हो। वह चली जा रही थी। चलती चली जा रही थी— निरुद्देश्य। इतने में किसी तांगे वाले ने आवाज लगाई, "एक सवारी स्टेशन को, एक सवारी स्टेशन को।" वह बैठ गई और स्टेशन की ओर चल दी—बिखरे हुए बाल, मैली धोती, फटी अँगिया, नंगे पैर, रूखी आँखें, निस्तेज, निर्मम, निराहार, निर्बल। वह तांगे में बैठी स्टेशन की ओर जा रही थी। वह पीछे की ओर देख रही थी, घोड़ा आगे दौड़ रहा था। अभागिन…

शेफाली के पूर्ण स्वस्थ होते ही राममोहन ने आकर सूचना दी, "कल प्रसूतिगृह के उद्घाटन का निश्चय हुआ है। नगर के प्रसिद्ध समाज-सेवी राजनारायण जी के द्वारा उद्घाटन-समारोह होगा। सब जगह निमन्त्रण-पत्र भेज दिये गए है। मेरी ओर से प्राणनाथ ने भाषण लिखा है, पढेगा भी वही। आपको भी उस अवसर पर कुछ बोलना होगा। तैयार है न ?"

शेफाली ने उत्तर दिया, "मै क्या बोलूँगी ?"

"जो आप उस अवसर के लिए उचित समझे।"

इसी समय प्राणनाथ भी आ गया। उसने सारी तैयारी का व्यौरेवार ज़िक्र किया, "चीफ कमिश्नर भी आ रहे है। स्वास्थ्य-विभाग के प्रधान अधिकारी, प्रमुख डाक्टर, वैद्य तथा नगर के सभी सज्जनो ने आने का वायदा कर लिया है। वन्देमातरम् के बाद उद्घाटन, फिर मेरी ओर से सक्षिप्त भाषण, फिर आपकी स्पीच और उसके बाद चीफ कमिश्नर बोलेगे।"

शेफाली ने घबराकर कहा, "क्या मै इतने आदमियो में बोल सकूँगी ? नही, मै न बोलूँगी राममोहन बाबू !"

राममोहन ने आग्रहपूर्वक कहा, "मेरी प्रार्थना है कि आप इस अवसर पर कुछ-न-कुछ अवश्य बोले ।"

"तो तुम भी बोलो ।"

शेफाली ने प्रथम बार राममोहन से 'तुम' कहा । न जाने कैसे उसके मुँह से निकल गया । बाहर से उसे लज्जा हुई । राममोहन को यह शब्द एकदम नया लगा । पहले तो वह चौका, पर अपने हृदय में निश्चित स्नेह-राशि शेफाली के प्रति सञ्चित होने के कारण वह चुप हो गया—कहना चाहिए उसके 'तुम' को सुनकर वह भीग गया ।

उसने उत्तर दिया, "मै···मै क्या बोल सकता हूँ ? मै कभी कालेज में भी नही बोला ।"

"मै भी नही बोलूँगी । मैं क्या कोई वक्ता हूँ ?"

निश्चय हुआ कि जो कुछ बोलना हो वह लिख लिया जाय । सूचना देकर दोनो चले गए । शेफाली अपना वक्तव्य लिखने बैठी, पर क्या लिखे, यही उसकी समझ में नही आ रहा था । उसने कई बार शुरू किया और फिर अच्छा न लगने पर काट दिया । फिर लिखा, फिर काट दिया । इस तरह उसने कई कागज फाडे और फेके । अन्त मे उसने सक्षेप में बिना किसी भूमिका के एक पेज लिखा, जिसमे नारी-जाति की सेवा तथा प्रसूति के सम्बन्ध मे अज्ञान का उल्लेख किया और सोचते-सोचते सो गई ।

दूसरे दिन प्रातःकाल ही प्राणनाथ आ गया । शेफाली ने वह कागज उसके सामने रख दिया । वह हिन्दी मे था । प्राणनाथ बोला, "यह क्या ? आपको तो अग्रेजी मे बोलना चाहिए । मैने स्वय अग्रेजी मे लिखा है ।"

"नही, मै हिन्दी मे ही बोलूँगी ।"

"तो मै क्या करूँ ? मै हिन्दी मे तो लिख नही सकता ।"

"तुम भी हिन्दी में लिखो, हम लोग क्या अग्रेज है ? मैं तो

चाहती हूँ विज्ञापन, साइन बोर्ड, कमरों के नाम सब हिन्दी में हो। यह हमारी दासता का चिह्न है जो हम अपनी भाषा को महत्त्व नही देते।"

प्राणनाथ बड़े विद्वत्तापूर्ण ढंग से अपना भाषण अंग्रेजी में लिखकर लाया था। शेफाली से निरुत्साहित होकर चुप हो गया।

"अब क्या हो ?"

"उद्घाटन-कर्त्ता, सभापति सभी तो हिन्दी में बोलेगे। फिर तुम क्यों अंग्रेजी मे बोलकर नक्कू बन रहे हो ?" शेफाली ने जोर देकर कहा।

प्राणनाथ ने कहा, "मै तो हिन्दी ठीक-ठीक पढ भी नही सकता; फिर जाने दो मैं नही बोलूँगा।"

"अरे, तुम कैसे वकील हो जो हिन्दी मे नही बोल सकते। तुम जो भी अपनी मातृ-भाषा में बोलोगे वही हिन्दी होगी।"

"अच्छा कोशिश करके देखूँगा। न होगा तो पाइंट्स लिख लूँगा।"

नियत समय पर लोग आये। वन्देमातरम् के बाद उद्घाटन हुआ। चीफ कमिश्नर ने नगर में प्रसूतिगृह की आवश्यकता का उल्लेख करते हुए शेफाली देवी की समाज-सेवा तथा राममोहन के रुपये के उचित उपयोग की प्रशसा की और आवश्यकता पड़ने पर सरकारी सहायता का वचन दिया। शेफाली देवी ने अपने शुद्ध, सक्षिप्त किन्तु सारगर्भित भाषण में स्त्रियो के प्रसूति-सम्बन्धी अज्ञान और उनकी उचित सहायता की आवश्यकता पर जोर दिया। सभापति ने अन्त में उपस्थित समुदाय के सामने व्याख्यान दिया और करतल-ध्वनि के साथ कार्यवाही समाप्त होने लगी। तभी राममोहन ने सभापति को धन्यवाद देते हुए बताया कि 'प्रसूतिगृह की मुख्य अध्यक्ष डाक्टर शेफाली देवी रहेगी। यह उनकी कृपा है कि उन्होने हमारी प्रार्थना स्वीकार करके अध्यक्ष बनना स्वीकार कर लिया है। देवी जी की नगर-निवासियो के प्रति की गई सेवाएँ,

जो उन्होने मानवता की भावना से की है, हमे विश्वास दिलाती है कि उनकी देख-रेख मे यह प्रसूतिगृह यथानाम सिद्ध होगा।' इसके बाद नगर-निवासियो की ओर से कुछ लोगो ने राममोहन के दान की सराहना की। सभा समाप्त हुई।

राममोहन ने प्रसूतिगृह के कम्पाउण्ड के एक बँगले मे शेफाली के रहने की व्यवस्था की। दो लेडी डाक्टर उसकी सहायता के लिए नियुक्त हुई। कुछ नर्से भी रखी गई। काम प्रारम्भ हो गया।

शेफाली शुभदा के लिए चिन्तित थी। उसने मसूरी कई पत्र डाले पर कोई फल नही निकला। अन्त मे हारकर उसने अपने मसूरी-निवास के कर्मचारी को पत्र लिखा। वहाँ से जवाब आया—"शुभदा पीयूषदासी के साथ मसूरी छोडकर चली गई है। मालूम नही कहाँ है।"

इससे उसकी चिन्ता और भी बढ गई, किन्तु प्रसूतिगृह मे काम धीरे-धीरे बढने लगा। कभी-कभी उसे रात को भी वहाँ रहना पडता। नगर-भर मे प्रसूतिगृह तथा शेफाली की कार्यतत्परता की प्रशसा होने लगी। राममोहन सुबह-शाम वहाँ आता और शेफाली को अधिक-से-अधिक सुविधा देने की कोशिश करता। कुछ क्लर्क, नौकर, चपरासी और रख लिये गए। साधना भी जब-तब शेफाली की भोजन-व्यवस्था के लिए वही रह जाती। शेफाली चाहती कि प्रसूतिगृह का कोई भी केस खराब न हो, कोई भी रोगी नाराज़ न जाय। वह भरसक रोगियो की सहायता मे लगी रहती। इसकी सहायिकाएँ भी निरन्तर काम मे लगी रहती।

जैसे-जैसे प्रसूतिगृह का कार्य बढ रहा था वैसे ही शेफाली की तत्परता, काम करने की कुशलता और व्यस्त रहने पर भी उसमे नम्रता आती जा रही थी। रोगी उसे देखकर सुख का अनुभव करते थे। प्रसव के लिए स्त्रियाँ मन-ही-मन प्रार्थना करती कि भगवान् डा० शेफाली की देख-रेख मे ही यह काम हो। एक दिन शाम को दूसरी डाक्टर जिसकी ड्यूटी थी, घर के किसी काम से नही आई। नर्सों ने शेफाली को खबर

दा। उसने कहा, "यदि डा० यामिनी गुप्त नही आती तो उसकी जगह मैं काम करूँगी।"

उनमें से एक ने कहा, "आप तो पूरा दिन ड्यूटी देकर अभी आई है।"

"तो क्या हुआ ? यह काम भी तो जरूरी है, चलो।"

इतना कहकर शेफाली पीछे-पीछे चल दी। रात के एक बजे तक वह काम करती रही। शेफाली का यह नियम था कि वह खाने से पहले शाम को स्नान जरूर करती। उस दिन वह न शाम का खाना ही खा सकी और न उसने स्नान ही किया। रात के एक बजे जब वह अस्पताल से लौटी तभी उसने गरम पानी से स्नान किया और थोडा-सा खाकर लेट रही। दूसरे दिन फिर सबेरे नित्य नियम से निबटकर थोडा दूध पीकर अस्पताल चली गई। सबेरे ही घूमता हुआ प्राणनाथ आ गया। नौकर ने रात की सब बाते उन्हे सुना दी।

वह बोला, "बाबूजी, बीबी अब फिर बीमार पडेगी। जो आदमी ठीक वक्त पर खाएगा नही, सोएगा नही, आराम नही करेगा, वह जीएगा कैसे ?"

"तो क्या रोज यही हाल रहता है ?" प्राणनाथ ने बरामदे को बेत से पीटते हुए पूछा।

"जी, शायद ही कोई मनहूस दिन होता होगा। और रात को भी तीन-चार बार उठकर अस्पताल जाती है। मैं तो बहुत मना करता हूँ, परन्तु वे हँसकर टाल जाती है। कहती हैं, 'मोहन, काम मे ही सुख है।' अच्छा सुख है! अभी बीमारी से उठी है। देख नही रहे, कितनी थकान चेहरे पर उभरती जा रही है!"

प्राणनाथ ने कहा, "मै पिछले दो-तीन दिनों से उनसे मिलना चाहता हूँ, पर भेंट ही नहीं होती।"

प्राणनाथ उल्टे पाँव लौट गया। जाकर उसने साधना से कहा कि शेफाली जो इस बार बीमार पडी तो किसी के किये कुछ न होगा। यह

प्रसूतिगृह तो अच्छा है। आज ही दो लेडी डाक्टर और रखनी होंगी। सुबह-शाम् तुम उन्हे घूमने ले जाया करो। इसके साथ ही उसने मोहन की बताई हुई शेफाली की दिनचर्या भी सुनाई।

साधना ने सुना तो कहने लगी, "प्राणनाथ बाबू, तुम्ही ने उन्हे इस मुसीबत मे डाला है। मै कहे देती हूँ यदि शेफाली जीजी को कुछ हो गया तो मै जिन्दा न रहूँगी।"

"तो राममोहन से कहकर दो डाक्टर और रख लो।"

"तुम भी तो ट्रस्ट के एक मेम्बर हो। तुम्ही उनसे कहो। रही सुबह-शाम घुमाने की बात, इसका जिम्मा मै लेती हूँ।"

प्राणनाथ के कहने से राममोहन ने दो और लेडी डाक्टरो से बात करके उन्हे अस्पताल मे रख लिया और शाम को जाकर यह खबर शेफाली को भी दे दी। शेफाली ने सुना तो बोली, "ऐसी क्या जरूरत थी ?"

साधना भी साथ थी। उसने कहा, "ज़रूरत हो या न हो। आपको जीजी, रात को वहाँ नही जाना है। दिन मे दो-तीन घण्टे से ज्यादा नही। हमने अस्पताल आपके प्राण लेने के लिए नही खोला है।"

शेफाली केवल मुस्कराकर रह गई। फिर बोली, "देखती हूँ तुझे मेरी सबसे ज्यादा चिन्ता है।"

"हाँ, जो भी समझो। अब मैं सुबह-शाम तुम्हे घूमने ले जाया करूँगी।"

राममोहन ने दोनों की बातें सुनी तो भीतर-ही-भीतर बहुत प्रसन्न हुआ। इसके साथ ही आग्रह करके साधना शेफाली को मोटर मे बैठाकर चल दी।

रास्ते में शेफाली बोली, "देखती हूँ, तू शुभदा का स्थान ले रही है!"

साधना ने शेफाली के गले से चिपटकर कहा, "काश ऐसा हो सकता ? न जाने तुम्हारे स्वभाव मे कैसा जादू है कि मै तो तुम्हे पाकर सब भूल गई हूँ। वे भी, और वे ही क्या जो भी एक बार तुम्हारे सम्पर्क

में आ गया, तुम्हारा हो गया ।" फिर आगे बोली, "माफ कर दो तो एक बात कहूँ ?"

"क्या ?"

"मै चाहती हूँ तुम प्राणनाथ से ब्याह कर लो । भला आदमी है। अब उसका काम भी खूब चल रहा है ।"

शेफाली एकदम बडे जोर मे हँसी, हँसती रही । साधना भी हँसती रही । शेफाली थोडी देर बाद बोली, "सोचूँगी ।"

साधना प्राणनाथ के सम्बन्ध मे बहुत-कुछ कहती रही ।

लौटकर साधना ने अपने सामने शेफाली को खाना खिलाया और चली गई । शेफाली को जब-तब शुभदा की याद आती, किन्तु उसका कुछ भी पता नही लग रहा था । उसी समय प्राणनाथ आ गया । शेफाली उस समय शाम का अखबार पढ रही थी । देखते ही सँभलकर बैठ गई । उस समय बँगले के मैदान में चाँदनी रात अपने भरपूर यौवन में छिटक रही थी । रजनीगन्धा के फूलो की महक मे सारा वातावरण महक रहा था ।

सामने की आरामकुर्सी पर बैठते हुए प्राणनाथ बोला, " 'सेम्सन डलायला' नाम की एक बहुत सुन्दर तस्वीर आई है ।"

"फिर ?"

"यह रोमाचकारी प्रेमचित्र है शेफाली देवी !"

"प्रेम ? क्या डाक्टर के लिए उसका कोई महत्त्व है ? और आग की परछाईं से तो गरमी भी नही मिलती प्राणनाथ बाबू !"

"डाक्टर भी मनुष्य है ।"

"पर वह पहले डाक्टर है ।"

उस समय वह गहरे कत्थई रग की बगलौरी साडी पहने थी। बिजली के प्रकाश मे उसका मनोहर और साँचें में ढला हुआ गोरा मुख और भी छविमान हो उठा था । शान्ति, सच्चरित्रता और भोलेपन ने उसे और भी कान्तिमान बना दिया था । पतली नाक, बड़ी-बडी आँखें,

सुता हुआ मुख, चमकता सफेद ललाट, पतले होठ, यह सब पहले भी प्राणनाथ ने देखे थे और रात मे बिजली के प्रकाश मे पहले भी वह शेफाली से मिला था; परन्तु उस समय की छवि ने तो उसे जैसे उद्-भ्रान्त कर दिया। वह भूल गया कि शेफाली सौन्दर्य-प्रतिमा के अलावा और भी कुछ है। जैसे उसका स्वप्न साकार हो उठा। वह बोला, "मनुष्य के बाद ही तो वह डाक्टर है शेफाली देवी! आपको सुनकर प्रसन्नता होगी कि अब मेरी प्रेक्टिस अच्छी चल रही है। मैने कई नये पेचीदा केस जीते है।"

उधर शेफाली ने भी देखा कि अब प्राणनाथ अपने सौन्दर्य के शिखर पर पहुँच गया है। उसके हृदय की उत्तप्त यौवनोष्मा उसके मुख पर चमक रही है। वह भीतर-ही-भीतर प्रसन्न हुई।

"अतृप्त मनुष्य बाहरी वासना तलाश करते है प्राणनाथ बाबू!"

"पर अतृप्ति ही तो प्रेम का नाम है। वासना तृप्त होती है, प्रेम नहीं। मै चाहता हूँ..."

शेफाली थोडी देर के लिए अन्तस्थ हो गई। कुछ देर बाद आँखें खोलकर उसने कहा, "हाँ, क्या कह रहे थे आप?"

प्राणनाथ का मुँह जैसे किसी ने सी दिया। थोडी देर तक वह केवल शेफाली की ओर देखता रहा।

"आइये, बाहर चाँदनी मे घूमा जाय।" इतना कहकर शेफाली बाहर चलने लगी। प्राणनाथ मूक और भूताविष्ट मनुष्य की तरह शेफाली के पीछे चलने लगा।

बँगले के बाहर मैदान मे चाँदनी बिछी हुई थी। ठण्डी-ठण्डी मीठी हवा हलके ग्रास की तरह फूलो की खुशबू लिये उन दोनो के शरीरो को थपथपा रही थी। शेफाली लॉन के बीच में जाकर खडी हो गई और आकाश मे उगे पूरे चाँद की ओर देखने लगी। प्राणनाथ उससे कुछ दूरी पर खडा था।

"कितना सुन्दर दृश्य है! हर चीज अपने समय मे ही अच्छी

लगती है। फिर भी उस चीज के अच्छा लगने के लिए मनुष्य के हृदय में वैसी भावना चाहिए। उसके अभाव में कुछ भी नही है। प्रेम की चीज देखने के लिए भीतर भी तो वैसा प्रेम होना ज़रूरी है।"

प्राणनाथ ने दोनो हाथ बांधकर जरा आगे बढते हुए उत्तर दिया, "यह तो सबमे होता है। आपमें भी उसका बृहद् अश है।"

"अर्थात् ?"

"यौवन एक सुरभि है। वह जहां तक फैलता है वहाँ तक अपने को सार्थक करता है।"

शेफाली चन्द्रमा की ओर देख रही थी। उसने मोहन को पुकारकर कुर्सियाँ बाहर डाल देने को कहा। मोहन ने कुर्सियाँ बिछा दी। वह फिर भी मूक होकर चांदनी का रसास्वादन करती रही। थोडी देर बाद उपनिषद् का एक मन्त्र उसने पढा, "न तत्र सूर्यो गच्छति न चन्द्रमाः।" वह अपने-आप धीरे-धीरे बोलती रही।

फिर बोली, "आप जानते है प्राणनाथ बाबू, मै इस बीमारी के बाद से परम आस्तिक हो गई हूँ। मुझे लगता है कि जब मनुष्य व्यक्तित्व से ऊपर उठ जाता है तब का सुख कुछ और ही होता है। हाँ, आप क्या कहना चाहते थे ? कहिए न।"

प्राणनाथ ने विश्लेषण किया कि यह नारी विचित्र है। उसने कई स्त्रियाँ देखी थी, किन्तु ऐसी मनोदशा उसने किसी की भी नही पाई थी। उसे विश्वास था कि शेफाली को भी एक दिन वह वश में कर सकेगा, पर यहाँ तो बात ही कुछ दूसरी है। न जाने किस जीवन में विचरण करती रहती है यह नारी ! उसे एक प्रकार की निराशा भी हुई। वह जितना ही शेफाली के पास आता है उतना ही उससे दूर हो जाता है। उसकी विविक्तता उसे उद्विग्न कर देती। अन्त में उसने एक वकील की चाल चली। बोला, "सुना है आप विवाह करने जा रही हैं ?"

शेफाली, जो उस समय प्रकृति के रस में विभोर हो रही थी जाग-सी पडी।

"क्या ?" उसने यह शब्द इतने ज़ोर से कहा कि प्राणनाथ चौंक पड़ा।

"मैने सुना है।"

वह हँसी और प्राणनाथ की ओर देखकर बोली, "तुमने ठीक सुना होगा प्राणनाथ !" इसके साथ ही उसने गहरी साँस ली और चुप हो गई। वह कातर दृष्टि से प्राणनाथ की ओर देखने लगी। जैसे वह विवश हो।

"मालूम होता है आपके भीतर कुछ है।"

"दुख का सागर !"

"क्या मै आपकी कोई सहायता कर सकता हूँ ?" वह शेफाली के और भी पास आ गया।

शेफाली ने अपना हाथ प्राणनाथ के हाथ मे दे दिया।

प्राणनाथ शेफाली का हाथ धीरे-धीरे सहलाने लगा। शेफाली ने एकदम हाथ छुडा लिया और खडी हो गई। दृष्टि उसकी फिर भी आकाश की ओर थी। विचार उसके फिर भी हवा में उड रहे थे। अस्थिरता, बेचैना उसकी आँखो से व्यक्त हो रही थी। वह धीरे-धीरे चल दी।

"आप जाइए प्राणनाथ बाबू, जाइए। मुझे देर हो रही है।" इतना कहकर वह अपने कमरे की ओर चल दी।

प्राणनाथ ठिठककर खडा हो गया। वह उसे देखता रहा। फिर एकदम पास आकर बोला, "मेरे कारण आपको जो कष्ट हुआ उसके लिए क्षमा चाहता हूँ।"

शेफाली ने कातर दृष्टि से उसकी ओर देखा और बाहर चले जाने का इशारा किया। प्राणनाथ धीरे-धीरे चला गया। शेफाली उसकी तरफ देखती रही, उस समय तक देखती रही जब तक वह कम्पाउण्ड से बाहर नही निकल गया।

शेफाली आकर अपने आसन पर लेट गई। तकिए से अपना मुँह

छिपा लिया और निस्तब्ध होकर पडी रही। इसी समय मोहन ने आकर पूछा, "दरवाजा बन्द कर दूँ बीबीजी ?"

"हाँ, सब दरवाजे बन्द कर दो और सो रहो।"

"आपकी तबियत एकाएक खराब हो गई ?"

"नही, मै ठीक हूँ। तुम जाओ मोहन !"

मोहन कमरे का दरवाजा भिडाकर चला गया।

'यह आग न बुझाए बुझती है न दबाए दबती है। न जाने किस घडी मे मेरा विवाह हुआ था, निष्फल व्यर्थ—बकरे के गले से लटकने वाले थैले की तरह ! क्या मै उसको तोड नही सकती जो व्यर्थ एक दिखावे की तरह हुआ है ? तोड़ दूँ और प्राणनाथ से विवाह कर लूँ ? या घुट-घुटकर मरूँ ! पर क्या यह टूट सकता है ?' उसके भीतर से आवाज आई—'हाँ, हाँ, हाँ, हाँ। तोडो, तोड दो, तोड दो।' वह भीतर की आवाज बढती जा रही था, बढती ही जा रही थी। वह एकदम उठ बैठी। बोली—'तोड दूँगी, तोड दूँगी। मै प्राणनाथ से विवाह करूँगी। मुझे कौन रोक सकता है। रोक सकता है कानून ! कानून ? कानून ?' उसने सिर पकड लिया और बैठ गई। 'कानून ! कानून नही रोक सकता। मै विवाह करूँगी। यह मेरा भ्रम है। भ्रम, भ्रम,' इसी उधेड-बुन में वह तकिए का सहारा लेकर लेट गई और सो गई।

उस दिन दोपहर को साधना के साथ वह भोजन कर रही थी कि एक तार मिला; उत्सुकता से खोलकर पढ़ते हुए शेफाली ने बताया, "शुभदा कल सुबह की गाडी से आ रही है।"

"दीदी, मुझे लगता है शुभदा चौधरी पर अनुरक्त है," साधना ने कहा।

"मै चाहती हूँ साधना, ऐसा होता, पर चौधरी कहाँ है ?"

"देख लेना। नही तो वह पीयूषदासी के साथ मसूरी से बाहर नही जाती।"

शेफाली ने कोई उत्तर नहीं दिया। दूसरे दिन स्वय साधना अपनी

गाडी में शुभदा को स्टेशन से ले आई।

शेफाली यत्न करके भी शुभदा से उस समय आकर न मिल सकी। वह एक स्त्री के प्रसव-कार्य मे सलग्न थी। शुभदा एकाध बार उसे देखने उधर गई भी, किन्तु वह उससे न मिल सकी। दोपहर के बाद शेफाली आई और शुभदा को देखते ही गले से चिपटाकर रोते-रोते बोली, "तू मुझे इतनी जल्दी भूल गई री! जानती है मै तेरे लिए कितनी व्याकुल थी।"

शुभदा ने विह्वल होकर कहा, "जिस दिन मै तुम्हे भूल जाऊँगी दीदी, उस दिन मै इस ससार में नही रहूँगी।"

इसके बाद उसने आद्यन्त चौधरी के सम्बन्ध की कथा सुनाते हुए कहा, "डा० चौधरी भागे हुए है। वे फरार थे। उन्होने कलकत्ते मे एक अग्रेज की हत्या की और भाग गए। उनका नाम भी और है।"

"क्या ?"

"रजनीकान्त मुकर्जी !"

"तूने कैसे जाना ?"

"उनके दल के लोगों ने बताया। दीदी, वे मेरे कहने से ही उस काम में गये और उन्होने एक व्यक्ति के द्वारा सन्देश देते हुए कहलवाया—'शुभदा से कहना मै फिर लौट गया हूँ कर्तव्य-पालन के लिए।'"

"तो वे पकडे गये ?"

"नही, भाग गये है, शायद बर्मा की तरफ गये है।"

"सुना है बर्मा पर तो जापानियो का अधिकार हो गया है।"

"मैं वापस लौट आई।"

"और पीयूषदासी ?"

"वह अपने एक निकट-सम्बन्धी के पास रह गई। वह बहुत दुखी है।"

"अब तेरा क्या इरादा है ?"

"कुछ नही, अब मैं उसी पथ में जाऊँगी। मेरे ही कहने से वे

गये है।"

"यदि इस युद्ध में अग्रेज हार गये तो वे शीघ्र लौटेगे।"

"शायद !"

"क्या अब आगे नही पढेगी ? तेरा परीक्षा-परिणाम आ गया है। तू प्रथम श्रेणी में बी० ए० पास हुई है।"

"नही, मैं भी उसी दिशा में जाऊँगी दीदी, केवल तुमसे आज्ञा लेने आई हूँ," शुभदा ने रुक-रुककर प्रार्थना-भरे स्वर मे कहा। फिर बोली, "बगाल में स्त्रियो का एक क्रान्तिकारी दल बना है, मै उसकी सदस्या हो गई हूँ।"

"बिना मुझसे पूछे ?" शेफाली ने दुखित स्वर में कहा।

शुभदा ने कहा, "मै जानती हूँ तुम इस नेक काम से प्रसन्न होगी, इसीलिए। यही तुम्हारी अब तक की शिक्षा है।"

शेफाली ने शुभदा को गले से लगाकर गद्गद् स्वर मे कहा, "शुभदा···" इतना कहकर उसका गला भर आया; उसकी आँखो मे आँसू छलछला उठे। सारी पुरानी स्मृतियाँ उसके भीतर जाग उठी। उसे लगा जैसे शुभदा का जाना सदा के लिए जाना है। इस भोली लडकी का मार्ग अभी कुछ भी बना नही है। न जाने क्या हो, कितना कष्ट उठाना पडे और क्रान्तिकारी मार्ग तो और भी बीहड है, और भी दुरूह है।

यहीं सब सोचकर उसने एक बार फिर कहा, "देख शुभदा, मुझे यह सब-कुछ अच्छा नही लगता। अब पीयूषदासी को उसके रहने की जगह मिल गई है। दुखी-सुखी जैसे भी हो वह रहेगी। उसमें अब तुझे कुछ भी नही करना है। वैसे हम कहाँ तक किसके सुख-दुख में हाथ बँटा सकते हैं ? सारा संसार ही तो दुखी है !"

शुभदा ने आश्चर्य में भरकर कहा, "यह तुम्हारा मेरे प्रति अगाध स्नेह ही है जो तुमसे ऐसा कहलवा रहा है। नही तो कोई भी ऐसा दुखी है जिसे देखकर तुम्हारा मन न पसीजा हो और तुमने सीमा से

बाहर जाकर उसकी मदद न की हो ? पीयूषदासी के पास रहने में भी तो तुम्हारा ही सकेत था।"

"हाँ हाँ, पर मै अपनी शुभदा को नही जाने दूँगी," शेफाली ने प्रेम-विभोर होकर उत्तर दिया।

प्राणनाथ ने सुना तो उसने भी शेफाली का ही समर्थन किया। उसने कहा, "शेफाली-जैसी बहन, माँ तुम्हे नही मिलेगी। वैसे भी मैं चाहता हूँ हम लोग इस सम्पूर्ण देश को, इसके निवासियो को एक समझे। तुम्हे मालूम है हमारा यह स्वतन्त्रता का सग्राम किसी प्रान्त-विशेष का नही है, सारे भारतवर्ष का है। इसलिए भारतवर्ष का हर नागरिक हमारा भाई-बन्धु है।"

शेफाली ने प्राणनाथ को उत्तर देते हुए कहा, "शुभदा ऐसी नही है, प्राणनाथ बाबू। मै उसे बहुत दिनो से जानती हूँ।"

शुभदा कुछ भी न बोली। वह अपने ही ध्यान मे डूबी हुई थी। उसने प्राणनाथ की तरफ तेज नजरो से देखते हुए कहा, "जाने दीजिए, यह मेरा और दीदी का काम है, आप क्यो बीच मे पडते है ?"

प्राणनाथ झेंप गया। उसने कुछ भी नही कहा, इधर शेफाली हस्पताल चली गई। शुभदा की बेचैनी बढती जा रही थी। उसे लग रहा था, उसका सारा प्रयत्न व्यर्थ जा रहा है। वह दिन-भर अपने मन में डूबी सोचती रही। रह-रहकर उसे अपनी दुर्दशा तथा बगाली युवतियों की दृढ प्रतिज्ञा का ध्यान हो आता। वह सोचती—'आखिर मेरे जीने का उद्देश्य और क्या हो सकता है ? क्या शादी कर लेना, क्या फिर एक गृहस्थी बसाकर बच्चे पैदा करना और मर जाना ? नही, नही। मै ऐसा नही करूँगी। मै ब्याह जैसे झझट मे नही पडूँगी। मै अविनाशचन्द्र दास या प्राणनाथ या गिरधर किसी से भी शादी नही कर सकती। यह फिजूल है। यह मेरा रास्ता नही है। मेरा रास्ता तो निश्चित है, साफ है। मै उसी पर चलूँगी। जिन विश्वासो ने मेरे देश की जडो को हिला दिया है, मनुष्य को मनुष्य नही रहने दिया, उन्हे पशु की तरह, निरीह

प्राणी की तरह भूखे मार डाला है, मैं वह सब अब नही रहने दूँगी। बूँद-बूँद करके तालाब भरता है। एक-एक प्रयत्न मनुष्य के जीवन और उसके इतिहास को बदल देता है। मै यदि इतिहास नही बदल सकती तो खुद अपनी आहुति तो दे ही सकती हूँ, एक नया रास्ता तो बना ही सकती हूँ। मुझे जाना होगा। मै रुक नही सकती। मेरी बहन का भी यही आदेश है। बहन ने सारा जीवन रोगियो की सेवा में बिताया है, उसके तप-त्याग का उदाहरण मेरे सामने है। वे प्रेमातिरेक में भरकर रास्ता भूलकर मुझे रोक रही है, पर मुझे रुकना नही है; मुझे जाना है। मुझे क्रान्तिकारी दल के द्वारा इस सम्पूर्ण देश को मुक्त कराना है। मुझे देश की दरिद्रता को दूर करना है। मै वही करूँगी। मैं जाऊँगी।'

शाम के समय शेफाली ने आकर शुभदा को अनमना पाया। खाना खाते समय उसने पूछा, "तू उदास है शुभदा ! देख तेरे कालिज के प्रिन्सिपल का एक पत्र आया है। अरे, मैं तो भूल ही गई थी। ले, उसने तुझे बधाई भी भेजी है, कल बुलाया भी है। जा, कल जाकर प्रिन्सिपल से मिल ले। एम० ए० मे जो विषय लेने हो उनसे फैसला कर ले।" यह कहकर उसने प्रिन्सिपल का वह पत्र उसके सामने रख दिया।

शुभदा ने वह पत्र नही उठाया। दूर स ही उसने पढा और कहने लगी, "दीदी, आखिर हमारे जीवन का क्या उद्देश्य है ? क्या ब्याह कर लेना, बच्चे पैदा करना और एक दिन मर जाना ?"

"जो सब करते है वही तो हमको भी करना होगा।"

"पर तुमने तो नही किया।"

शेफाली थोडी देर के लिए चकित रह गई। फिर कहने लगी, "सबके लिए एक ही रास्ता नही होता शुभदा !"

"पर मै तुमसे अलग कैसे जा सकती हूँ ?"

"पर मै कब कहती हूँ, तेरा रास्ता अलग है। यह तो पढ़ने की

उमर है। पढ-लिखकर जैसा चाहे करना। कोई रोकता थोडे ही है !" शेफाली ने स्नेह-भरे नेत्रो से शुभदा की तरफ देखकर कहा।

"पर पढने-लिखने का उद्देश्य यही तो है कि आदमी मे भला-बुरा जानने की बुद्धि हो जाय। दीदी, मै तुमसे सच कहती हूँ कि मै जिस दल मे शामिल होने जा रही हूँ वह मेरे उद्देश्य के सबसे अधिक निकट है।"

"क्या ?"

"क्रान्तिकारी दल के प्रयत्नो के द्वारा देश को स्वतन्त्र करना।"

"पागलपन है शुभदा, क्या दो-चार अंग्रेजो की हत्या से देश स्वतन्त्र हो सकता है ? इससे तो गाधीजी का मार्ग ही भला है। आज सारा देश उनकी नीति का अनुयायी है। उनका प्रभाव भी बढता जा रहा है। सरकार भी सशक होकर उधर देख रही है। इतने पर भी कोई उनसे द्वेष नही करता। तुझे यदि काम ही करना है तो इधर काम कर। मै कुछ भी नही कहूँगी। मै मानती हूँ स्त्रियो का क्षेत्र भी उतना ही विशाल है जितना पुरुषो का। आज भी अनगिनत स्त्रियाँ देश का काम कर रही है, जेल जा रही है। तो क्या तू समझती है उनका काम व्यर्थ है ? मै नही समझती बगाल की स्त्रियो का ऐसा कौनसा दल है जो अब काम करके सफलता पाने की आशा करता है। और फिर जब पुरुष सफल नही हुए तो स्त्रियाँ कैसे सफल हो सकती है ? मैने तेरी बातो पर खूब गौर किया है। मेरे विचार में तेरा यह प्रयत्न एकदम बिना विवेक का है। डा० चौधरी ने बहुत मूर्खता की कि वे एक अंग्रेज की हत्या करके बर्मा भाग गये। तू सोच उनके इस काम से किसको लाभ हुआ। कई-एक युवक इस एक अंग्रेज के बदले फाँसी पर लटका दिए जायँगे; और कुछ नही होगा।"

शुभदा ने वैसे ही उग्र होकर तर्क किया, "तो तुम समझती हो कि एक क्रान्तिकारी देशभक्ति मे किसी से कम है। क्या यह उसका देशभक्तिपूर्ण साहस पूजा के योग्य नही है कि वह अपने देश के लिए

आत्मदान करता है ?"

"साहस तो अवश्य पूजा के योग्य है, किन्तु यह साहस ठीक दिशा में नही है। देश के करोडो व्यक्तियो में दस-पाँच के क्रान्तिकारी होने से कुछ भी होना-हवाना नही है। यही सोचकर अरविन्द घोष जैसे क्रान्तिकारी तपस्वी हो गये। यही मार्ग डा० चौधरी ने अपनाया था, परन्तु तूने उन्हे उकसाकर फिर उल्टे मार्ग पर डाल दिया। मेरा तो अपना विचार है अरविन्द-जैसे तपस्वी ने भी हिंसा के इस मार्ग को देश के लिए कल्याणकारी नही समझा।"

शुभदा को लगा जैसे सचमुच पचास-सौ अंग्रेजो की हत्या से कुछ नही होगा। दीदी की बाते निस्सार नही है। उसे अपने सारे तर्क व्यर्थ लगे। वह बहुत देर तक सोचती रही। इसी समय शेफाली ने फिर कहा—

"तू सोच ले। फिर भी यदि तुझे मेरी बातें सारहीन और अपनी महत्त्वपूर्ण लगें तो मै तुझे नही रोकूँगी !"

इतना कहकर शेफाली बाहर से आये किसी व्यक्ति से मिलने चली गई। लगभग पन्द्रह मिनट बाद जब लौटकर आई तो देखा शुभदा वैसे ही ठोडी पर हाथ रखे बैठी है। उसे शेफाली के आने का भी ज्ञान न हुआ। शेफाली चुपचाप उल्टे पाँव लौट गई। उसने मुनासिब समझा कि शुभदा को पूरी तरह सोचने का मौका दिया जाय। वह जाकर अपने आसन पर बैठकर उस दिन का समाचारपत्र पढने लगी।

शेफाली प्रत्येक काम को अपने ढंग से सोचती, अपने ढग से करती। यदि सब लोग अपने-अपने ढग से सेवा करने का व्रत ले लें तो देश का सुधार और उद्धार जल्दी हो सकता है।

उन दिनो अग्रेज-सरकार की तरफ से भारत को स्वतन्त्रता देने के जो प्रयत्न हो रहे थे और हिन्दू-मुसलमान जो चील-गिद्ध की तरह अपनी माँग की लाश पर लड़ रहे थे उसके भीतर भी उसे लग रहा था कि यदि देश को पूरी तरह मानसिक रूप में स्वस्थ बनाये बिना

स्वराज्य मिल गया तो भी ये लोग आपस मे ही लड मरेगे।

स्त्रियों के सम्बन्ध में उसका विश्वास था कि विवाह स्त्री के लिए आवश्यक नही है। कोई चाहे तो बिना विवाह के भी रह सकती है। वह अपने लिए कोई ऐसा काम चुन ले, जिसमे उसकी सारी मानसिक शक्तियाँ लिप्त हो जायँ, जिसमे उसे अवरुद्ध सेक्स से उत्पन्न मानसिक विशृंखलता का शिकार न होना पडे। उसे ऐसा न लगे कि यह काम जबर्दस्ती उसके सिर पर लादा गया एक बोझ है। रोगियो की सेवा उसके जीवन का परम लक्ष्य था, इसी मे अपने को घुला-मिला देना वह उचित समझती थी। उसने बातो-ही-बातो मे एक दिन प्राणनाथ को बताया था कि अब सेक्स का कोई अश उसकी चेतना को उत्तेजित नही करता। जब इस प्रकार की घटना घटनी है तब विभिन्न रोगियो के चित्र, उनकी पीडा, उनकी चीख-पुकार उसके सामने आ जाते है। मनुष्य का सबसे बडा कौशल उसके स्वस्थ रहने में है। जब वह रोगी होकर विवश हो जाता है तो समझना चाहिए कि उसने जीवन-जैसी निर्मल वस्तु के साथ अत्याचार किया है।

हस्पताल तेजी से चल रहा था। सभी अमीर-गरीब घरो की स्त्रियाँ उससे लाभ उठाती थी। बनिस्वत पहले के अब उसका काम भी बढ गया था। बँगला प्रसूतिगृह के पास होने के कारण सुबह, शाम, रात, सभी समय उसे रोगियो को देखने जाना पडता था। यही सब सोचकर उसने अपनी दो सहायक लेडी डाक्टरो की ड्यूटी लगा दी थी। इतने पर भी काम इतना अधिक था कि दो और लेडी डाक्टर रखने की आवश्यकता अनुभव की जा रही थी। राममोहन ने उसके सम्बन्ध मे पत्रो मे भी विज्ञापन दे दिया था। जब तक वैसा प्रबन्ध नही हो रहा था तब तक के लिए और भयकर केस की हालत मे उसका वहाँ होना जरूरी था।

शुभदा ने अन्त में प्रयाग जाकर आगे पढने का निश्चय किया। शेफाली ने सहर्ष अनुमति दे दी।

इधर एक रात को हस्पताल से लौटकर शेफाली अपने कमरे में आराम कर रही थी कि नौकर ने आकर सूचना दी—

"सेठ रामकुमार आपसे मिलने आए है।" शेफाली सेठ रामकुमार का नाम सुनकर चौंकी। पहले उसकी इच्छा हुई कि कह दे—पूछो क्या काम है? पर न जाने क्यों इतनी अशिष्टता दिखाने का उसका मन न हुआ। वह स्वभाव से दयालु थी और शत्रु पर भी उसका हृदय अवसर आने पर कोमलता से भर जाता था। कटुता, कठोरता, अशिष्टता उसके स्वभाव में नही थे। उसके सामने उस समय की सारी घटनाएँ प्रत्यक्ष हो गईं। उसने एकदम कह दिया, "बुला लो।" इसके साथ ही वह मिलने वाले कमरे में आ बैठी।

रामकुमार चुपचाप आकर हाथ जोडकर बैठ गया और बोला, "मैं अपनी मूर्खता के लिए क्षमा माँगने आया हूँ शेफाली देवी!"

"मेरे लिए इतना ही बहुत है कि आपको यह अनुचित लगा। वैसे मैं तो एक साधारण स्त्री हूँ—निर्बल, जिस पर कोई भी स्वतन्त्र होकर अत्याचार कर सकता है।"

"नही, मुझे घोर दुख है मैंने आपके चरित्र को नही जाना। आज मैं वही अपराध क्षमा कराने आया हूँ।" इसके साथ ही उसने शेफाली की फीस का चैक उसके सामने रख दिया और चुपचाप हाथ जोडकर कमरे से बाहर निकल गया।

शेफाली जब तक मना करे तब तक वह बाहर निकलकर मोटर में भी बैठ गया था। मनुष्य के चरित्र का यह नया रूप था, जिसमें उसके पाप वेदना की आग में जलकर शुद्ध हो जाते हैं। कुछ मनुष्य स्वभावतः अच्छे होते हैं और बाहरी विकारों के कारण कभी-कभी उनमें दुर्बलता आ जाती है। वह आघात पाकर अपनी पुरानी स्थिति को पहुँच जाते हैं। रामकुमार उन्हीं में था। कुछ स्वभावगत सकोच, निर्बलता, तृप्ति के स्वप्नों के प्रति साहस का अभाव और प्रतिक्रिया में पूर्व-स्थिति का ग्रहण—इन्ही सब बातों ने रामकुमार को शेफाली से क्षमा माँगने को

विवश कर दिया। अन्यथा वह भी डटकर अपनी इच्छा के विरुद्ध प्रतिरोध पाकर भडक उठता और नये हथकण्डो से काम लेकर शेफाली को तग करता।

शेफाली को ऐसे अनुभव भी हुए जबकि उसे गुण्डो से जान छुडाना भारी हो गया था। वे अनुभव उसके कालेज के समय के थे। वही सब सोचती वह अपने बरामदे मे खडी रही। उसके बाद वह लौटकर अपने कमरे मे आ बैठी। उस समय उसने देखा कि प्राणनाथ सामने खडा है—नमस्कार करने की मुद्रा मे चुपचाप। शेफाली उठी और हाथ पकडकर उसने प्राणनाथ को अपने पास ही काउच पर बिठा लिया।

दोनो बहुत देर तक चुप बैठ रहे। अन्त में शेफाली ने निस्तब्धता भग करते हुए कहा—

"मैने निश्चय कर लिया है प्राणनाथ बाबू!" इसके साथ ही उसने प्राणनाथ पर काम-कला से अनभिज्ञ एक नारी की तरह कटाक्ष किया और मुस्करा दी।

"कृतार्थ हुआ शेफाली! निश्चय ही तुम्हारे बाहरी सौन्दर्य से तुम्हारा हृदय अधिक महान् और सुन्दर है।"

"जितना जल्दी हो सके।"

"मुझे क्रान्तिकारी के केस के लिए बनारस जाना है—आज से आठ दिन बाद। मै चाहता हूँ उससे पूर्व।"

"मुझे कोई आपत्ति नही है। मै तो तुम्हारी ही हूँ प्राणनाथ!" प्राणनाथ गद्‌गद् हो उठा। न जाने कब शुभदा ने प्रवेश करके उन्हे चौका दिया।

वह बोली, "जीजी, मैने प्रयाग-विश्वविद्यालय मे एडमीशन ले लिया है। चिट्ठी आ गई है। ओह, प्राणनाथ बाबू, आप भी है।"

"तो तुम कब जा रही हो?" प्राणनाथ ने पूछा।

"जितनी जल्दी हो सके; पन्द्रह दिन है।"

"मै भी अगले सप्ताह बनारस जा रहा हूँ। तब तक यह काम भी

हो जायगा।"

"कौनसा ?"

दोनो मुस्करा उठे। शुभदा समझ गई। उसने प्रसन्नता प्रकट की।

दूसरे दिन विवाह के निमन्त्रण-पत्र छपे। तैयारियाँ होने लगी। राममोहन और साधना ने सुना तो वे बहुत प्रसन्न हुए। साधना ने स्वय तैयारी की। राममोहन ने अपनी ओर से एक पार्टी देने का निश्चय किया। साधना ने गहने बनवाने, साडी खरीदने आदि का काम शुरू कर दिया, यद्यपि शेफाली की इच्छा थी कि विवाह बिलकुल सादगी से हो।

शुभदा के तो जैसे पर लग गये हो, खुशी के मारे! वह दिन-भर फूली-फूली सब प्रबन्ध करती। जिसने सुना वही बधाई देने और सेवा पूछने आया। रामकुमार ने विवाह मे एक मोटर देने की सूचना दी। तैयारियाँ होने लगी।

शेफाली को रह-रहकर हीरादेई का खयाल आता। न जाने वह कहाँ होगी, कैसी होगी ? गिरधर उसका ध्यान भी रखता होगा ? उधर वह नियमानुसार हस्पताल जाती और रोगियो की सेवा-शुश्रूषा में लगी रहती। उसे हस्पताल से एक मिनट का भी अवकाश न मिलता। शेफाली ने अपने खर्च से हस्पताल के साधारण कर्मचारियो के कपडे बनवाये, पर वह स्वयं उन्ही खादी के कपड़ों में थी। जब साधना ने बाजार से लाकर एक-से-एक बढ़िया साडियाँ, मोतियो-जडे हार और जडाऊ गहने उसके सामने पसन्द करने के लिए रखे तब उसने उन सबको छुआ तक नही और बोली—

"तू क्या समझती है, मैं पन्द्रह साल की लड़की हूँ ? मै इनमें से एक भी चीज न लूँगी। मुझे सिर्फ खादी की साडी चाहिए, गहना बिलकुल नही।"

"यह नही हो सकता जीजी !"

"जो हो सकता है मैं जानती हूँ साधना; ले जाओ इन सबको।"

दूसरे दिन आठ बजे प्रात काल विवाह होने जा रहा था। बँगले

हुआ। उसकी इच्छा हुई वह जाकर शेफाली का आलिंगन कर ले; उसे अपने भुजपाश में बाँधकर शेफाली के सौन्दर्य से पागल बन जाने वाली अपनी चिर-अभिलाषाओं को चुम्बन द्वारा शान्त करे; और न हो तो इसी विवाह-मण्डप में बड़ी शान के साथ नये सिरे से भाँवरें डाल ले। उसे विश्वास था कि शेफाली उसकी है, अब उसे उससे कोई नहीं छीन सकता—वह शेफाली, जिसके रूप-सौन्दर्य, शील-स्वभाव ने उसे पागल बना दिया है। आज वह रंक को राज्य मिलने वाले मनुष्य की तरह है। इसी तरह की और बहुत सी बातें उसके दिमाग में आ रही थीं। वह आगे बढ़ा और चाहता ही था कि वह शेफाली का हाथ पकड़ ले, उससे एक बार अपने अपराधों की क्षमा माँगे, उसके चरणों में सिर धर दे कि शेफाली एकदम दूर हट गई।

"मैं वह विवाह स्वीकार नहीं करती।"

राममोहन को धक्का-सा लगा। वह चौंक उठा। बोला वह एकदम कुछ भी नहीं। पर वह सोच न सका क्या ऐसा भी हो सकता है? विवाह एक बार होता है। क्या भाँवरें पलट सकती हैं? उसने हृदय का साहस बटोरकर कहा—

"आप कानून से मेरी पत्नी हैं शेफाली! कानून आपको दूसरा विवाह करने की आज्ञा नहीं दे सकता। मैं आपको वह सब-कुछ दूँगा जो आप चाहती हैं। साधना आपकी बहन होकर, दासी बनकर रहेगी। वह आपके खिलाफ नहीं जा सकती। मैं ··मैं आपका हूँ, सदा आपका रहूँगा।"

इतना कहकर वह जैसे उसके चरणों में झुकने लगा। शेफाली कठोर से कठोरतर होती गई। उसने कहा—

"मैं यह सब-कुछ नहीं सुनना चाहती। आप जाइए। जाइए आप!"

शेफाली का उत्तर सुनकर राममोहन थोड़ी देर के लिए स्तब्ध-विमूढ़ रह गया। वह सोच नहीं पाया क्या उत्तर दे, क्या कहे। 'क्या वह अपना अधिकार, जो बहुत प्राचीन काल से अनजाने में ही पुराने समाज-

शास्त्रियो ने उसे दिया है, त्याग दे ? नही, यह नही हो सकता। प्राण-नाथ से शेफाली विवाह नही कर सकती । वह कानून की शरण लेकर इस विवाह को रोक सकता है। वह प्राणनाथ के सामने सारी स्थिति खोलकर रख देगा। प्राणनाथ उसका मित्र है, उसे भी यह स्वीकार न होगा कि वह ब्याही हुई एक स्त्री से विवाह करे। यह सारा दोष शेफाली का है। इसे सब-कुछ ज्ञात था, फिर भी इसने विवाह की स्वीकृति दे दी। ...'

ओह, कितना बडा अनर्थ होने जा रहा था ! क्या कभी ऐसा हुआ है कि एक विवाहिता नारी पति के रहते दूसरे को पति-रूप में वरण करे ?

फिर उसे ध्यान आया—'इसमें उसका क्या दोष है। हमारे परिवार वालो ने—मेरे पिता ने ही—इसके साथ कौन नेकी की है, जो हम लोग विवाहिता पत्नी को केवल प्रतिष्ठा के डर से छोड आये। कभी सुध भी न ली। ओह, मैं कितना पतित हूँ। मैंने पिता के मरने के बाद कौनसा भला काम किया, एक और लडकी से विवाह कर लिया और इसे भुला दिया। आज जब यह सब तरह से योग्य है तो मै दावा करता हूँ। कितना गलत है मेरा यह दावा ! तो क्या यह विवाह होने दूँ ? कितनी भोली है यह शेफाली ! कितनी सच्चरित्र, आज तक इसने अपना पल्ला कही भीगने नही दिया। नही, मै ही अत्याचार करने जा रहा हूँ। यह मेरा अत्याचार है। मेरी पत्नी है, फिर मुझे क्या अधि-कार है कि मै उसके इस काम में विघ्न बनूँ। तो ··तो क्या मैं···इतनी सुन्दर, सुशील स्त्री को हाथ से जाने दूँ···जबकि मेरे ज़रा से प्रयत्न से ही यह मुझे मिल सकती है ! साधना इसके सामने क्या है ? नही, यह नही हो सकता।'

वह एकदम नरम पड गया। फिर आगे बढा। उसने कहा, "सुनिए शेफाली, मै मानता हूँ मेरे माता-पिता का दोष है, पर इसमें मेरा क्या दोष था ? मैं क्षमा चाहता हूँ; क्षमा कर दो। यह सब वैभव-सम्पत्ति तुम्हारी है, तुम्हारे चरणो पर है। तुम्हे कोई कष्ट न होगा। मै लिखे

देता हूँ ; मुझसे लिखा लो ।"

शेफाली के सामने उस समय का सारा दृश्य घूम गया। उसके विवाह में किस तरह पिता ने झूठ-सच बोलकर दस हज़ार रुपया इन लोगो को देने के लिए इकट्ठा किया। किस तरह इसी बीच में उसके पिता को पुलिस वाले पकडकर ले गए और लोगो के रोते-धोते रहने पर भी ये निर्दयी बराती विवाह के बाद बरात लौटा लाये। और इसके बाद इनमें से किसी ने भी उसकी सुध न ली। और यह महाशय, जो आज उस पर दावा करने चले हैं, एक और लडकी से ब्याह करके निश्चिन्त हो गए। नही, यह नही हो सकता। वह फिर इसके घर नहीं बैठ सकती, मै इसके साथ नही जा सकती।...

थोडी देर तक वह चुपचाप खड़ा रहा फिर बोला, "कहिए तो क्या यह आपका अन्तिम फैसला है ?"

"हाँ, इसमे कुछ भी फेर-बदल नही हो सकता।"

"पर तुम कानून की दृष्टि से प्राणनाथ से विवाह नही कर सकती।"

वह चुप रही।

"तो मेरे साथ रहना तुम्हे स्वीकार नही है ?"

उसने एक बार फिर दृढ़ता से उत्तर दिया, "नही, तुम्हारे पत्नी है।"

"वह तुम्हारी दासी होगी।"

"मैं किसी को दासी बनाना नही चाहती। तुम जाओ राममोहन, जाओ, मेरा मार्ग निश्चित है।"

राममोहन घूरता हुआ चला गया, जैसे वह बदला लेने की भावना से भरा हुआ हो। शेफाली ने सुना, मोटर का दरवाजा खट से बन्द हो गया। वह अपने कमरे में आकर आसन पर गिर गई; तकिए में मुँह छिपा लिया और सोचने लगी—'नारी क्या मनुष्य की तृप्ति के लिए ही है ? क्या उसका अपना कोई अस्तित्व नही है ? मैंने आज जाना पूँजी-वादी मनुष्य, चाहे जितना भी परोपकारी बने, दयालु बने; पर अपना

स्वार्थ टकराने पर अपना रूप भूल जाता है; राक्षसी वृत्तियाँ उसे दबोच लेती है। यह राममोहन प्रसूतिगृह का सचालक, दानी, अपने स्वार्थ के आघात की एक चोट भी नही सह सका। शुभदा ठीक कहती है—पूँजीवादी पाशविकता से मुक्त नही हो सकता। ओह मेरा कितना पराभव है!'

रात बीत रही थी, घडी टिक्-टिक् करके आगे बढ रही थी। बारह, एक, दो, तीन बज गए। शेफाली अपने निश्चय पर मजबूत होती जा रही थी, जैसे हर घडी और आने-जाने वाली हर साँस उसे एक निश्चित दृष्टि-बिन्दु की ओर ले जा रही हो।

वह उठी और शुभदा के कमरे में गई। शुभदा उस समय नीद में लिपटी सो रही थी। शायद वह बहन की शादी का स्वप्न देख रही थी।

"शुभदा, शुभदा, शुभदा, उठ!"

शुभदा ने करवट बदली, और फिर सोने जा रही थी कि आँखें खोलकर उसने देखा सामने चिन्ताग्रस्त जीजी खडी है। वह चैतन्य हो गई।

"कहिए?"

"हमको इसी समय चलना होगा।"

हैरानी, विस्मय, कातरता, दैन्य, मानो सभी उसके हृदय में एक साथ भर गए। वह पूछ बैठी, "कहाँ?"

"उठ, मै यहाँ नही रह सकती। उठ!" और इसके साथ ही राममोहन के साथ बीती सारी घटना उसने शुभदा को सुना दी।

शुभदा ने सुना तो कुछ देर के लिए चुप हो गई और चुपचाप उठकर खडी हो गई।

"चलो जीजी, मै तैयार हूँ।"

दोनो ने एक-एक अटैची में आवश्यक सामान रखा और बाहर निकल पडी—पीछे के दरवाजे से।

उन्होने देखा रसोईदारिन तथा अन्य नौकर अपनी-अपनी कोठरियों

के आगे सो रहे थे। मोहन पण्डाल मे सो रहा था, इस खयाल से कि कही कोई कुछ उठा न ले जाय। आस-पास कभी-कभी कुत्तो के भौकने की आवाज़ सुनाई दे रही थी। उन्हे हस्पताल के सामने से होकर ही गुजरना था। वहाँ बाहर लान में देखा कि अधनंगी नौ मास का पेट लिये एक स्त्री पड़ी है; रह-रहकर कराह उठती है, फिर सो जाती है।

शेफाली ने उसे देखा तो स्वभाववश बोली, "कोई स्त्री प्रसूतिगृह में दाखिल होने आई है, शायद बहुत रात होने के कारण ··"

"होगा कोई, चलिए।"

पास से निकलने पर देखा कि हीरादेई है; सो रही है।

"हीरादेई ?"

"हाँ !"

"चलो, चलो जीजी ! फिर गाडी नही मिलेगी।"

शेफाली ने एक नज़र हीरादेई पर डाली और दुख की साँस लेकर दोनो आगे चल दी।

उन्हे लगा जैसे इस प्रसूतिगृह से एक तरह की बदबू उठ रही थी, उसकी ऊँची भव्य आलीशान इमारत की काली दीवारो में प्रकाश के अक्षर लिखे दिखाई दे रहे थे—'मनुष्य को बदलो !' लैम्प की रोशनी मे बीच-बीच में कही अन्धकार और कही प्रकाश में वे दोनों आशा-निराशा के दोनो कदमो से डामर की सडक पार करती जा रही थी—दूर, बहुत दूर, किसी नये लक्ष्य को पाने के लिए, किसी नये मोड़ की तलाश में, जहाँ यह सब-कुछ न हो। समय के पंखो पर जहाँ विवेक नई जिन्दगी लिये उड रहा हो। वे जा रही थी अपने चारों कदमों से रूढ़ियों को कुचलती, पुराना छोडती नया नापतीं—हर नये मोड़ पर !

दूसरे दिन सबेरे ही मोटर-ताँगो से नागरिको का दल आ रहा था। प्राणनाथ अपने कुछ मित्रो के साथ एक मोटर मे आ गया। साधना की मोटर धडधडाती पोर्टिको में आकर रुकी। पण्डित सामग्री लेकर आये और विवाह-मण्डप मे रेखाएँ खीचने लगे। सारे वातावरण में उत्साह-उमग और उल्लास भर रहा था। सब लोग शेफाली को ढूँढ रहे थे—डाक्टर शेफाली और शुभदा के लिए घर, दीवार, कोने, कमरे, सभी छान डाले गए। सारा वातावरण शेफाली के नाम की आवाज से गूँज उठा। इसी समय पुलिस को लेकर आता राममोहन दिखाई दिया। परन्तु वहाँ शेफाली कही नही दिखाई दी, न उसकी छाया शुभदा। कई दिनो तक कमरे की दीवारो से गूँज उठती रही—"शेफाली, शेफाली! डाक्टर शेफाली!"

× × ×

कुछ ही दिनो बाद 'इलस्ट्रेटेड वीकली' के पन्ने उलटते हुए राममोहन ने एक विवाहित चित्र देखा, जिसमें नीचे लिखा था—

'बनारस में विवाहित डा० शेफाली और बैरिस्टर प्राणनाथ'।

उसके कुछ दिनो बाद ही प्रसूतिगृह का नाम लोगो ने पढ़ा—

'शेफाली-प्राणनाथ प्रसूतिगृह'।